मानव संस्कार ग्रन्थमाला- पंद्रहवाँ पुष्प

ईश्वर-उपासना व ध्यान

योग ही मुक्ति का द्वार है

ध्यान एवं प्राण साधना रहस्य

मदन अनेजा

जप, प्रार्थना, ध्यान, व अध्यात्म में सफलता के लिए पढ़ें

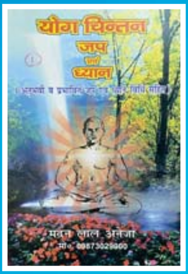

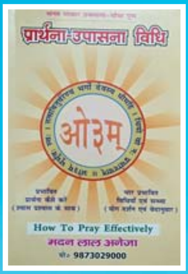

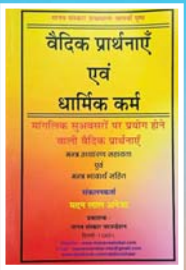

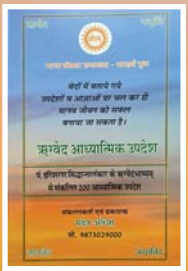

सभी पुस्तकें Google Drive पर निःशुल्क डाउनलोड की जा सकती हैं।

https://drive.google.com/drive/folders/1HkVcnkoqoUY-2DWxn_dY3xTEiCibzxol

यम और नियम का जीवन में पालन

और

ज्ञानपूर्वक उपासना

द्वारा ही ईश्वर अपनी उपस्थिति की

अनुभूति

साधक को उसके

हृदय प्रदेश में कराता है।

– मदन अनेजा

अग्रिम सूचना

भारतीय कापी राइट एक्ट के अन्तर्गत इस पुस्तक की सामग्री का अधिकार लेखक के पास सुरक्षित है। कोई भी सज्जन इस पुस्तक का नाम, टाइटल-डिजाइन, अन्दर की सामग्री आंशिक या पूर्ण रूप से तोड़-मरोड़कर एवं किसी भी भाषा में छापने व प्रकाशित करने का साहस न करे, अन्यथा कानूनी तौर पर हर्जे-खर्चे व हानि के साथ वह जिम्मेदार स्वयं होगा।

किसी भी प्रकार के वाद-विवाद का न्याय क्षेत्र दिल्ली ही रहेगा।

ADVANCE NOTICE

All rights reserved. No part of this book be reproduced in any manner whatsoever or stored in a retrieval system or translated in any language in orignal or with modification, otherwise the concerned person or institution will be responsible for loss and damages.

The jurisdiction of all disputes will be Delhi.

प्रथम संस्करण: अप्रैल 2025

पुस्तक का मूल्य :

ज्ञान दान

पुस्तक को 5 धर्म प्रमियों/युवाओं को पढ़ने के लिए दें और इसके मूल्य से ऋण मुक्त हो जायें।

प्रकाशक :

मदन लाल अनेजा

मानव संस्कार फाउन्डेशन
4 ए नया गोविन्दपुरा,
राम मन्दिर गली,
दिल्ली-110051,
मो0- 9873029000

समर्पण
(DEDICATION)

(15.06.1955- 27.04.2023)

धर्म पत्नी श्रीमती स्वराज अनेजा जी

की

पुण्य स्मृति में सादर समर्पित

- मदन अनेजा

विषयानुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ सं.
	शीर्षक	
	भूमिका	
	भाग–1	
1.	प्रभु की वाणी –दिव्य ज्ञान वेद (उपासना सम्बन्धित आध्यात्मिक उपदेश)	1 – 5
2.	ईश्वर निराकार है	6
	(क) वैदिक मत	6
	(ख) पौराणिक मत	7
	(ग) संत मत	8
	(घ) विद्वानों का मत	9–10
	भाग–2	
3.	जीवन का लक्ष्य	11–12
4.	ईश्वर की उपासना क्यों करें	13
5.	ईश्वर एक सर्वोपरि शक्ति	13–15
6.	ईश्वर उपासना के लाभ	15–16
7.	ईश्वर उपासना (वैदिक विधि से) न करने की हानियाँ	16
8.	उपासना में बार–बार ईश्वर धन्यवाद करने का महत्व	17
	भाग–3	
9.	वैदिक उपासना का महत्व	18
10.	उपासना में उन्नति कैसे करें	19
11.	महत्वपूर्ण आध्यात्मिक विषयों का शुद्ध ज्ञान	20–26
12.	शरीर इन्द्रियाँ व उनका उद्देश्य	27–40

13. सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण की सरल व्याख्या 41
14. अन्तःकरण की सरल व्याख्या 42-47
15. बुद्धि को सुबुद्धि बनाने के वैदिक उपाय 47-48
16. कर्म विज्ञान सम्बन्धित सामान्य ज्ञान 49-65
17. अष्टांग योग की (सूक्ष्म में) सरल व्याख्या व श्वसन क्रियायें 66-94
18. मन की 3 शक्तियाँ/ विशेषतायें व संयम में रखने के उपाय 94-96
19. अज्ञानता सबसे बड़ा अभिशाप 97
20. कर्मफल व्यवस्था का वैदिक स्वरूप 98-117
21. जन्म सिद्धान्त एवं 84 लाख योनियों का सत्य 117-118

भाग-4

22. आदर्श दिनचर्या का एक प्रारूप 119
23. पुण्य-पाप कर्मों का फल कब मिलता है 119-121
24. ईश्वर एवं प्रकृति की उपासना (अध्यात्म व स्वास्थ्य की दृष्टि से) 122-127
25. हठयोग की क्रियायें (शरीर व प्राणों को बलिष्ठ बनाने हेतु) 128-140
26. आध्यात्मिक उन्नति में शारीरिक शुद्धि का महत्व 141
27. शारीरिक शुद्धि के उपाय 141-148
28. वर्तमान में प्रार्थना का प्रचलित स्वरूप 148-150

भाग-5

29. मंत्र जप विज्ञान 151-163
30. मंत्र जप सम्बन्धित कुछ मान्यतायें एवं उनकी सत्यता 164
31. प्राण साधना द्वारा मंत्र जप 165
32. जप व ध्यान में प्राण साधना का क्रियान्वयन (अभ्यास) 168-171

33. जप व ध्यान में मंत्र के अर्थ की भावना का मानसिक चिंतन 172–173
34. ध्यान व जप करने वाले साधकों की तीन श्रेणियाँ 174–175

भाग–6

35. जप, ध्यान व सन्ध्या की तैयारी 175–177
36. जप व ध्यान मुद्रायें 178
37. जप व ध्यान में प्रयोग होने वाले संकल्प 179–181
38. वैदिक मन्त्रों द्वारा भक्ति 182–183
39. ओ३म् जप (श्वास–प्रश्वास द्वारा) 184–185
40. ओ३म् जप (प्राण साधना द्वारा) 186–187
41. ओ३म् जप व ईश्वरीय गुणों का चिंतन (व्याप्य–व्यापक सम्बन्ध दृढ़ करने के लिए) 187–189
42. ओ३म् जप के साथ ईश्वरीय गुणों का चिंतन (सामान्य श्वास–प्रश्वास द्वारा) प्रथम विधि 190–196
43. ओ३म् जप व ईश्वर के एक गुण का मानसिक उच्चारण (स्तम्भवृत्ति प्राणायाम द्वारा) द्वितीय विधि 197
44. ओ३म जप (स्तम्भवृत्ति प्राणायाम द्वारा) (तृतीय विधि) 200
45. ओ३म् जप (बाह्य कुम्भक की स्थिति में) (चतुर्थ विधि) 201
46. ओ३म् जप (आन्तरिक कुम्भक की स्थिति में) (पांचवी विधि) 202–203
47. गायत्री मंत्र जप (विधि –1) 204–206
48. गायत्री मंत्र जप (विधि –2) 207
49. गायत्री मंत्र जप (विधि –3) 208–210
50. प्रभु के धारणीय गुणों का चिंतन व जप 210–211
51. ओ३म् न्यायकारी जप की विधि 212
52. प्राणायाम मंत्र जप विधि 214
53. प्राणायाम मंत्र जप विधि (भावार्थ के साथ) 216–219
54. वेद मंत्रों द्वारा ईश्वर भक्ति (प्रार्थना) क्यों करें 218

55.	वैदिक विधि से ईश्वर भक्ति-प्रार्थना न करने से हानियाँ	220
56.	वैदिक मन्त्रों द्वारा ईश्वर भक्ति	221
57.	ईश्वर भक्ति-प्रार्थना-उपासना की तैयारी	222
58.	सरल वेद मन्त्रों द्वारा ईश्वर-भक्ति	222-235

भाग - 7

59.	ध्यान का वैदिक स्वरूप	236-240
60.	ध्यान की तैयारी	240-244
61.	(क) प्रथम ध्यान विधि	245-274
62.	(ख) प्रथम ध्यान विधि का सूक्ष्म में क्रम	274
63.	द्वितीय ध्यान विधि	275-281
64.	वैदिक सन्ध्या व मन्त्र उच्चारण विधि	282-284
65.	वैदिक सन्ध्यापासना विधि-1 (प्राणायाम-श्वास-प्रश्वास द्वारा)	285-302
66.	वैदिक सन्ध्योपासना विधि-2 (मंत्रों के भावार्थ द्वारा)	303-308
67.	परम ध्यान विधि (दिशा-निर्देश)	309
68.	परम ध्यान विधि-1 (वैदिक मन्त्रों द्वारा)	310-312
69.	परम ध्यान विधि-2 (वैदिक मन्त्रों के भावार्थ द्वारा)	312-313
70.	जप व ध्यान हेतु भजन	314-344
71.	आर्यसमाज क्या मानता है?	345-347
72.	आर्य समाज महापुरुषों की दृष्टि में	348-349
73.	आध्यात्मिक उन्नति में सफलता के लिए ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण बातें	350-353
74.	आर्य समाज के दस नियम	354
75.	सन्दर्भित पुस्तकों की सूची	355

भूमिका

हमें जीवन में सुख चाहिये, शान्ति चाहिये, आनन्द चाहिये। यह तीनों वस्तुएं हमें वास्तव में वैदिक प्रार्थना, उपासना और उत्तम पुरुषार्थ से ही मिल सकती हैं। वैदिक प्रार्थना व उपासना हमसे संसार छुड़वाना नहीं चाहती। यह हमारी दिनचर्या में थोड़ा परिवर्तन करके हमारा दृष्टिकोण सकारात्मक बनाती है, हमारे जीवन की दिशा को बदलने का प्रयास करती है। हमारी जीवन शैली को पवित्र बनाती है।

हमारे शरीर में मुख्य रूप से चार वस्तुएं विद्यमान हैं 1. इन्द्रियों से युक्त शरीर, 2. मन, 3. बुद्धि व 4. आत्मा। शरीर के लिए अन्न व धन की आवश्यकता है। मन का भोजन संकल्प-विकल्प है, आर्ष ग्रन्थों का स्वाध्याय है। बुद्धि का भोजन धर्म है। क्या अच्छा है, क्या गलत है-यह कार्य बुद्धि का है। आत्मा का भोजन आध्याात्मिक ज्ञान व विज्ञान है। इसके बिना आत्मा भूखा रहता है। आत्मा का भोजन प्राकृतिक पदार्थों में उपलब्ध नहीं है। इसके लिए हमें आनन्द के भण्डार सच्चिदानन्दस्वरूप परमपिता परमात्मा की शरण में ही आना होगा। ईश्वरीय वाणी वेद का ही अनुसरण करना होगा। अतः वेदानुसार ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना व ध्यान करना ही एक सर्वश्रेष्ठ मार्ग है।

आर्य समाज के संस्थापक आदरणीय स्वामी दयानन्द जी महाराज ने स्तुति, प्रार्थना, उपासना की व्याख्या आर्योद्देश्यरत्नमाला में निम्न प्रकार दी है :-

1. स्तुति :- जो ईश्वर वा किसी दूसरे पदार्थ के गुण, ज्ञान, कथन, श्रवण और सत्यभाषण करना है वह 'स्तुति' कहाती है।

स्तुति का फल – जो गुणज्ञान आदि के करने से गुण वाले पदार्थों में प्रीति होती है, यह स्तुति का फल कहाता है।

2. **प्रार्थना :**– अपने पूर्ण पुरुषार्थ के उपरान्त उत्तम कर्मों की सिद्धि के लिए परमेश्वर वा किसी सामर्थ्य वाले मनुष्य की सहायता लेने को 'प्रार्थना' करते हैं।

प्रार्थना का फल – अभिमान का नाश, आत्मा में आर्द्रता, गुण ग्रहण में पुरुषार्थ और अत्यन्त प्रीति का होना 'प्रार्थना का फल' है।

3. **उपासना :**– जिससे ईश्वर ही के आनन्द स्वरूप में अपने आत्मा को मग्न करना होता है, उसको 'उपासना' कहते हैं।

निर्गुणोपासना – शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, संयोग, वियोग,हल्का, भारी, अविद्या, जन्म, मरण और दु:ख आदि गुणों से रहित परमात्मा को जानकर जो उसकी उपासना करनी है, उसको 'निर्गुणोपासना' कहते हैं।

सगुणोपासना – जिसको सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान्, शुद्ध, नित्य, आनन्द, सर्वव्यापक, एक, सनातन, सर्वकर्ता, सर्वाधार, सर्वस्वामी, सर्वनियन्ता, सर्वान्तर्यामी, मंगलमय, सर्वानन्दप्रद, सर्वपिता, सब जगत् का रचने वाला, न्यायकारी, दयालु आदि सत्य गुणों से युक्त जान के जो ईश्वर की उपासना करता है, सो 'सगुणोपासना' कहाती है।

सभी मत व सम्प्रदायों में उपासना और भक्ति का महत्व बताया गया है। उपासना से नि:सन्देह न केवल हमारी आध्यात्मिक उन्नति होती है बल्कि पाप कर्म से दूर रहने की प्रवृत्ति भी बनती है। उपासना का अर्थ है निराकार ईश्वर की संगति में बैठना। अपनी

आत्मा को पहचानना, ईश्वर के शुद्ध स्वरूप को जानना, उसके गुण, कर्म, स्वभाव को जानना व उसके धारणीय गुणों को जीवन में अपनाना, उसके द्वारा बनाई गई सृष्टि का चिंतन करना।

जप, ध्यान, उपासना और भक्ति में सफलता प्राप्त करने के लिए साधक में उचित पात्रता (योग्यता) का होना अनिवार्य है और पात्रता आती है वेदों के स्वाध्याय से, वेदानुसार आचरण करने से। अतः पात्रता के अभाव में सभी जप, ध्यान आदि निष्फल हैं, निरर्थक हैं, लेकिन बड़े दुःख के साथ कहना पड़ रहा है कि ऋषियों की इस पावन धरती भारत में, यह विषय अब गौण होता जा रहा है, अप्रासंगिक होता जा रहा है। अतः इस पात्रता को प्राप्त करने के लिए साधकों से विनम्र निवेदन है कि प्रस्तुत पुस्तक के भाग 1, 2, 3, 4 और 5 में वर्णित ज्ञान का हृदय से स्वाध्याय करें, चिंतन करें और अपने जीवन में पालन करें।

ईश्वर की संगति मनुष्य को पवित्र करती है। यह उपासना से ही मिलती है। इसके लिए ईश्वर, जीव प्रकृति के गुण, कर्म, स्वभाव को जानना जरूरी है। सत्य, न्याय, दया, संयम, ज्ञान, बल, तप आदि प्रभु के अनेक गुण हैं। जब उपासक मन की आँखों से ध्यान में बैठकर गुण-स्वरूप दयालु ईश्वर का चिंतन करता है, तब प्रभु उसके चारों तरफ ओत-प्रोत दिखाई देते हैं और भक्त प्रभु के गुणों के मंथन में लीन हो जाता है। यह विवेचन ही उसे मानसिक रूप से प्रभु के पास ले जाता है। उसमें भी प्रभु के गुण आने लगते हैं और यहाँ से उसके पवित्र होने की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है, लेकिन कल्पना कीजिए जिस साधक को उपरोक्त ज्ञान नहीं है, क्या वह अध्यात्म में प्रवेश करने का अधिकारी है-उन्नति

करना तो बहुत दूर की बात है।

वेदों का स्वाध्याय, वैदिक विचारों का चिंतन, सत्संग, वैदिक भजनों का गायन, सन्ध्या, ध्यान आदि उपासक की उपासना में सहायता करते हैं। उसकी सांसारिक कष्ट-क्लेश से मुक्ति पाने में रुचि पैदा होती है। प्रभु के गुणों के चिंतन में आनन्द आता है। फलस्वरूप, जब वह अपना आत्मनिरीक्षण करता है तो पाता है कि वह तो अपनी दिनचर्या में अभी भी ईश्वर के अनेक पवित्र गुणों व आज्ञाओं के विपरीत कर्म कर रहा है। प्रकृति के नियमों का पालन नहीं कर रहा है। तब वह अपने कर्मों में पवित्रता लाने का संकल्प लेता है और प्रयास भी करता है और धीरे-धीरे उसके जीवन में आध्यात्मिक, सामाजिक व शारीरिक उन्नति होती जाती है। दुर्गुण हटते जाते हैं, सद्गुण आते जाते हैं, बुद्धि सूक्ष्म होती जाती है और वह ईश्वर साक्षात्कार की ओर अग्रसर होता जाता है।

ईश्वर कभी भी अज्ञानतापूर्ण उपासना की प्रशंसा नहीं करता, ऐसी उपासना जो परमेश्वर द्वारा दिये गये वेद ज्ञान पर आधारित न हो। उपासना में सफलता साधक की पात्रता पर निर्भर करती है। इसलिए इस पुस्तक में वेदों के अनुसार, स्तुति, प्रार्थना, उपासना, जप, ध्यान से सम्बन्धित लगभग सभी विषयों को सरल हिन्दी भाषा में प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है ताकि साधक शुद्ध ज्ञान प्राप्त करके, अपनी पात्रता (योग्यता) को बढ़ा सके और श्रद्धापूर्वक श्रेष्ठ विधि से ईश्वर भक्ति करके पूर्ण लाभ उठा सके।

मैं उन सभी विद्वानों व आचार्यों को नमन करता हूँ, अपना आभार प्रकट करता हूँ जिनकी मूल्यवान पुस्तकों से मुझे उनके

सर्वोत्तम वैदिक विचार मिले। उन वैदिक विचारों के गहन चिंतन, मनन करने के बाद, मुझे इस पुस्तक को ऋषि परम्परा के अनुसार जनकल्याण के लिए लिखने की प्रेरणा मिली।

प्रस्तुत पुस्तक में जप व ध्यान की विधियाँ भी दी जा रही हैं। ये सभी विधियाँ ईश्वर की प्रेरणा व मार्गदर्शन से मुझे प्राप्त हुई हैं। मैंने, ईश्वर की प्रेरणा व उसकी आज्ञानुसार, केवल इनका अभ्यास किया है। अतः मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस पुस्तक में दी गई विधियों के अनुसार प्रणव जप, गायत्री जप, सन्ध्या, ध्यान व अन्य वैदिक मन्त्रों का जप-चिंतन करने से साधकों को न केवल दीर्घ एवं स्वस्थ आयु प्राप्त होगी बल्कि ईश्वरीय आनन्द व उसकी अनुभूति इसी जीवन में अवश्य मिलेगी।

मदन अनेजा

भाग-1

(1) प्रभु की वाणी- दिव्य ज्ञान वेद

1. उपासना सम्बन्धित आध्यात्मिक उपदेश

यो जात एव प्रथमो मनस्वान्देवो देवान्क्रतुना पर्यभूषत्।
यस्य शुष्माद्रोदसी अभ्यसेतां नृम्णस्य मह्ना स जनास इन्द्रः।।

अथर्व0 20/34/1

उपदेश : प्रभु सदा से प्रादुर्भूत है। प्रभु 'कभी जन्म लेते हों', ऐसी बात नहीं। वे सदा से हैं। वे अधिक से अधिक विस्तार वाले हैं। ज्ञान वाले हैं। ये दिव्य 'गुणयुक्त प्रभु सूर्य-चन्द्र, नक्षत्र आदि देवों को शक्ति से अलंकृत करते हैं। प्रभु की महिमा से ही ये सब देव देवत्व को प्राप्त करते हैं। प्रभु की शक्ति के भय से ही अग्नि आदि देव अपना-अपना कार्य ठीक से कर रहे हैं।

यदनूचीन्द्रमैरात्त्व ऋषभो ऽह्वयत्।
तस्मात्ते वृत्रहा पयः क्षीरं क्रुद्धो ऽहरदृशे।।

अथर्व0 10/10/10

उपदेश : प्रभु ने सृष्टि के प्रारम्भ में सर्वप्रथम वेदज्ञान दिया, अतः इसका स्थान सर्वप्रथम होना ही चाहिए। जो व्यक्ति जीवन में वेदज्ञान को प्रथम स्थान नहीं देता, वह प्रभु का प्रिय नहीं बनता। क्रुद्ध हुए-हुए प्रभु उसके, शक्तियों को आप्यायित करने वाले, ज्ञान को हर लेते हैं।

इयं कल्याण्य १ जरा मर्त्यस्यामृता गृहे।
यस्मै कृता शये स यश्चकार जजार सः।।

अथर्व0 10/8/26

उपदेश : शरीर में आत्मा के साथ परमात्मा का भी निवास है। शरीर में ममत्व रखने वाला आत्मा तो 'जन्म-मरण' के चक्र में फँसता है, परन्तु इसमें रहता हुआ भी परमात्मा जन्म-मरण के चक्र से ऊपर है। जिस परमात्मा ने जीव को कर्मफल भोगने हेतु यह शरीर नगरी बनाई है, वह स्तुति के योग्य है। इस शरीर की रचना में अङ्ग-प्रत्यङ्ग की रचना के कौशल में उस प्रभु की महिमा का अनुभव करता हुआ स्तोता उस प्रभु का स्तवन करता है।

अर्धमर्धेन पयसा पृणक्ष्यर्धेन शुष्म वर्धसे अमुर।
अवि वृधाम शग्मियं सखायं वरुणं पुत्रमादित्या इषिरम्।
कविशस्तान्यस्मै वपूंष्यवोचाम रोदसी सत्यवाचा।।

अथर्व० 5/1/9

उपदेश : प्रभु सर्वशक्तिमान व आनन्दमय हैं, हमारे सब कष्टों व पापों का निवारण करने वाले हैं, हमारे सच्चे सखा हैं, हमारे जीवनों को पवित्र करने वाले तथा हमारा रक्षण करने वाले हैं। वे ही प्रकृति में गति पैदा करके इस अद्भुत ब्रह्माण्ड की रचना करते हैं। हम इस बह्माण्ड में होने वाले आश्चर्यों में प्रभु की महिमा को देखें और उस प्रभु का ही गुणगान करें। प्रभु जैसा ही बनने का प्रयत्न करें।

आ तिष्ठतं सुवृतं यो रथो वामनु व्रतानि वर्तते हविष्मान्।
येन नरा नासत्येषयध्यै वर्तिर्याथस्तनयाय त्मने च।।

ऋ. 1-183-3

उपदेश : शरीर में हृदय ही आत्मा का निवास-स्थान है। अतः हृदय ही ग्रह है। प्राणसाधना के द्वारा चित्तवृत्ति का निरोध करके कुछ देर के लिए हम हृदय में ही स्थित होते हैं। यही उन्नति का

मार्ग है। यह हमारी सब शक्तियों के विस्तार के लिए होता है। आत्मा की प्राप्ति के लिए होता है। प्रतिदिन प्राणायाम के अनुष्ठान से हम चित्त-वृत्ति का निरोध करके स्व-स्वरूप को देखने का प्रयत्न करें। इसी में विकास है-यही आत्म-प्राप्ति का मार्ग है।

त्वमग्ने प्रथमो मातरि श्वन आविभव सुक्र तुया विवस्वते।
अरे जेतां रोदसी होतृ वूर्ये ऽसघ्नो भार मयजो महो वसा।।
ऋ. 1-31-3

उपदेश : प्रभु दर्शन के लिए परिचर्या (भक्ति) व ज्ञान आवश्यक है। इसके लिए उत्तम कर्मों व संकल्पों का होना भी अनिवार्य है तथा इस प्रभु से मेल के लिए प्राणसाधना आवश्यक है। प्रभु के मेल होने पर द्युलोक व पृथिवीलोक चमक उठते हैं। शरीर यदि स्वास्थ्य की दीप्ति से चमक उठता है तो मस्तिष्क ज्ञान की दीप्ति से चमक उठता है। हम भक्तों के सब कार्य प्रभु ही पूर्ण किया करते हैं-सब यज्ञ प्रभु द्वारा ही सम्पन्न होते हैं। सर्वमहान होता प्रभु ही है। प्रभु ही पूज्य हैं, सर्वप्रद हैं।

स्तृणीत बर्हिरानुषग् घृतपृष्ठं मनीषिणः।
यत्रामृतस्य चक्षणम्।। ऋ. 1-13-5

उपदेश : हृदयरूप आसन वह है जहाँ प्रभु आकर विराजमान होते हैं और उस अमृत प्रभु का जीव को दर्शन हुआ करता है। पवित्र हृदय में ही प्रभु का प्रकाश होता है। 'प्रभु सर्वव्यापक है' यह बात ठीक है, यह ठीक ही है कि वे पाषाणादि में भी हैं परन्तु वहाँ जीव को प्रभु का दर्शन इसलिए नहीं होता कि उन पाषाणादि में जीव नहीं है। दृष्टा नहीं है तो देखेगा कौन ? हृदय में दर्शनीय प्रभु भी है और दृष्टा जीव भी है, अब इस हृदयस्थली में ही प्रभु का दर्शन होता है।

होता तभी है जब यह स्थली अत्यन्त निर्मल होती है, वासना शून्य होती है और मलरहित होती है।

समिद्धोऽअञ्जन् कृदरं मतीनां घृतमग्ने मधुमत् पिन्वमानः।
वाजी वहन्वाजिन जातवेदो देवानां वक्षि प्रियमा सधस्थम्।।
यजु. 29/1

उपदेशः प्रभु भक्त के जीवन में ज्ञान का सर्वोपरि स्थान होता है। उसे यह पता है कि ज्ञानी भक्त ही प्रभु को आत्मतुल्य प्रिय है। इसके व्यवहार में सदा विचारशीलता का आभास मिलता है। यह कोई भी काम नासमझी से नहीं करता है। उस सर्वशक्तिमान प्रभु को अपने हृदय में धारण करता है। प्रभु को हृदय में धारण करने से आविर्भूत ज्योति वाला होता है।

ब्रह्माण इन्द्रं महयन्तो अर्कैरवर्धयन्नहये हन्तवा उ।।
साम0 439

उपदेश : ज्ञानी लोग मन्त्रों से उस सर्वशक्तिमान प्रभु की उपासना करते हैं, उसको बढ़ाते हैं, उसकी दिव्यता को अपने में भरते हैं। प्रभु न्यायकारी है-मैं भी न्यायकारी बनूँ, प्रभु दयालु है-मैं भी दया की वृत्ति वाला बनूँ। यही प्रभु को बढ़ाना है। इसके बिना हम अपने से कुटिलता की वृत्ति को दूर नहीं कर सकते।

यत्ते दिक्षु प्राराध्यं मनो अस्ति श्रुतं बृहत्।
तेन दृढा चिदद्रिव आ वाजं दर्षि सातये।। साम0 1174

उपदेश : प्रभु-प्राप्ति तभी होती है जब मनुष्य संसार में इधर-उधर भटकना छोड़, एकाग्रवृत्ति होकर प्रभु का ध्यान करे। इधर-उधर भटकना तब समाप्त होगा जब वह अपने अज्ञान को समाप्त कर लेगा। इस अज्ञान का नाश तब होगा जब हम वेदज्ञान को अपनाएँगे।

यह वेदज्ञान मननीय है, हमारी वृद्धि का कारण है, हमें सफल बनाने वाला है। इस ज्ञान के प्रकाश से अज्ञानान्धकार के निवृत्त होने पर यह प्रभु भक्त भौतिक पदार्थों का दास नहीं रहता। इसके तीनों दु:ख दूर हो जाते हैं। यह आध्यात्मिक, आधिभौतिक व आधिदैविक शान्ति प्राप्त करता है।

त्वं सोम परि स्त्रव स्वादिष्ठो अङ्गिरोभ्यः।
वरिवोविद् घृतं पयः।। साम0 981

उपदेश : प्राणसाधना के मार्ग को अपनाने पर साधक को, चित्तवृत्ति की एकाग्रता के अनुपात में, उस रसमय प्रभु के रस का अनुभव होने लगता है। हमारे जीवनों में एक दिन वह आता है, जब हमारे लिए प्रभु-चिन्तन ही स्वादिष्ट व मधुरतम हो जाता है। वे प्रभु ही हमें 'नैर्मल्य (विषय वासना से रहित होना), दीप्ति (प्रकाश, चमक) व आप्यायन (संतुष्टि, तृप्ति) प्राप्त कराते हैं।

मध्वः सोमस्याश्विना मदाय प्रयत्नो होता विवासते वाम्।
बहिष्मती रातिर्विश्रिता गीरिषा यातं नासत्योप वाजैः।।
ऋ. 1-117-1

उपदेश : प्राणसाधना से हमें जो कुछ प्राप्त होता है, वह सब हमारी उन्नति का साधन होता है। इस साधना से शरीर स्वस्थ व सबल बनता है, मन व इन्द्रियाँ पवित्र व निर्दोष होती हैं, बुद्धि तीव्र होती है और ज्ञान की वाणी विशेष रूप से हमारा आश्रय करती है। सूक्ष्म बुद्धि उन ज्ञान की वाणियों को अच्छी प्रकार ग्रहण करने वाली होती है। यह हृदय के आवरण को दूर करके हमें प्रभु-प्रेरणा को सुनने के योग्य बनाती है और साथ ही यह साधना हमें वह शक्ति भी देती है जिससे कि हम उस प्रेरणा के अनुसार कार्य कर सकें।

(2) ईश्वर निराकार है

(क) वैदिक मत

न तस्य प्रतिमाऽस्ति यस्य नाम महद्यशः।
हिरण्यगर्भऽइत्येष मा मा हिंसीदित्येषा यस्मान्न जातऽइत्येषः।।

– यजु0 32/3

भावार्थः-वह परमात्मा कभी देहधारी नहीं हो सकता, जिसका कोई नाप या सीमा नहीं है। जिसकी आज्ञा पालन करना ही उसका स्मरण है।

अशरीरं शरीरेष्वनवस्थेष्ववस्थितम।
महान्तं विभुमात्मानं मत्वा धीरो न शोचेति।।

– कठोपनिषद वल्ली मंत्र 1/2

भावार्थः-वह बिना हाथ-पाँव के संसार को वश में करता है, बिना आँख के देखता है, बिना कान के सुनता है, वह निराकार है। उसका आत्मा में भी निवास है।

प्रजापतिश्चरति गर्भेऽअन्तरजायमानो वहुधा विजायते।
तस्य योनिं परिपश्यन्ति धीरास्तस्मिन्ह तस्थुर्भुवानि विश्वा।।

– यजु0 31/19

भावार्थः-सम्पूर्ण संसार का स्वामी अजन्मा है, वह सबके भीतर है, नाना जगत उसी के सामर्थ्य से है। वह परमात्मा अजर-अमर है, उसमें कभी बुढ़ापा प्रकट नहीं होता है। परमात्मा प्राणदाता, ज्ञानदाता है, बुद्धि देने वाला वही परमात्मा शरीर की रचना करने वाला ज्ञान का भण्डार है।

न सन्दशे तिष्ठति रूपमस्य न चक्षुषा पश्यीत कश्चनैनम।
हृदा मनीषा मनसाधिक्लृप्तो तीर्थानि य एतद्धिदुरमृतास्ते भवन्ति।।

– कठोपनिषद 2/3/9

भावार्थः-परमात्मा का रूप दष्टि में नहीं आता, अतः इसको कोई भी आँख से देख नहीं सकता, चक्षुरादि इन्द्रियों से नहीं जान सकता, हाँ हृदय, बुद्धि तथा मन से वह जाना जा सकता है। स्वच्छ निर्मल हृदय, अन्तर्मुखी सात्त्विक बुद्धि और मननशील मन से वह समझ में आ सकता है। अनुभव किया जा सकता है।

(ख) पौराणिक मत

जिन पुराणों को, श्रीमद्भागवत को लाखों लोग बड़ी आस्था से सुनते हैं, पढ़ते हैं, वहाँ पर भी मूर्ति पूजा का समर्थन नहीं किया गया है

यस्यात्माबुद्धिः कुण्पे त्रिधातुके स्वधी कलत्रादिषु भौम इज्यधीः।
यत्तीर्थबुद्धि सलिले न कर्हिचित जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखरः।

– भागवत स्कन्ध 10/अ0 84/श्लोक 13

भावार्थः-जो मनुष्य शरीर को ही आत्मा मानता है, स्त्री में आत्मबुद्धि रखता है, पृथ्वी से निर्मित आदि को पूज्य मानता है, जल को तीर्थ मानता है, वह पशुओं में नीच गधा है।

नैंवायं चक्षुषा ग्राह्यो नापरैरिन्द्रयैरपि।
मनसैव प्रदीप्तेन महानात्मावसीयते।।47।।

– शिवपुराण वायु सं0 अ0 8

भावार्थः-न वह आँखों से देखा जा सकता है न अन्य इन्द्रियों से ग्रहण किया जा सकता है अर्थात आकार रहित है। प्रकाशित मन से उस महान आत्मा को प्राप्त किया जा सकता है।

अचक्षुरपि यः पश्यत्यकर्णोऽपि श्रणोति यः।
सर्वं वेत्ति न वेत्तास्य तमाहुः पुरुषः परम।।87।।

– शिवपुराण वासुसंहिता अ0 4

भावार्थः- बिना आँखों के भी वह देखता है, बिना कानों के भी सुनता है, वह सबको जानता है, उसको पूर्णतः जानने वाला कोई नहीं है, उसको परम पुरुष कहा जाता है।

गन्धवर्णसैर्हीनः शब्दस्पर्शविवर्जितम्।
अजातं ध्रुवमक्षय्यं नित्यं स्वात्मन्यस्थितम।।18।।

- वायु0 पु0 अ0 4

भावार्थः- गन्ध, वर्ण, रस, शब्द, स्पर्श, रूप आदि विषयों से रहित, अजन्मा, नित्य, अविनाशी परमात्मा अपने ही आत्मा में स्थित है।

(ग) संत मत

पाथर पूजे हरि मिले, तो मैं पूजूँ पहार।
ताते तो चाकी भली, पीस खाय संसार।। - सन्त कबीर

भावार्थः-यदि पत्थर (मूर्ति) पूजने से ही परमात्मा मिले तो मैं पूरा पहाड़ ही पूज लेता हूँ अर्थात् पत्थर पूजा में परमात्मा की प्राप्ति को मानना उचित नहीं।

"एक ओंकार कर्ता निर्भो अकाल मूरत-
" गुरुनानक देव जी

भावार्थः-ईश्वर एक ओ३म है, परमात्मा निर्भय, काल से परे अर्थात सदा रहने वाला और मूरतहीन अर्थात निराकार है।

विन पग चलेहूं, सुनेहुं बिन काना।
कर बिन कर्म, करहि विधि नाना।। - सन्त तुलसीदास

भावार्थः-वह परमात्मा बिना हाथ पैर के काम करता है, बिना चक्षु के देखता है, बिना कान के सुनता है, बिना शरीर धारण

किए सब कुछ करता है अर्थात् निराकार है।

तीर्थेषु पशुयज्ञेषु काष्ठपाषाण मृन्मये।
प्रतिमायां मनों येषां ते नरा मूढ चेतेसः।।

- स्वामी शंकराचार्य (पुस्तकः परापूजा)

भावार्थः-तीर्थ, पशु, यज्ञ, लकड़ी, पत्थर और मिटटी की मूर्तियों में जिनका मन है, वे लोग मूर्ख से भी आगे मूढ़ हैं।

पत्थर पीवे धोईके, पत्थर पूजे प्रान।
अन्तकाल पत्थर भये, भव डूबे अज्ञान।। - सन्त दादू

भावार्थ :- जो लोग पत्थर आदि की पूजा करते हैं, अन्त में उनकी बुद्धि भी जड़ हो जाती है। ऐसे लोग सदैव अज्ञानता में ही डूबे रहते हैं।

(घ) विद्वानों का मत

मूर्ति पूजा के सम्बन्ध में अनेक विद्वानों ने भी अपने मत/राय दी है। उनमें से कुछ इस प्रकार हैं :-

''मैंने अपने समस्त विवादों में ब्राह्मण-धर्म का विरोध नहीं किया, अपितु उसके विपरीत यही सिद्ध करने का प्रयत्न किया कि ब्राह्मण-धर्म की मूर्ति-पूजा उसके पूर्वजों, प्राचीन धर्मग्रन्थों एवं उन प्रमाणों के विपरीत है जिन्हें वे अपने लिए मान्य और आदरणीय मानते हैं।''

बहुत से विद्वान, ब्राह्मण मूर्तिपूजा के थोथेपन से भली-भांति परिचय होने पर भी उसी के गीत गाते हैं, क्योंकि

मूर्तिपूजा सम्बन्धी कार्य एवं उत्सव ब्राह्मणों को प्रत्येक सुविधा एवं धन देते हैं और उनके भक्त भी आँख बन्द करके विश्वास कर लेते हैं।''

– राजा राममोहन राय – आत्मकथा

''वेद में मूर्ति पूजा का कहीं भी विधान नहीं। मूर्तिपूजा सनातन नहीं, काल्पनिक निराधार विचारधारा का परिणाम है। परमेश्वर नित्य तथा सर्वव्यापक है। जो निराकार है, उसे साकार मानना उसकी निन्दा है।'' – महर्षि दयानन्द

''वैदिक युग में प्रतिमा-पूजन का अस्तित्व नहीं था। यही धारणा थी कि ईश्वर सर्वव्यापक है, बुद्ध की प्रतिमा गढ़कर इसकी उत्पत्ति हुई।''

– स्वामी विवेकानन्द से वार्ता-पृष्ठ-110

''मूर्ति पूजा का जन्म भारत में महात्मा बुद्ध के देहावसान के बाद ही साबित होता है।'' –चीनी यात्री फाहियान ह्वेनसांग

भाग-2

(3) जीवन का लक्ष्य

आजकल समाज में जीवन जीने के अनेक ढंग दिखाई प्रतीत होते हैं। इनको मुख्य रूप से 3 श्रेणियों में बाँटा जा सकता है:-

(1) **भौतिक जीवन :-** इस जीवन जीने वालों का मुख्य उद्देश्य भौतिक उन्नति करना होता है। ऐसे व्यक्ति अधिक से अधिक धनोपार्जन, समाज में प्रतिष्ठा व सुख सुविधाओं को प्राप्त करने में ही अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत कर देते हैं। अधिकतर मनुष्य इसी श्रेणी में ही आते हैं।

(2) **लक्ष्यहीन जीवन :-** इस श्रेणी वाले व्यक्तियों का जीवन में कोई सार्थक उद्देश्य नहीं होता है। वे खाने-पीने व रहने के लिए अच्छी सुविधायें और आवश्यकतायें पूरी करते रहते हैं।

(3) **आध्यात्मिक जीवन:-** इस श्रेणी में आने वाले व्यक्ति भौतिक उन्नति के साथ-साथ अध्यात्म में भी पर्याप्त रुचि रखते हैं।

धन, सम्पत्ति, शक्ति, भौतिक विद्या आदि सबको अन्त में, मनुष्य को छोड़ना होता है। इनसे मनुष्य को वास्तव में आत्मिक सन्तुष्टि नहीं होती, तृप्ति नहीं होती। ये केवल हमारे जीने के साधन हैं, उद्देश्य नहीं। आत्मा इस मानव शरीर के साथ इन सुविधाओं को पाकर भी अपने लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त नहीं कर पाता। संस्कारों का अभाव मोक्ष है। उस समय प्रकाशमय स्वरूप आत्मा परब्रह्म परमात्मा को प्राप्त हो जाता है।

समस्त दु:खों से छूटना, पूर्ण आनन्द को प्राप्त करना और ईश्वर की अनुभूति महसूस करना और दूसरों को भी करवाना भी मानव जीवन का परम लक्ष्य है।

इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर हमें भोगवाद एवं योगवाद के बीच समन्वय बनाने की आवश्यकता है। यदि हम हमेशा भोगवाद अर्थात् धन कमाना, खर्च करना, भौतिक वस्तुओं का अधिक से अधिक संग्रह करना और सांसारिक विषयों पर ही अपना सारा समय और शक्ति लगायेंगे तो इस जन्म में आध्यात्मिक उन्नति करने का समय मिलना कठिन है। इस जीवन में हमें कितनी आयु मिली है, और अगला जन्म हमें मानव का मिलेगा या नहीं, इसकी कोई गारन्टी नहीं है। इसलिए हम अपने जीवन में व्यर्थ की बातों, अत्यधिक भोगों व अनुचित इच्छाओं पर समय न लगायें। हमें धर्मानुसार पैसा कमाने के साथ-साथ समाज सेवा, परोपकार और ईश्वर-स्तुति-प्रार्थना, जप, ध्यान, उपासना के लिए भी प्रतिदिन उचित समय निकालना चाहिए ताकि हम ईश्वरीय आनन्द की अनुभूति करके अपना कल्याण कर सकें। पाप कर्म से बच सकें।

ध्यान में सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि हम अपने व्यवहार काल में योगवाद व सत्य आचरण को कितना महत्व देते हैं। जैसे-जैसे योगवाद और सत्याचरण को पर्याप्त महत्व व समय दिया जायेगा और ध्यान, जप की वैदिक विधि अपनाई जायेगी, वैसे-वैसे युवा अवस्था से ही हमारी उपरोक्त लक्ष्य की ओर यात्रा प्रारम्भ हो जायेगी।

(4) ईश्वर की उपासना क्यों करें?

1. ईश्वर के उपकारों का धन्यवाद देने के लिये।
2. आत्म-शुद्धि एवं मन इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखने के लिये।
3. बुरे संस्कार नष्ट करने के लिये।
4. ईश्वर प्रेरणा द्वारा अच्छे संस्कार उत्पन्न करने के लिये।
5. शुभ व निष्काम कर्म करने की प्रेरणा लेने के लिये।
6. यम, नियम पालन करने हेतु ईश्वर से प्रेरणा लेने के लिए
7. न्यायकारी, पवित्र, दयालु, परोपकारी आदि ईश्वरीय गुणों को जीवन में अपनाने के लिए।
8. ईश्वरीय आनन्द की प्राप्ति के लिये।
9. जीवन में संतोष और आत्म बल बढ़ाने के लिए।
10. मोक्ष प्राप्ति के लिए अर्थात् ध्यान की अवस्था में ईश्वर द्वारा अपने अन्तःकरण में आध्यात्मिक व दिव्य ज्ञान पाने के लिए।

(5) ईश्वर एक सर्वोपरि शक्ति

प्रकृति और जीवों पर नियन्त्रण रखने वाली एक अदृश्य शक्ति ईश्वर है। यह एक परम आत्मा है। चेतन है, अन्तर्यामी है। आत्मा शरीर में रहकर पूर्ण शरीर का संचालन करता है, ईश्वरीय कर्मफल व्यवस्था के अनुसार शरीर बदलता रहता है, लेकिन ईश्वर परम आत्मा सभी जड़ व चेतन पदार्थों के अन्दर विद्यमान है और अपना कार्य करती है। ईश्वर के अपने गुण, कर्म, स्वभाव हैं। ईश्वर के नियम अटल हैं। इसके नियमों में परिवर्तन करना जीव के लिए असंभव है। इसको सभी धर्मों में अपनी श्रद्धा और विश्वास के आधार पर अलग-अलग नामों से पुकारा जाता है।

वैदिक मान्यता के अनुसार इसका मुख्य नाम 'ओ३म्' है। संसार के सबसे प्राचीन ग्रन्थों में हमारे ऋषियों ने ओ३म् की महिमा का वर्णन किया है। इस शब्द का प्रयोग केवल ईश्वर के लिये ही किया जाता है।

निम्न परिस्थितियाँ सिद्ध करती हैं कि सम्पूर्ण संसार की व्यवस्था सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सर्वशक्तिमान, सत्य स्वरूप, आनन्द स्वरूप, चेतन स्वरूप, प्रकाशस्वरूप एवं निराकार ईश्वर के ही अधीन है। अतः केवल उसी की यथार्थ रीति से विधिपूर्वक उपासना करनी योग्य है। उसी की आज्ञाओं का पालन करना चाहिए।

परिस्थितियाँ :-

1. संसार में पैदा होने वाले सभी सुन्दर, स्वस्थ और लम्बी आयु वाले नहीं होते हैं, ऐसा क्यों होता है?

2. प्रत्येक माता-पिता अपने बच्चे को विद्वान् व धनवान बनाना चाहता है फिर भी कुछ बच्चे अज्ञानी और निर्धन रह जाते हैं। समान वातावरण में पलने वाले बच्चों का भी जीवन अलग-अलग होता है, क्यों?

3. कोई बच्चा गरीब घर में तो कोई अमीर घर में पैदा होता है। बाद में कुछ गरीब घर के बच्चे अमीर और अमीर घर के बच्चे निर्धन हो जाते हैं, क्यों?

4. कोई व्यक्ति दिन रात परिश्रम करके भी अपनी आवश्यकतायें पूरी नहीं कर पाता है और कोई थोड़े से परिश्रम से ही धनवान का जीवन व्यतीत करता है, क्यों?

5. कोई व्यक्ति थोड़ी सी चोट लगने से मर जाता है तो कोई व्यक्ति भयंकर दुर्घटना में भी बच जाता है, क्यों?

6. कोई भी मनुष्य, महापुरुष, ऋषि के शरीर में विद्यमान आत्मा अपना शरीर छोड़ना नहीं चाहता है और न कोई आत्मा शरीर की मृत्यु के बाद किसी निम्न योनि में जाना चाहता है फिर भी सभी आत्माओं को एक दिन शरीर छोड़ना पड़ता है और ईश्वर की कर्मफल व्यवस्था के अनुसार किसी भी दूसरे शरीर/योनि में जाना पड़ता है।

7. ईश्वर सृष्टि का उत्पत्तिकर्ता, पालन करता, प्रलय करता है। ईश्वर के नियम अटल हैं। जैसे सूर्य पहले निकलता था, वैसे ही अब निकलता है। ब्रह्माण्ड में अनेक ग्रह और उपग्रह भ्रमण कर रहे हैं, वे आपस में कभी नहीं टकराते हैं। ये सब ईश्वर के नियन्त्रण में ही ठीक कार्य कर रहे हैं।

8. हम सभी मानते हैं कि ईश्वर न्यायकारी है। वह कदापि अन्याय नहीं करता है। **अतः उपरोक्त परिस्थितियाँ हमारे द्वारा किये गये कर्म (वर्तमान में अथवा पूर्व जन्मों में) का ही परिणाम है और कर्म का फल देना ईश्वर के आधीन है।**

(6) ईश्वर उपासना के लाभ

4. शरीर, मन व इन्द्रियों पर नियन्त्रण रहता है।
1. सुबुद्धि की प्राप्ति अर्थात् बुद्धि का विकास होता है।
2. स्मरण शक्ति बढ़ती है।
3. जीवन की सभी शुभ क्रियाओं में एकाग्रता आती है।
4. अन्त:करण पवित्र होता जाता है और ईश्वर से दिव्य ज्ञान की रश्मियाँ प्राप्त होती हैं।
5. ईश्वर, प्रकृति व आत्मा का सही ज्ञान होता जाता है।
6. जीवन में सदैव, विपरीत परिस्थितियों में भी, समाधि (प्रसन्नता) बनी रहती है। दु:खों को स्वीकार भाव से

सहने की शक्ति मिलती है।

7. अच्छे संस्कारों की जाग्रति एवं निष्काम कर्म करने की प्रेरणा मिलती है।
8. वेदानुसार शुभ आचरण द्वारा यम-नियम पालन में दृढ़ता आती है। नकारात्मक विचारों से भी मुक्ति मिलती है।
9. पाप कर्म से दूर रहने की प्रवृत्ति बनती है।
10. ईश्वर के प्रति श्रद्धा बढ़ती है व ईश्वरीय आनन्द की प्राप्ति होती है।
11. शारीरिक व मानसिक दु:खों को सहन करने की भी शक्ति प्राप्त होती है।
12. दीर्घ व स्वस्थ आयु की प्राप्ति होती है।
13. धन दान, समय दान एवं समाज सेवा करने की प्रवृत्ति का विकास होता है।
14. परिवार में बच्चों में अच्छे संस्कार पैदा होते हैं।
15. वास्तव में वैदिक विधि से उपासना करने वाले प्रभु-भक्त से समाज को प्रेरणा मिलती है।

7. ईश्वर उपासना (वैदिक विधि से) न करने की हानियाँ

1. अपने व्यवहार से, अज्ञानता के कारण, अन्यों को दु:खी करना।
2. कृतज्ञता का अभाव होना।
3. इन्द्रियाँ व मन का दास होना।
4. वैदिक व धार्मिक विषयों को पूर्ण रूप से समझने में असमर्थ होना। फलस्वरूप पंडितों, ज्योतिषियों, कथा वाचकों, तान्त्रिकों के द्वारा आर्थिक शोषण का पात्र होना।
5. विपरीत परिस्थितियों और दु:ख को सहन न कर पाना।
6. काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार पर संयम न रख पाना।
7. उपासना से प्राप्त होने वाले विशेष ईश्वरीय गुण-

आध्यात्मिक ज्ञान, बल, आनन्द, निर्भयता, स्वतंत्रता आदि से वंचित रहना।

8. जीवन की समस्याओं का ठीक प्रकार से समाधान न कर पाना एवं फलस्वरूप दु:खी होना।
9. यम नियम का पालन न कर पाना।
10. मूर्ति पूजा व समाज में फैली विभिन्न अवैज्ञानिक, अवैदिक प्रथाओं का अनुसरण करके अपनी व समाज की हानि करना।

उपासना में बार-बार ईश्वर धन्यवाद करने का महत्व

ईश्वर कभी भी अपने भक्तों से, उसके द्वारा दिये गये उपकारों के लिए प्रतिदान, प्रतिफल या पुरस्कार नहीं चाहता। परन्तु ईश्वर को उसके उपकारों के लिए, बार-बार धन्यवाद देने से हमारी ईश्वर के प्रति प्रेम, श्रद्धा व भक्ति की भावना बढ़ती है। हमें मानसिक शान्ति, सकारात्मकता और प्रसन्नता प्रदान करती है। इसलिए हमें ईश्वर के प्रति कृतज्ञ बनकर उपासना काल व व्यवहार काल में सदैव उसे धन्यवाद देना चाहिए।

भाग-3

(8) वैदिक उपासना का महत्व

जीवन में अच्छी व श्रेष्ठ उपासना कर पाना एक बहुत बड़ी सफलता है। इस स्थिति को बनाये रखना भी एक बड़ी उपलब्धि है। उपासना में सफलता के लिए ईश्वर, प्रकृति, आत्मा, सृष्टि, अष्टांग योग आदि विषयों का शुद्ध ज्ञान होना अनिवार्य है। विषयों के शुद्ध ज्ञान के अभाव और जप व ध्यान की उपयुक्त विधि की जानकारी न होने के कारण साधकों का मन सांसारिक विषयों में भटकता रहता है। व्यवहार काल में, वैदिक ज्ञान की जानकारी न होने के कारण, उनका आचरण पूर्णतय: वेदानुकूल नहीं होता है। फलस्वरूप, अधिकतर साधकों की साधना पूर्ण सफलता की ओर नहीं बढ़ पाती है। इसलिए वे ईश्वरीय आनन्द और वेदानुसार आचरण से वंचित रह जाते हैं। अत: प्रत्येक साधक का कर्तव्य है कि वह वैदिक ज्ञान को प्राप्त करने का प्रयत्न करे।

उपासना में सफलता प्राप्त करने हेतु अनुकूल परिस्थितियाँ भी सहायक होती हैं, जैसे पूर्व जन्म के संस्कार, सत्संग में भाग लेना, ब्रह्म ज्ञान को जानने की तीव्र इच्छा, उपयुक्त वातावरण व संगीत आदि।

समाज में एक ऐसा वर्ग भी है जिसकी मान्यता है कि शुद्ध कर्म करना, यज्ञ करना, दान देना, परोपकार करना, शुद्ध आचरण रखना, गरीब व असहाय की सहायता करना आदि कर्म भी पूर्णतया मोक्ष या मुक्ति प्राप्त करवा सकते हैं। यह मान्यता पूर्णतया ठीक नहीं है। नि:सन्देह, ईश्वर की कर्मफल व्यवस्था के अनुसार

उपरोक्त सभी कर्म, मनुष्य को मृत्यु के बाद, उपयुक्त योनि व सुख सुविधायें प्राप्त करने में सहायक होते हैं। आध्यात्मिक उन्नति के लिये पहली सीढ़ी का कार्य करते हैं लेकिन ईश्वर की अनुभूति के लिए, मोक्ष की तरफ अग्रसर होने के लिए, धीरे-धीरे जन्म-मृत्यु के चक्र से छूटने के लिए, अगली सीढ़ी पर चढ़ना अति आवश्यक है और यह अगली सीढ़ी है-जीवन में अष्टांग योग का पालन करना, प्रातः काल व सायंकाल सर्वव्यापक प्रभु की स्तुति, प्रार्थना, उपासना, नियम से करना।

(9) ''उपासना'' में उन्नति कैसे करें?

उपासना में उन्नति और श्रेष्ठ योनि प्राप्त करने के लिए त्रैतवाद अर्थात् आत्मा-परमात्मा-प्रकृति का सम्पूर्ण एवं शुद्ध ज्ञान, शुद्ध व सकारात्मक विचार, स्वस्थ शरीर और अष्टांग योग के प्रथम 6 अंगों का अनुष्ठान, अभ्यास, क्रियान्वयन और सिद्धि करना परम आवश्यक है।

संसार में सम्यक रूपेण चिन्तन, मनन करने पर स्पष्ट रूप से तीन सत्ताओं का अस्तित्व दिखाई देता है। उदाहरण-आपको घर में तीन चीजें मिलेगी (1) माता, (2) पिता और (3) सन्तान। बाजार में दुकान पर तीन चीजें स्पष्ट दिखाई देंगी-(1) मालिक, (2) दुकान में रखा सामान, (3) ग्राहक। इस प्रकार सर्वत्र तीन ही सत्तायें विद्यमान हैं।

शास्त्रों के अनुसार यह संसार त्रिक (तीन वस्तुओं का समूह) से बंधा हुआ है। दूसरे शब्दों में भोग्य-भोग्या और नियन्ता अर्थात् प्रकृति-आत्मा-परमात्मा। इनके सही ज्ञान से इहलोक तथा परलोक दोनों ही सुधर जाते हैं।

यह तीन अनादि किन्तु नित्य सत्तायें हैं। इनका जानना और उनके अनुकूल अपने जीवन को क्रियान्वित करना ही परमपद प्राप्त करने का साधन है।

पहला-भोग्य= तीनों (सत्व+रज+तम) की साम्यावस्था = प्रकृति

दूसरा- भोगने वाला = जीवात्मा

तीसरा - न भोगने वाला (साक्षी रूप में) सत्ता = परमात्मा

जीवात्मा प्रकृति में रम जाता है; परन्तु परमात्मा नहीं रमता, वह द्रष्टा है-साक्षी है।

(10) महत्वपूर्ण आध्यात्मिक विषयों का शुद्ध ज्ञान

(i) ईश्वर सम्बन्धित शुद्ध ज्ञान विज्ञानः-

ईश्वर एक सत्तात्मक पदार्थ है। यह एक अदृश्य वस्तु है। वैदिक दर्शनों में वस्तु उसको कहते हैं जिसमें कुछ गुण, कर्म, स्वभाव होते हैं। ईश्वर सब जगह विद्यमान है। यह चेतन है, निराकार है, अखण्ड है। इसका कोई रंग, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, भार, आकार नहीं है।

ईश्वर का मुख्य व निज नाम ओ३म् है। ईश्वर के मुख्य पाँच कार्य हैं (1) सृष्टि की उत्पत्ति करना अर्थात् सृष्टि को बनाना, (2) पालन करना, (3) संहार करना, (4) जीवों को उनके कर्मानुसार फल देना, (5) वेदों का ज्ञान देना।

महर्षि दयानन्द ईश्वर को अनादि व सर्वशक्तिमान मानते हैं। उनके अनुसार ईश्वर सब कुछ कर सकता है लेकिन इसका

यह अर्थ नहीं कि वह जो चाहे करे। वरन् इसका अर्थ यह है कि वह सृष्टि उत्पत्ति, पालन और प्रलय तथा सब जीवों के पाप-पुण्यों की यथायोग्य व्यवस्था करने में कभी भी किसी की सहायता नहीं लेता। वह असम्भव बातों को नहीं करता। वह न्याय हेतु अपनी शक्ति का प्रयोग करता है। वह स्वभाविक नियमों के विपरीत नहीं चलता है।

उपनिषदों में ईश्वर, जीव और प्रकृति को अनादि तथा नित्य तत्व माना है। इनका जन्म कभी नहीं होता। यह सृष्टि / जगत् के कारण हैं। इनका कोई कारण नहीं है। किसी को किसी ने नहीं बनाया है। जीव प्रकृति का भोग करता है और फंस जाता है। परमात्मा न भोग करता है और न फंसता है। महर्षि दयानन्द ने वेदों व अन्य वैदिक ग्रन्थों का अध्ययन करने के बाद ईश्वर के 100 गुण, कर्म, स्वभाव का वर्णन ''सत्यार्थ प्रकाश'' में किया है। इनमें से उन्होंने ईश्वर के 20 नाम (गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार) आर्यसमाज के दूसरे नियम में सम्मिलित किये हैं जो अर्थ सहित इस प्रकार हैं :-

(1) **सच्चिदानन्दस्वरूप :** ईश्वर सत्, चित् और आनन्द स्वरूप है।

(2) **निराकार :** ईश्वर की कोई आकृति, मूर्ति या रंग नहीं है।

(3) **सर्वशक्तिमान् :** सृष्टि के रचने, पालने व प्रलय करने में ईश्वर किसी की सहायता नहीं लेता है।

(4) **न्यायकारी :** ईश्वर जीव को उसके कर्मानुसार फल देता है।

(5) **दयालु :** ईश्वर मनुष्य को सभी प्रकार के सुख साधन

प्रदान करता है जैसे-सूर्य का प्रकाश, जल, वायु, अग्नि आदि।

(6) **अजन्मा :** ईश्वर जीव की तरह शरीर से संयोगरूपी जन्म नहीं लेता है।

(7) **अनन्त :** ईश्वर की विशालता की कोई सीमा नहीं है।

(8) **निर्विकार :** ईश्वर सभी प्रकार के विकारों से रहित है। ईश्वर में जड़ पदार्थों के विकार जैसे सड़ना, गलना आदि नहीं पाये जाते। ईश्वर चेतन जीव के दोषों – काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, द्वेष आदि से भी परे है।

(9) **अनादि :** ईश्वर की उत्पत्ति नहीं हुई है।

(10) **अनुपम :** ईश्वर से अच्छा कोई भी अन्य पदार्थ या वस्तु सृष्टि में नहीं है।

(11) **सर्वाधार :** ईश्वर ही सबका आधार है। पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा, आकाश-गंगा – सभी का निर्माणकर्ता व आधार ईश्वर है।

(12) **सर्वेश्वर :** ईश्वर ऐश्वर्य से युक्त है। सृष्टि में जो भी धन, सम्पत्ति, ज्ञान, बल, ऐश्वर्य, ग्रह, उपग्रह आदि हैं। इन सबका मालिक ईश्वर ही है।

(13) **सर्वव्यापक :** ईश्वर सभी स्थान और तीनों लोकों में विद्यमान है।

(14) **सर्वान्तर्यामी :** ईश्वर सभी जड़ व चेतन पदार्थों के अन्दर-बाहर विद्यमान है।

(15) **अमर :** ईश्वर प्राणी के शरीर की तरह समाप्त नहीं होता। अर्थात् मृत्यु से परे है।

(16) **अजर :** ईश्वर हमारे शरीर की तरह कभी भी रोग ग्रस्त व बूढ़ा नहीं होता।

(17) **अभय :** ईश्वर सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक होने के कारण भय से रहित है।

(18) **नित्य :** ईश्वर भूतकाल, वर्तमान काल व भविष्यकाल सभी कालों में सदा रहता है।

(19) **पवित्र :** ईश्वर पाप-कर्म व अविद्या (अज्ञानता) से परे है।

(20) **सृष्टिकर्ता :** ईश्वर सृष्टि का जन्मदाता, पालनकर्ता व प्रलयकर्ता है।

उपासना में सफलता प्राप्त करने का एकमात्र उपाय है सत्संग, आर्ष ग्रन्थों का स्वाध्याय व उनमें लिखी बातों को आचरण में उतारना, ईश्वर भक्ति, ध्यान व प्रभु की कृपा। प्रभु कृपा पाने के लिए मनुष्य को पंचकोश की उपासना करनी चाहिए। दुश्चरित को त्यगाना चाहिए, चित्त को एकाग्र करना चाहिए; तृष्णाओं और इच्छाओं को संयम में रखना चाहिए, आत्मिक ज्ञान को प्राप्त करना चाहिए।

(ii) प्रकृति सम्बन्धित शुद्ध ज्ञान-विज्ञान -

प्रकृति अत्यन्त सूक्ष्म परमाणुओं-सतोगुण, रजोगुण व तमोगुण से बनी है। यह परमाणु जड़ पदार्थ हैं। इनमें ज्ञान व चेतन शक्ति नहीं है। यह परमाणु अनादि व अनन्त हैं। यह न उत्पन्न होते हैं, न नष्ट होते हैं। जगत की रचना करने के लिए कारण के रूप में प्रकृति की आवश्यकता होती है। जैसे घड़ा बनाने के लिए मिट्‌टी की आवश्यकता।

यह सारी प्रकृति वास्तविक है। माया या स्वप्न नहीं है। इस प्रकृति को कभी किसी ने नहीं बनाया है। इसके पदार्थों से भोग

प्राप्त करने का हर जीवात्मा को अधिकार है। यह भोग सब जीवों को यथायोग्य व्यवहारपूर्वक प्राप्त होता रहता है।

ईश्वर शक्ति द्वारा प्रकृति से सृष्टि रचता है। प्रकृति भोग्य है। यह अपने ज्ञान व आत्मा के लिए विभिन्न रूप धारण करती है। ईश्वर ने प्रकृति को कुछ नियमों के अन्दर रखा हुआ है। प्रकृति उनका उल्लंघन कभी नहीं करती। सृष्टि में हमें जो कुछ दीखता है यह प्रकृति और आत्मा के संयोग का ही फल है।

(iii) सृष्टि सम्बन्धित शुद्ध ज्ञान -

ईश्वर ही सृष्टि की रचना करता है। वह सूक्ष्म परमाणुओं को लेकर अपनी शक्ति व ज्ञान के द्वारा जीव के लिए संसार बनाता है।

प्रत्येक सृष्टि का आरम्भ भी है और अन्त भी। अन्त होने के बाद सृष्टि फिर बनती है, यह क्रम बराबर चलता रहता है। प्रत्येक सृष्टि में सूर्य, चन्द्र, पृथिवी आदि के समान पिण्ड बनते हैं।

सृष्टि में तीन तत्व काम कर रहे हैं। पहला परमात्मा, दूसरा जीवात्मा तथा तीसरा प्रकृति। ईश्वर ने सृष्टि की रचना इस उद्‌देश्य से की है ताकि जीवात्मा दुःख और वासनाओं से मुक्त होकर आनन्दमयी परमात्मा का साक्षात्कार कर सके, अनुभूति कर सके। जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति पा सके। यह रचना आत्मा के हित के लिए की गई है। उसको दुःखी करने के लिए नहीं। पूर्व कर्मानुसार जीव को शरीर, आयु व भोग मिलते हैं। ये सुख और दुःख दोनों प्रदान करते हैं। संसार या सृष्टि के अभाव में यह सुख-दुःख भोगना असंभव है।

एक सृष्टि की आयु 4 अरब 32 करोड़ वर्ष होती है। इस अवधि को चार युगों में विभाजित किया गया है। वर्तमान में चौथा युग अर्थात् कलयुग चल रहा है।

(iv) आत्मा सम्बन्धित शुद्ध ज्ञान :-

आत्मा और जीवात्मा दो अलग-अलग वस्तुएं हैं। जब आत्मा शरीर में प्रवेश करती है तब वह जीव के साथ जीवात्मा कहलाती है। वह शरीर में रहकर उसको चलाती है। सुख और दु:ख की अनुभूति करती है। आत्मा मानव शरीर में रहकर ही अपने प्रयत्न, ज्ञान अथवा अन्य गुणों को विकसित करके मोक्ष का अधिकारी बन सकती है क्योंकि ईश्वर ने मेधा बुद्धि केवल मानव शरीर में ही आत्मा को दी है, अन्य योनियों में नहीं।

जब जीवात्मा अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष एवं अभिनिवेश से मुक्ति पा लेती है, उस समय वह अपने स्वरूप में आ जाती है। आत्मा सत् व चेतन है। यह शरीर, शरीर में विद्यमान इन्द्रियाँ व ईश्वर से भिन्न है। यह अनादि और अनन्त है। इसे ईश्वर ने नहीं बनाया। जब से ईश्वर है तभी से यह है। इसके कार्य न तो ईश्वर की मर्जी से होते हैं, न ईश्वर की योजना और सर्वज्ञता के अनुसार होते हैं। अपने कर्मों के अनुसार यह आत्मा मनुष्य, पशु, पक्षी, कीटाणु आदि का शरीर धारण करती रहती है। यह मानव शरीर में संसार के भोगों को त्याग-पूर्वक भोग कर और दु:खों की निवृत्ति करके मोक्ष प्राप्त करने का प्रयत्न करता है। यह ईश्वर का अंश नहीं है। यदि ऐसा होता तो यह अज्ञानी व अल्पज्ञ न होता।

आत्मा सूक्ष्म, नित्य, अजर, अमर, एकदेशी, अल्पज्ञ है। यह सत्य भी है लेकिन अपवित्र कार्य भी कर लेती है। यह कर्म

करने में स्वतंत्र है। किन्तु फल भोगने में ईश्वराधीन है। इसमें रंग, रूप, भार, गंध नहीं है। इसका कोई लिंग नहीं होता। यह स्थान नहीं घेरती। एक सूई की नौंक पर विश्व की सभी आत्माएँ आ सकती हैं। जीवात्मा शरीर में मुख्य रूप से हृदय प्रदेश में रहता है। किन्तु गौण रूप से यह नेत्र, कण्ठ आदि स्थानों में भी निवास करता है।

हमारी दृष्टि में आत्मायें अनगिनत हैं परन्तु ईश्वर के ज्ञान स्वरूप में आत्मायें सीमित हैं। सभी आत्माओं का स्वरूप एक सा है। हमें दिखने वाला भेद आत्मा के द्वारा ग्रहण किया गया शरीर, बुद्धि, ज्ञान, बल, कर्म आदि के कारण प्रतीत होता है।

इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, ज्ञान, दु:ख-सुख की अनुभूति करना आत्मा के गुण हैं। इनमें ज्ञान और प्रयत्न विशेष गुण हैं ज्ञान से वह प्रभु को जान पाता है और प्रयत्न से ईश्वरीय आनन्द को भोगता है। जब उसके पास प्रकृति के गुण अधिक आ जाते हैं उस समय उस में नाना प्रकार की विकृतियाँ आ जाती हैं। जब उसमें परमात्मा के गुण आ जाते हैं तो उसकी ज्ञान अग्नि प्रचण्ड हो जाती है और वह प्रभु से मिलने का प्रयत्न करती है।

ज्ञान और विज्ञान ही आत्मा का भोजन है। आत्मा इसके बिना भूखा रहता है। इसके अन्तर्गत आत्मज्ञान, परमात्मा की उपासना व उसका चिंतन, वेदों का अध्ययन, यज्ञ करना आते हैं।

आत्मा के कर्म करने के दो साधन हैं।

(1) **आन्तरिक साधन** - मन, बुद्धि और अहंकार।

(2) **बाहरी साधन** - हाथ, पैर, नाक, कान और मुँह।

शब्द, रस, रूप, गन्ध और स्पर्श - इन पाँचों विषयों को जानने के लिए पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ आत्मा की सहायता करती हैं-

कान- शब्द सुनने के लिए, जीभ-रस चखने के लिए व बोलने के लिए, नेत्र-रूप देखने के लिए, नासिका-गन्ध सूंघने के लिए और त्वचा छूने के लिए। इन ज्ञानेन्द्रियों के द्वार बाहर की ओर खुलते हैं। इसी प्रकार पाँच कर्मेन्द्रियाँ-वाणी, हाथ, पाँव, गुदा और उपस्थ (मूत्रेन्द्रिय) जीवन को चलाने में जीवात्मा की मदद करती हैं। यह सब ज्ञानेन्द्रियाँ व कर्मेन्द्रियाँ बाहरी विषयों को ही ग्रहण करती हैं। मन इन्द्रिय द्वारा शरीर के अन्दर संकल्प, विकल्प वासना, सुख-दु:ख का संसार रचा जाता है। जब यह इन्द्रियाँ संयम में नहीं रहती तो जीवात्मा को अपने लक्ष्य तक पहुँचने में सफलता नहीं मिलती।

जीवात्मा के गुण, कर्म और स्वभाव को जानने से हमें शरीर, इन्द्रियाँ और मन पर अधिकार प्राप्त करने में सहायता मिलती है। हम बुरे कार्यों को करने से बचते हैं।

(v) शरीर सम्बन्धित शुद्ध ज्ञान-विज्ञान

मानव शरीर परमात्मा की अद्भुत देन है। इसमें पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं; दस प्राण हैं, मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार है और इसमें प्रभु ने आत्मा को स्थापित किया है। लेकिन मनुष्य परमात्मा की इस सुन्दर कृति पर गहनता से विचार-विमर्श नहीं करता। जिस घर में आत्मा रहता है उस घर के बारे में अज्ञानता। यह उसका दुर्भाग्य ही है।

मानव शरीर पँच महाभूत से निर्माण होता है-जल, वायु, आकाश, अग्नि व पृथ्वी। यह तीन प्रकार का है।

(1) स्थूल शरीर :-

मानव शरीर हाड़ मांस व हड्डियों का बना दिखाई देता है।

इसको अन्नमय कोश कहते हैं। इसको स्वस्थ रखना व इससे कार्य लेना आत्मा का उत्तरदायित्व है। शरीर के द्वारा जीवात्मा कर्म फल का भोग करता हुआ मोक्ष को प्राप्त करने का प्रयत्न करता है। शरीर उत्पन्न होता है, बढ़ता है, सर्दी और गर्मी महसूस करता है, बृद्ध होता है और अन्त में समाप्त हो जाता है।

हमारे जीवन का मुख्य लक्ष्य है धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति करना। धर्म-बुद्धि के लिए, अर्थ-शरीर के लिए, काम-मन के लिए और मोक्ष आत्मा के लिए। यह कार्य मानव शरीर के द्वारा ही हो सकता है। शरीर के अन्दर विद्यमान पाँचों कोशों की उपासना से ही शरीर स्वस्थ रहता है और आत्मा आध्यात्मिक उन्नति कर पाती है।

शरीर को स्वस्थ रखने के चार उपाय हैं।

(क) सात्विक आहार - ऐसा भोजन जिससे शरीर के अन्दर सात्विक शक्ति पैदा हो। सात्विक भोजन से कब्ज की समस्या नहीं होती है। हमारा मन, विचार व आचरण अच्छा बनता है। हम निरोग रहते हैं।

(ख) निद्रा - सोने की वह स्थिति जिसमें कोई चिन्ता न हो। अच्छी, गहरी व सुखद नींद से हम शारीरिक व मानसिक रूप से स्वस्थ रहते हैं।

(ग) ब्रह्मचर्य - आर्ष ग्रन्थों का स्वाध्याय, सात्विक विचार और खाये हुए भोजन से बने तत्व को संभाल कर रखना ब्रह्मचर्य कहलाता है। भोजन से रस बनता है, रस से रक्त, रक्त से चर्बी, चर्बी से हड्डियाँ, हड्डी से मज्जा, मज्जा से वीर्य और वीर्य से ओज बनता है। इस ओज से मनुष्य का मुखमण्डल चमकता है।

बुद्धि तीव्र व प्रज्ञा हो जाती है। यह ओज ही आत्मा का भोजन है। अतः लम्बी आयु व उपासना में सफलता के लिए ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। गृहस्थ में भी ब्रह्मचर्य पालन के कुछ नियम हैं उनका अनुकरण करना चाहिए।

(घ) योगासन व प्राणायाम – भोजन को पचाने और शरीर को स्वस्थ रखने के लिए नियमित व्यायाम, आसन, प्राणायाम व श्वसन क्रियायें अति लाभदायक हैं। इनसे शरीर सक्रिय रहता है, कार्यक्षमता बढ़ती है, सभी अंग स्वस्थ रहते हैं। बुढ़ापा जल्दी नहीं आता है, आलस्य दूर रहता है, शरीर के विभिन्न दोष दूर होते हैं, मन निर्मल व प्रसन्न रहता है।

आसन व व्यायाम करते समय मन को प्रसन्न रखें, भावना करें कि मेरा शरीर, प्रभु की कृपा से स्वस्थ है या हो रहा है। आसन, व्यायाम व प्राणायाम करते समय यदि ईश्वर चिंतन भी किया जाये तो आध्यात्मिक लाभ भी मिलता है।

प्रतिदिन करने वाले कुछ सूक्ष्म/प्रारम्भिक व्यायाम –

(1) आँखों का व्यायाम, (2) गर्दन का व्यायाम, (3) मुख, जिह्वा व गले का व्यायाम, (4) हाथ की अंगुलियों के व्यायाम, (5) कलाई का व्यायाम, (6) कन्धों का व्यायाम, (7) कमर का व्यायाम, (8) घुटनों का व्यायाम, (9) पैरों का व्यायाम, (10) लातों का व्यायाम।

कुछ लाभदायक श्वसन क्रियायें भी अवश्य करनी चाहिए। इनसे वायु (आक्सीजन) शरीर की प्रत्येक कोशिका तक आसानी से पहुँच जाती हैं और अशुद्ध वायु बाहर निकल जाती है। दो महत्त्वपूर्ण श्वसन क्रियाये हैं –

(1) दीर्घ श्वसन (slow, long and deep breathing)

(2) मध्य श्वसन (slow, long and not very deep breathing)

इसके अतिरिक्त अनुलोम विलोम व नाड़ी शोधन प्राणायाम भी श्वसन क्रियाओं में सम्मिलित हैं। ये क्रियायें किसी भी योग शिक्षक से सीखी जा सकती हैं।

हम आसनों को 3 श्रेणी में बाँट सकते हैं। खड़े होकर करने वाले, बैठ कर करने वाले और लेट कर करने वाले। यदि समय का अभाव है तो हम अपने स्वास्थ्य व आयु के अनुसार प्रत्येक श्रेणी के आसनों के लिए सप्ताह में 2 दिन निर्धारित कर सकते हैं। आसनों का निर्धारण करते समय प्रयत्न करें कि एक सप्ताह में शरीर के सभी अंगों का व्यायाम हो जाये अर्थात् तीनों श्रेणी के आसनों का अभ्यास हो जाय।

स्थूल शरीर को अन्नमय कोश भी कहते हैं, क्योंकि यह अन्न के आश्रय पर जीवित रहता है। कोश का अर्थ है भण्डार। अन्नमय कोश के अन्दर प्राणमय कोश है। उसके भीतर मनोमय कोश है। फिर विज्ञानमय कोश है और अन्त में आनन्दमय कोश है। इनका वर्णन सूक्ष्म में निम्न प्रकार है -

(i) अन्नमय कोश - यह स्थूल शरीर है। यह पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश-पाँच भूतों से बनता है और प्रत्येक आत्मा को उसके कर्मों के अनुसार प्राप्त होता है। यह उत्पन्न होता है, बढ़ता है, घटता है, रोगग्रस्त भी होता है, अन्त में मृत्यु को प्राप्त होता है। आत्मा, कर्मों का फल, सांसारिक सुख दुःख के रूप में इसी के द्वारा भोगता है। अन्न को धर्मानुसार अर्जित करना, अन्न का आदर करना, सात्विक भोजन करना, उचित मात्रा में भोजन

करना, केवल भूख लगने पर ही आहार लेना, शरीर में कब्ज न होने देना, आसन व प्राणायाम द्वारा शरीर को स्वस्थ रखना आदि अन्नमय कोश की उपासना कहलाती है। अन्नमय कोश की उपासना से आयु दीर्घ होती है। अन्नमय कोश सभी कोशों का आधार है।

(ii) प्राणमय कोश : यह अन्नमय कोश को संचालित करता है। उसको स्वस्थ व क्रियाशील रखता है। इसके अन्तर्गत पाँच प्राण और पाँच कर्मेन्द्रियाँ आती हैं। यह क्रिया शक्ति का कोश है। नियमित प्राणायाम का अभ्यास करना और प्राणों को बलिष्ठ बनाना, प्राणमय कोश की उपासना कहलाती है। प्राणमय कोश की उपासना से शरीर को स्वस्थ रहने में सहायता मिलती है और ध्यान में सन्तोषजनक उन्नति होती है।

प्राण व उसका वर्गीकरण

प्राणतत्व एक ही है। शरीर में उसके विभिन्न कार्यों के आधार पर इसको दस भागों में विभक्त किया गया है–5 प्राण व 5 उप–प्राण। प्राणमय कोश इन्हीं दस के सम्मिश्रण से बनता है। प्राण के विशिष्ट कार्यों के बावजूद प्राण तत्व/प्राण ऊर्जा अपने मूल में एक ही है। पांच प्राणों के नाम व कार्य निम्नलिखित हैं –

(1) प्राण वायु :– यह पूरे शरीर में सांस लेने और जीवन शक्ति के प्रवाह को नियंत्रित करता है। यह श्वास, आहार आदि को अन्दर खींचता है। इसका स्थान छाती है। श्वास–प्रश्वास और ध्यान से इसको बलिष्ठ किया जाता है।

(2) अपान वायु :– यह मल–मूत्र, दुर्गन्ध, रज, वीर्य आदि का विसर्जन करने में सम्पन्न है। पाचन में सहायता करता है। मूलाधार

चक्र को प्रभावित करता है। इसका स्थान नाभि से नीचे गुदा है। पेट के निचले हिस्से से सम्बन्धित आसनों (मूलबन्ध आदि) द्वारा इसको बलिष्ठ किया जाता है।

(3) समानवायु :- यह पेट में अन्न का पाचन करता है और पाचक रसों को शरीर के सभी अंगों (स्थानों) में वितरित करता है। इसका स्थान नाभि है। कपालभाति व अग्निसार क्रिया द्वारा इसको बलिष्ठ किया जाता है।

(4) व्यानवायु :- यह सम्पूर्ण शरीर में रक्त संचार और प्राण को हर कोशिका और अंग तक पहुँचाने का कार्य करता है। इसका स्थान पूर्ण शरीर है। शरीर को खींचने वाले व्यायाम/आसन, सूर्य नमस्कार आदि द्वारा यह बलिष्ठ होता है।

(5) उदानवायु :- उर्ध्वगमन की अनेक क्रियायें इसके द्वारा सम्पन्न होती हैं। यह ऊर्जा के ऊपर की गति से जुड़ा है। यह स्वर उच्चारण और संवाद करने की क्षमता को प्रभावित करती है। उज्जयी प्राणायाम से यह बलिष्ठ होता है।

उपरोक्त प्रत्येक प्राण के साथ 1-1 उप प्राण जुड़ा हुआ है, जैसे मिनिस्टर के साथ उसका सैक्रेटरी।

(iii) मनोमय कोश : यह प्राणमय कोश का परिचालन करता है। इसके अन्तर्गत मन और पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ आती हैं जिनके नाम हैं घ्राण (गन्ध अनुभव करना) रसना (स्वाद लेना), चक्षु (देखना), श्रोत्र (सुनना) और त्वक् (स्पर्श करना)। यह कोश इच्छा शक्ति का केन्द्र है। यह विज्ञानमय कोश द्वारा लिये गये निर्णयों को क्रियान्वयन करता है। मन को संयम में रखना, मनोमय कोश की उपासना कहलाती है। ध्यान में सफलता मनोमय कोश की उपासना

से ही मिलती है।

(iv) विज्ञानमय कोश : यह मनोमय कोश को अपने निर्णय भेजता है। यह बुद्धि और पाँच ज्ञानेन्द्रियों के मिलने से बनता है। यह ज्ञान-शक्ति का भण्डार है। इसमें आत्मा, परमात्मा और प्रकृति का सच्चा ज्ञान रहता है। आर्ष ग्रन्थों का नियमित स्वाध्याय, शुद्धाचरण और विवेक के द्वारा विज्ञानमय कोश की उपासना की जाती है। विज्ञानमय कोश की अवहेलना करने पर आध्यात्मिक उन्नति सन्तोषजनक नहीं होती है।

(v) आनन्दमय कोश : उपरोक्त चारों कोशों की उपासना करने के बाद जब क्रिया शक्ति, इच्छा शक्ति और ज्ञान शक्ति शान्त हो जाती है, तब आनन्दमय कोश की अनुभूति होती है। यहाँ पर आत्मा अपनी व ईश्वर की अनुभूति करता है। ईश्वरीय आनन्द को प्राप्त करता है।

(2) सूक्ष्म शरीर :

यह स्थूल शरीर के अन्दर विद्यमान है। ईश्वर ने सूक्ष्म शरीर में 18 तत्व-पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच तन्मात्राएँ, मन, बुद्धि व अहंकार की व्यवस्था की है। स्थूल शरीर के नष्ट होने पर भी सूक्ष्म शरीर नष्ट नहीं होता। जब तक जीवात्मा की मुक्ति न हो जाये, यह जीवात्मा के साथ जन्म-जन्मान्तर चलता रहता है।

ईश्वर द्वारा स्थूल शरीर में स्थापित सूक्ष्म शरीर एक प्रकार का कम्प्यूटर है जिसमें मन, वाणी व शरीर से किया गया हमारा प्रत्येक कर्म-अच्छा या बुरा-लिखा जाता है। इस जन्म में और पूर्व जन्मों में आत्मा जो भी कर्म करता है वह सब सूक्ष्म शरीर में

विद्यमान रहता है। इसी शरीर के सहारे आत्मा अपने कर्मों के अनुसार भिन्न-भिन्न योनियों को प्राप्त करके कर्मफल भोगता है।

यह अत्यन्त सूक्ष्म है। यह छोटे-बड़े सभी प्राणियों के स्थूल शरीर में रहता है। मृत्यु के समय सूक्ष्म शरीर अन्दर की सारी सूक्ष्म शक्तियों और इन्द्रियों के भोगों के रिकार्ड को एकत्र करके अपने साथ ले जाता है। यह रिकार्ड कीपर है जो कभी भी रिकार्ड रखने में गलती नहीं करता। अतः कोई भी जीव, किसी भी उपाय से बुरे कर्मों के फल को कम या नष्ट नहीं कर सकता है।

हमें सूक्ष्म शरीर को पवित्र व वासना रहित बनाना चाहिए। इसका निरन्तर चिंतन करना चाहिए। अपनी त्रुटियों को सुधारना चाहिए। जो लोग प्रतिदिन इस सूक्ष्म शरीर रूपी पुस्तक का आत्म निरीक्षण करते हैं और त्रुटियों का सुधार करते जाते हैं उनको मृत्यु के समय कोई पश्चाताप नहीं होता क्योंकि मृत्यु के समय जब पृष्ठ के बाद पृष्ठ जीवात्मा के सामने खुलते हैं उस समय अन्तिम पृष्ठ पर ट्रांसफर की आज्ञा देखकर वह प्रसन्न होता है। उस पर लिखा होता है कि हे जीवात्मा! अब मनुष्य शरीर से तेरा परिवर्तन अमुक अच्छी योनि में होगा जैसे मनुष्य या देवता की योनि।

इसके विपरीत जो मनुष्य अच्छे कर्म नहीं करते, वे मृत्यु के समय अपने पृष्ठों को देखकर पश्चाताप करते हैं और अपना, मनुष्य योनि को छोड़ते समय किसी अन्य योनि में ट्रांसफर का आर्डर पढ़कर दुःखी होते हैं लेकिन अब आँसू बहाने से स्थिति नहीं बदलती।

(3) कारण शरीर :

सत्व, रज और तम- इन तीनों तत्वों के समूह को कारण

शरीर कहते हैं। यह तीनों शरीरों में सबसे सूक्ष्म है। सभी जीवों का कारण शरीर एक सा ही होता है। इसके विपरीत सभी जीवों का स्थूल शरीर व सूक्ष्म शरीर अलग-अलग होता है।

(11) शरीर इन्द्रियाँ, उनका उद्देश्य व उन पर नियंत्रण

ईश्वर द्वारा दी गई इन्द्रियाँ आत्मा के सुविधाजनक विकास यात्रा के सहायक उपकरण हैं। यह मन से जुड़कर कार्य करती हैं लेकिन इनके कार्य करने की एक सीमा है। इनके द्वारा ईश्वर का साक्षात्कार (जो कि एक अति सूक्ष्म व अति शक्तिशाली सत्ता है) नहीं किया जा सकता। ये आत्मा के औजार हैं, सेवक हैं। आत्मा और शरीर की आवश्यकतायें (इच्छायें नहीं) पूर्ण करने व सुख प्राप्त करने के लिए परमात्मा ने इन्द्रियों का प्रावधान किया है। भोग विलास के लिए नहीं। इसलिए आत्मा का कर्तव्य है कि इनका सदुपयोग करे-दुरुपयोग नहीं। इनका स्वामी बने-गुलाम नहीं। साधारणतय: इन्द्रियाँ अपने-अपने विषयों की तरफ आकर्षित होती हैं। अविद्या के कारण प्रेयमार्ग को पसन्द करती हैं। यदि मन को, बुद्धि द्वारा, आत्मा का आदेश (क्या उचित है, क्या अनुचित है) नहीं मिलता तो मन भी इन्द्रियों का अनुसरण (इन्द्रियों के पीछे चलना) प्रारम्भ कर देता है। फलस्वरूप इन्द्रियाँ व मन बेलगाम हो जाते हैं और आत्मा को पतन की ओर ले जाते हैं।

आत्मा इन्द्रियों द्वारा बाहरी और आन्तरिक विषयों का ज्ञान प्राप्त करता है, अनुभूति करता है, कार्य करता है, सांसारिक चीजों को महसूस करता है। संसार को त्यागपूर्वक भोगकर मोक्ष प्राप्ति की कामना करता है।

शरीर में कुल 11 इन्द्रियाँ हैं।

पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ (1) घ्राण (नाक) - गन्ध की अनुभूति

करने के लिए (2) रसना (जीभ) - स्वाद के लिए - यह ज्ञानेन्द्रिय भी है और कर्मेन्द्रिय भी है। (3) चक्षु (आँख) -देखने के लिए, (4) श्रौत्र (कान)- सुनने के लिए और (5) त्वक् (त्वचा / चर्म) - स्पर्श करने के लिए

पाँच कर्मेन्द्रियाँ :- (1) हस्त (हाथ) - सब कार्य करने के लिए (2) पाद (पाँव) - चलने के लिए (3) जिह्वा (वाणी) बोलने के लिए एवं भोजन करने के लिए (4) उपस्थ (जननेन्द्रिय) - मूत्र त्याग व उत्पत्ति के लिए और (5) गुदा (मल द्वार) - मल त्याग करने के लिए और ग्यारहवीं इन्द्रिय - मन

इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखने के लिए, उनका स्वामी बनने के लिए, इन्द्रियाँ राग, द्वेष से मुक्त होकर आत्मा के अधीन कार्य करें। इसके लिए बुद्धि को मेधा बुद्धि बनाना अति आवश्यक है। इसके लिए यम, नियम का ज्ञान व उनका पालन, योगासन, प्राणायाम, स्वाध्याय (वैदिक साहित्य का अध्ययन) और आत्म संयम आवश्यक है।

मन सम्बन्धित शुद्ध ज्ञान

मन ग्यारहवीं इन्द्रिय है। यह एक जड़ वस्तु है, मूढ़ है, अचेतन है लेकिन आत्मा के सम्पर्क के कारण सक्रिय रहता है। मन इन्द्रियों का कमाण्डर है। यह आत्मा से जुड़कर और बुद्धि के नियन्त्रण में कार्य करता है। यदि किसी व्यक्ति की बुद्धि स्थिर नहीं है तो उसके द्वारा मन पर नियन्त्रण करना असंभव है। वास्तव में मन विज्ञानमय कोश में लिये गये निर्णयों को कार्यान्वित करता है। इसका एक कार्य संकल्प और विकल्प करना भी है। मन का सम्बन्ध इच्छाओं, कामनाओं और वासनाओं से है। इसकी 3 स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ हैं-(1) यह समीप की चीजों को छोड़कर

दूर की वस्तुओं में रुचि लेता है, (2) सरल वस्तु से चलकर क्लिष्ट की ओर जाता है और (3) ज्ञात वस्तु से चलकर अज्ञात की तरफ आकर्षित होता है।

मन एक समय में एक ही कार्य कर सकता है दो नहीं। इसलिए प्राणायाम की कुछ क्रियाओं–भस्त्रिका, कुम्भक, स्तम्भवृत्ति प्राणायाम व ध्यान से इसे कुछ सीमा तक उपासना काल में संयम में रखा जा सकता है। मन को प्रसन्न करने व पूर्ण रूप से वश में करने के लिए निम्नलिखित उपायों का पालन करना चाहिए :-

(1) आत्मा को उसका भोजन देना अर्थात् अध्यात्मिक वैदिक ज्ञान को प्राप्त करके बुद्धि को सुबुद्धि बनाना (2) जीवन के दृष्टिकोण में सकारात्मक परिवर्तन लाना अर्थात् पारिवारिक सदस्यों व मित्रों के प्रति आसक्ति, राग, मोह, द्वेष कम करना, अपने कर्तव्यों का पालन करना, दूसरों के द्वारा पूर्ण रूप से सही कार्य करने व प्रशंसा की अपेक्षा न करना, आवश्यकतायें सीमित रखना, अन्यायपूर्वक/मोहवश पक्षपात न करना आदि, (3) सत्संग में भाग लेना व स्वाध्याय करना (4) यम नियम का पालन व आसन, प्राणायाम का अभ्यास करना, (5) ईश्वर भक्ति–निराकार परमात्मा की उपासना करना, वैदिक भजनों का गायन, चिंतन, मनन करना।

मन के तीन गुण/दोष हैं- (1) राग, (2) द्वेष, (3) मोह।

मन निम्नलिखित कारणों से अशुद्ध, दूषित व भ्रष्ट होता है :- (1) जीवन में यम नियम का पालन न करना, (2) मांसाहार करना, (3) नशा करना, (4) अश्लील साहित्य पढ़ना, (5) अश्लील फिल्में व सीरियल देखना, (6) अविद्या (अज्ञानता) का होना और (7) समय का सद् उपयोग न करना, (8) बुरे

लोगों की संगति करना, (9) समय नष्ट करना, (10) मोबाईल में विद्यमान फेसबुक और यू-टयूब सुविधा का दुरुपयोग करना।

मन को पवित्र रखने से शान्ति व सन्तुष्टि प्राप्त होती है। इसमें कोई सन्देह नहीं है।

मन है कि मानता नहीं - पूर्णतय: असत्य

''मन'' सेवक है-इसे अपना स्वामी न बनायें

मौसम, खान-पान, घटनायें, सुख-दु:ख, सामाजिक व्यवहार, संगति आदि के कारण मन की अवस्था (स्थिति) समय-समय पर बदलती रहती है। अत: मनुष्य को अपने आचरण और मन के स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान देना चाहिए। **मनुष्य को मन की कौन सी स्थिति चाहिए, यह उस पर निर्भर करता है-भाग्य पर नहीं, पूजा पर नहीं, मन पर नहीं और ईश्वर पर भी नहीं।** मन की स्थिति मनुष्य की सतोगुण, रजोगुण व तमोगुण की मात्रा पर निर्भर करती है जो साधक मन की उपासना करते हैं अर्थात् मन को संयम में रखना जानते हैं अर्थात् कब किस विषय का चिंतन करना है और कब उसका संज्ञान नहीं लेना है, वे मन पर विजय पा लेते हैं।

आइये! मन की पाँच अवस्थाओं (स्थितियों) को समझते हैं :-

(1) क्षिप्त अवस्था : इस अवस्था में मन अति चंचल होता है। मन में विचार जल्दी-जल्दी बदलते रहते हैं। मन संसार के कार्यों में ही व्यस्त रहता है। कभी भी सन्तुष्ट नहीं होता। इस स्थिति में रजोगुण की प्रधानता होती है।

(2) मूढ़ अवस्था : इस अवस्था में काम, क्रोध, लोभ, मोह की

प्रवृत्ति अधिक होती है। मन दूसरों को हानि पहुँचाने की कोशिश करता है। मन धर्म-अधर्म, कर्तव्य-अकर्तव्य के बारे में बहुत कम सोचता है। तमोगुण का प्रभाव अधिक होता है।

(3) **विक्षिप्त अवस्था :** इसमें मन धार्मिक कार्यों में रुचि लेने की कोशिश करता है। मन व्याकुल होकर कार्य करता है। ईश्वर भक्ति, ध्यान, उपासना में बैठने का प्रयत्न करता है लेकिन थोड़ी देर बाद ही एकाग्रता टूट जाती है। इसमें सतोगुण प्रधान है परन्तु रजोगुण और तमोगुण इस स्थिति को बिगाड़ते रहते हैं।

(4) **एकाग्र अवस्था :** इसमें आत्मा का मन पर पूर्ण संयम में होता है। मन इधर-उधर नहीं भागता है। आत्मा ईश्वरीय आनन्द का अनुभव करती है। प्राकृतिक तत्त्वों और आत्मा की अनुभूति होती है। सतोगुण प्रधान होता है। रजोगुण/तमोगुण पूर्णतया शान्त हो जाते हैं।

(5) **निरुद्ध अवस्था :** इसमें मन की सभी वृत्तियाँ स्थिर हो जाती हैं। ईश्वर की अनुभूति भी होने लगती है। मन काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार से मुक्त होता जाता है। पूर्णतय: शान्त होता जाता है।

नोट :- शरीर में सत, रज और तम - इन गुणों की मात्रा परिस्थिति के अनुसार घटती-बढ़ती रहती है। संकल्प के साथ यम नियम के पालन और तप से सतोगुण की मात्रा बढ़ाई जा सकती है। अत: ''मन है कि मानता नहीं-पूर्णतय: असत्य है।''

(12) सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण की सरल व्याख्या

मानव शरीर की रचना पाँच स्थूलभूतों (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश) से हुई है। इनका मूल आधार सत, रज और

तम-यह तीन सूक्ष्म परमाणु हैं, गुण हैं। यह तीन तत्त्व/भाव सभी जीवों में, कम या अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। सतो गुण, रजो गुण या तमो गुण में से किसी एक गुण की अधिकता या कमी-मनुष्य के स्वभाव और जीवन पर गहरा प्रभाव डालता है। इन गुणों की प्रकृति व स्वभाव को समझे बिना न तो कोई मनुष्य अपना स्वभाव व प्रकृति जान सकता है और न ही इन गुणों के सम्मिश्रण पर नियन्त्रण रख सकता है।

जब शरीर में सतोगुण प्रधान होता है तो रजोगुण और तमोगुण गौण रूप में रहते हैं। इसमें व्यक्ति की दिनचर्या व आचरण उत्तम प्रकार का होता जाता है।

जब रजोगुण प्रधान होता है तो सतोगुण और तमोगुण गौण हो जाते हैं। इस स्थिति में मनुष्य की सर्वोच्च इच्छा संसार की अधिकतर सुविधाओं को भोगने की होती है और वह अपनी सारी ऊर्जा व समय भौतिक सुविधाओं को प्राप्त करने में लगा देता है।

जब तमोगुण प्रधान होता है तो रजोगुण व सतोगुण गौण रूप से कार्य करते हैं। इस अवस्था में मनुष्य भौतिक शरीर को ही सब कुछ समझता है। अधिक लोभी होता है। दूसरों के मानव अधिकारों का सम्मान नहीं करता है।

शरीर में जिस गुण की अधिकता होती है, व्यक्ति उसी गुण से जाना जाता है। जैसे सतोगुण की प्रधानता पर सतोगुणी, रजोगुण की अधिकता पर रजोगुणी व तमोगुण की अधिकता पर तमोगुणी।

सतोगुण, रजोगुण व तमोगुण मनुष्य में, कम या अधिक मात्रा में जन्म से होते हैं। पूर्व जन्मों के कर्मों का प्रभाव इन पर रहता है। यही कारण है कि कुछ बच्चे जन्म से ही अति चंचल व चुस्त

होते हैं और कुछ बालकों में पाप कर्म की प्रवृत्ति त्रिगुण और पूर्व संस्कार के कारण बचपन में भी पायी जाती है।

सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण की विशेषतायें

मनुष्य की दिनचर्या, आचरण, संगति, परिस्थिति और सामाजिक वातावरण के अनुसार यह गुण घटते-बढ़ते रहते हैं। अतः आप आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय, यम-नियम का पालन, निराकार परमात्मा की भक्ति, ओ३म् व गायत्री जप, ध्यान, प्राण साधना और अच्छी संगति से सतोगुण को अपने अन्दर बढ़ाकर आदर्श जीवन जी सकते हैं।

आइये! इन त्रिगुणों की विशेषताओं को समझते हैं :-

(1) **सतोगुण की विशेषता :** यह ज्ञान का प्रतीक है। इसके प्रभाव से मनुष्य में प्रसन्नता, धैर्य, सन्तुष्टि, अध्यात्म में रुचि, अपनी भावनाओं और विचारों पर नियन्त्रण, परोपकार करने की इच्छा, क्षमा करने की प्रवृत्ति आदि गुण पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। मनुष्य यम-नियम का पालन, परोपकार व सात्विक भोजन में विश्वास रखता है।

सतोगुणी व्यक्ति की मृत्यु सुखदायी होती है। मृत्यु के बाद अति उत्तम योनि में उत्तम शरीर की प्राप्ति होती है।

(2) **रजोगुण की विशेषता :** यह राग, द्वेष, उत्साह और ऊर्जा का प्रतीक है। इसके प्रभाव में मनुष्य परिश्रमी लेकिन तनावपूर्ण, अहंकारी और क्रोधी होता है। उसकी यज्ञ, दान, धर्म में नाममात्र की रुचि होती है। साधारणतयः वह प्रेयमार्ग का अनुयायी होता है। राजसिक भोजन पसन्द करता है। यम नियम का ज्ञान होते हुए भी उनका पूर्णतया पालन नहीं करता है। रजोगुणी व्यक्ति की मृत्यु

तनावपूर्ण होती है। पुनर्जन्म में उत्तम योनि व उत्तम शरीर प्राप्त करने की उम्मीद कम होती है।

(3) **तमोगुण की विशेषता :** यह अज्ञानता का प्रतीक है। इसमें मनुष्य के सभी श्रेष्ठ गुण दब जाते हैं। मनुष्य केवल सांसारिक इच्छाओं में आसक्त, अहंकारी, स्वार्थी और लोभी होता है। वह तामसिक भोजन में रुचि लेता है और उसमें पाप कर्म (कम या अधिक) करने की प्रवृत्ति व स्वार्थ अधिक होता है। कर्तव्य-अकर्तव्य पर विचार कम करता है, यम-नियम का पालन करना व्यर्थ समझता है।

तमोगुणी व्यक्ति की मृत्यु अशांतमय होती है। पुनर्जन्म में मनुष्य योनि या तो मिलती नहीं अथवा बिना सुविधाओं के मिलती है।

आइये अपने सतोगुण को बढ़ायें, रजोगुण व इच्छाओं को नियंत्रित करें और तमोगुण को दृढ़तापूर्वक कम करें।

(12) अन्तःकरण की सरल व्याख्या

पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ (नेत्र, कान, जीभ, नाक, त्वचा) व पाँच कर्मेन्द्रियाँ (वाणी, हाथ, पैर, जननेन्द्रिय, गुदा) के समूह को वहिः करण कहते हैं। वहिःकरण की इन्द्रियों को मनुष्य देख सकता है, स्पर्श कर सकता है।

मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार के समूह को अन्तःकरण कहते हैं। इनको मनुष्य देख नहीं सकता है। केवल इनकी कल्पना कर सकता है। समाधि की स्थिति में ही इनका अनुभव हो सकता है।

शरीर की शुद्धि के साथ-साथ अन्तःकरण की शुद्धि करना, उसको पवित्र बनाना प्रत्येक मनुष्य का परम कर्तव्य है। आज समाज में जो भी अराजकता है, पाप कर्म है, दुःख हैं, वे मुख्य रूप से अन्तःकरण की अपवित्रता के कारण ही हो रहे हैं। इसी कारण आजकल अधिकतर मनुष्य वैदिक ज्ञान, धर्म-कर्म व सत्संग आदि में कम रुचि लेते हैं।

योगदर्शन के अनुसार यम नियम का ज्ञान व उनका पालन, परोपकार व समाज सेवा से ही अन्तःकरण (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार) की शुद्धि होती है। इसकी पवित्रता को बनाये रखा जा सकता है। आवश्यकता है दृढ़ संकल्प की, निरन्तर प्रयास की। अन्तःकरण की शुद्धि और धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में सफलता प्राप्त करने का एकमात्र उपाय है - निराकार ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना और पूर्ण रूप से यम-नियम का पालन करना। ये ही वैदिक मत है।

मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार आत्मा के निकटतम साधन हैं। आइये! इनके कार्यों का चिन्तन करते हैं।

चित्त का स्वरूप एवं कार्य

चित्त की उत्पत्ति अहंकार से हुई है। यह सत, रज और तम से बनी एक जड़ वस्तु है। सृष्टि के आरम्भ में यह प्रत्येक आत्मा को मिलता है। मुक्ति मिलने पर अथवा प्रलय होने पर ही यह नष्ट होता है।

यह सूक्ष्म शरीर का भाग है। आत्मा के साथ सदैव रहता है। यह चेतन इसलिए दिखाई देता है क्योंकि इस पर आत्मा का

प्रतिबिम्ब पड़ रहा है। इसलिए यह सदा चलायमान, अस्थिर व चंचल बना रहता है।

यम, नियम, आसन, प्राणायाम व प्रत्याहार (इन्द्रियों पर संयम) की साधना से चित्त धीरे-धीरे निर्मल हो जाता है, शान्त रहने लगता है। इसके संस्कार व वासनाएं समाप्त होने लगती हैं।

सभी प्रकार की वासनायें, संकल्प, इच्छायें और विचार-जो मनुष्य के अन्दर पैदा होते हैं या एकत्र होते हैं, उन सबका यह भण्डार है। हमारे सभी प्रकार के कर्मों के संस्कार भी इसमें जमा होते रहते हैं। वास्तव में यह एक अभिलेखी (Record Keeper) है।

देखी हुई, सुनी हुई, कही गई बातों और किये गये कर्मों को बार-बार स्मरण करना - इसका स्वभाव है। फलस्वरूप, अतीत की उपरोक्त क्रियाओं के अनुभव के बाद, उसी प्रकार की बातों की ओर इसका लगाव बढ़ता जाता है। लगाव के कारण इसको फिर कोई अन्य बात अच्छी नहीं लगती। इस प्रकार चित्त में अच्छी या बुरी बात टिक जाने के बाद उसे पुनः करने की प्रवृत्ति होती है।

चित्त एक समय में, विभिन्न स्थानों में विद्यमान रह सकता है, विभिन्न विचार या योजनाएं बना सकता है। इसके विपरीत "मन" एक समय में एक ही कार्य कर सकता है।

ईश्वर भक्ति, उपासना व ध्यान साधना में चित्त का सकारात्मक व पवित्र होना अति आवश्यक है। बुरी संगत, टेलीविजन का अधिक देखना, मोबाईल पर नकारात्मक दृश्य देखना, फेस बुक व यू-टयूब का उचित प्रयोग न करना, समाचार

पत्र व पुस्तकों में अश्लील साहित्य को पढ़ना, समय का दुरुपयोग करना, व्यर्थ के विषयों में रुचि लेना-ये सब क्रियायें चित्त की निर्मलता को दूषित करती हैं, इनसे बचना चाहिए।

''चित्त'' की पाँच अवस्थायें (स्थितियाँ)

''मन'' की तरह ''चित्त'' की भी पाँच अवस्थायें हैं। ''मन'' व ''चित्त'' की अवस्थायें लगभग एक सी हैं।

(1) **क्षिप्त चित्त :** इस अवस्था में चित्त अधिक चंचल होता है। रजः और तमः गुण अधिक होने के कारण चित्त किसी एक विषय में स्थिर नहीं रहता है। भौतिक सुख के लिए वह विभिन्न विषयों को उजागर करता रहता है। अपना अधिकतर धन व समय व्यक्ति भौतिक सुख को पाने और उसका भोग करने में व्यतीत करता है। ऐसा व्यक्ति कभी भी संतोषजनक आध्यात्मिक उन्नति नहीं कर सकता है।

(2) **मूढ़ चित्त :** मूढ़ चित्त वाले व्यक्तियों की बुद्धि मलिन होती है। इस अवस्था में तमोगुण का प्रभाव अधिक होता है। ऐसे व्यक्ति शरीर के सुख को ही सब कुछ समझते हैं और काम, क्रोध, लोभ, मोह, निद्रा, आहार, भोग विलास वाला ही जीवन व्यतीत करते हैं।

(3) **विक्षिप्त चित्त :** विक्षिप्त चित्त की स्थिति में सतोगुण प्रधान होता है। ऐसे व्यक्ति अपने चित्त को किसी भी विषय में केन्द्रित रख सकते हैं (विशेषकर धार्मिक विषय में) ध्यान में सफलता पा सकते हैं। अच्छे साधक बन सकते हैं।

(4) **एकाग्र चित्त :** ऐसे व्यक्तित्व वाले व्यक्ति अपने चित्त को संयम में रखते हैं। इनका ध्यान पूर्णतयः ईश्वर-स्तुति-प्रार्थना- उपासना में लग जाता है। ऐसे व्यक्ति ईश्वर उपासना के अतिरिक्त समाज सेवा,

साहित्य सेवा, लेखन या अन्य श्रेष्ठ कार्यों में भी पर्याप्त रुचि लेते हैं।

(5) निरुद्ध चित्त : जब चित्त पूर्णतयः शान्त रहता है, वह किसी प्रकार की चिन्ता नहीं करता है, सुख-दु:ख में प्रभावित नहीं होता है, ऐसी स्थिति को निरुद्ध चित्त कहते हैं। निरुद्ध चित्त वाले व्यक्तियों को ध्यान साधना में सफलता जल्दी मिलती है।

चित्त को एकाग्र बनाने के उपाय

(1) जो लोग सुखी हैं, उनके साथ मित्रता रखें, उनके साथ द्वेष, ईर्ष्या न करें।

(2) जो लोग दुखी हैं, उन पर करुणा करें। यथा संभव व यथायोग्य उनकी सहायता करें। उनके दु:खों को दूर करने की कोशिश करें।

(3) जो लोग पुण्य के मार्ग पर चल रहे हैं, उनके लिए प्रसन्नता का भाव रखें।

(4) जो लोग अन्याय और पाप के मार्ग पर चल रहे हैं, जिनको धर्म के मार्ग पर लाने का प्रयत्न सफल नहीं हुआ, उनसे दूर रहें। ऐसे रहो जैसे वे तुम्हारे लिए संसार में हैं ही नहीं, अर्थात् उनके साथ उपेक्षा का व्यवहार करो।

(5) सदा स्वस्थ रहने का प्रयत्न करें और सदा प्रसन्न रहें।

मन और चित्त को संयम में रखने के उपाय

निम्नलिखित उपायों से "मन" व चित्त" को स्थायी रूप से संयम में रखा जा सकता है।

(1) यम-नियम का पालन : योग दर्शन में बताये गये प्रथम दो अंग -यम (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह) और नियम (शुद्धि, स्वाध्याय, सन्तोष, तप एवं ईश्वर प्रणिधान) का

पालन करने से धीरे-धीरे सभी इन्द्रियों पर नियंत्रण होता जाता है। हमारा आचरण शुद्ध होता जाता है। फलस्वरूप मन व चित्त शान्त होते जाते हैं।

(2) चित्त को एकाग्र करने हेतु बताये गये पाँच उपायों (पृष्ठ -46) का जीवन में पालन करने से मनुष्य की दिनचर्या में तनाव नहीं आता है। समाज में सभी के साथ सम्बन्ध अच्छे बने रहते हैं।

(3) प्राणायाम : योग दर्शन में बताये गये - प्रथम तीन प्राणायाम के साथ-साथ नाड़ी शोधन प्राणायाम का नित्य अभ्यास करने से मन और चित्त को संयम में रखा जा सकता है। यदि ओ३म्, गायत्री मन्त्र का जप (अर्थ सहित) और वैदिक सन्ध्या-प्राणायाम और प्राण साधना के साथ की जाये तो मन व चित्त, उपासना काल में धीरे-धीरे स्थिर होता चला जाता है। चंचलता समाप्त होती जाती है। इसका प्रभाव मनुष्य के आचरण और दिनचर्या पर भी पड़ता है। मनुष्य तनाव मुक्त होता जाता है।

(4) ध्यान : ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव का प्रतिदिन चिंतन, मनन करना, ईश्वर के उपकारों का धन्यवाद देना और ईश्वर की आज्ञाओं का पालन करना ध्यान के अंतर्गत आता है। प्राण साधना के साथ ध्यान का अभ्यास व नियमित रूप से प्रातः सायं ध्यान में बैठने से सभी मानसिक रोगों - काम, क्रोध, लोभ, मोह, द्वेष, अहंकार से धीरे-धीरे छुटकारा मिलता जाता है।

(5) परोपकार : समाज सेवा में रूचि, गरीबों की यथाशक्ति सहायता और दान देने की प्रवृत्ति से मन प्रसन्न होता है, समाज की उन्नति होती है। इससे भी मन व चित्त को संयम में रखने में सहायता मिलती है।

बुद्धि को सुबुद्धि बनाने के वैदिक उपाय

बुद्धि एक मानसिक शक्ति है जो वस्तुओं एवं तथ्यों को समझने व उनसे सम्बन्धित निर्णय लेने में आत्मा का सहयोग करती है।

मनुष्य अपनी दिनचर्या में कर्म करने के लिए समय-समय पर जो भी निर्णय लेता रहता है, वे सभी निर्णय बुद्धि द्वारा लिये जाते हैं। बुद्धि भी जड़ है, परन्तु आत्मा के सम्पर्क में आकर यह सक्रिय बनी रहती है।

कहा जाता है कि जिसमें बुद्धि है, वही बलवान है। बुद्धि (Intelligence) के कारण ही मनुष्य अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ माना जाता है। बुद्धि ही मन को नियंत्रण में रखती है। आइये! जानते हैं बुद्धि के प्रकार, इसके बिगड़ने के कारण और बुद्धि को सुबुद्धि बनाने के वैदिक उपाय।

बुद्धि को तीन श्रेणी में बाँट सकते हैं -

(1) बुद्धि : ऐसी बुद्धि जिससे हम अपने जीवन को चलाने के लिए समय-समय पर उपयुक्त निर्णय लेते हैं। यह भी चार प्रकार की होती है- (1) बुद्धि, (2) मेधा बुद्धि, (3) ऋतम्भरा बुद्धि और (4) प्रज्ञा बुद्धि।

(2) कुबुद्धि : ऐसी बुद्धि जिसके द्वारा हम अपने स्वार्थ के लिए समाज व अन्य मनुष्यों के हित का ध्यान नहीं रखते हैं।

(3) सुबुद्धि : ऐसी बुद्धि जो हमें निष्कर्म व सुकर्म करने के लिए प्रेरित करती है।

बुद्धि के बिगड़ने (भ्रष्ट होने) के मुख्य कारण -

(1) बुरी संगत, (2) असात्विक आहार, (3) अभिमान

(अहंकार), (4) इन्द्रियों का वश में न होना, (5) भ्रम, (6) अश्लील साहित्य को पढ़ना, (7) आधुनिक दूषित वातावरण विशेषकर फेस बुक एवं यू-टयूब का दुरुपयोग और (8) टेलीविजन व मोबाईल पर दिखाये जाने वाले अश्लील व नकारात्मक चित्र/विषय व दूषित सिनेमा।

बुद्धि को सुबुद्धि बनाने के उपाय - (1) अच्छी संगति, (2) यम नियम का पालन, (3) सात्विक आहार, (4) आर्ष (वैदिक) ग्रन्थों का स्वाध्याय, (5) सत्संग, (6) भ्रम या वहम से बाहर निकलना, (7) योग, प्राणायाम और (8) परिश्रम और सतोगुण को बढ़ाना।

बुद्धि और भाग्य में अन्तर है। बुद्धि से भाग्य बनता है। बुद्धि न हो या इसका सही प्रयोग न किया जाए तो सौभाग्य भी दुर्भाग्य में बदल जाता है। अच्छे कर्म करने के लिए सुबुद्धि की जरूरत होती है। अतः बुद्धि भाग्य से ज्यादा महत्व रखती है।

"अधिकतर बुराइयों के होने का कारण बुद्धि बिगड़ना ही है।"

(13) कर्म विज्ञान सम्बन्धित सामान्य ज्ञान

कर्म करने से पहले कर्म सम्बन्धित शुद्ध ज्ञान को जानना आवश्यक है। उसका मानना भी जरूरी होता है। फिर उसके अनुसार कर्म करना या उसके विपरीत कर्म करना मनुष्य पर निर्भर करता है। हाँ, कर्म का फल देने का अधिकार ईश्वर आधीन है।

कुछ मनुष्य कर्म तो करते हैं, लेकिन वैदिक ज्ञान के अभाव में दिशा हीन हो जाते हैं। उनका कर्म या तो दंडनीय बन जाता है अथवा उनको उसका पूर्ण लाभ नहीं मिल पाता है। इसलिए

वैदिक ज्ञान के अनुसार दृढ़ निश्चय से किया गया कर्म ही उत्तम होता है। लाभकारी होता है।

कर्म क्या है? कर्म कितने प्रकार के होते हैं? क्या अच्छे और बुरे कर्मों का फल अलग-अलग मिलता है? क्या पाप कर्म माफ हो सकते हैं? क्या उनका समायोजन (Adjustment) संभव है? आइये! इन प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए, वेदों की दृष्टि से, कर्म विज्ञान सम्बन्धित, सामान्य ज्ञान का चिंतन मनन करते हैं।

जीवात्मा सदा सुख की प्राप्ति और दु:ख से छुटकारा पाना चाहता है। इसके लिए वह जो भी चेष्टा या प्रयत्न, मन, इन्द्रियों या शरीर से करता है, उसे कर्म कहते हैं।

सृष्टि के नियमानुसार जीवात्मा कर्म करने में स्वतंत्र है और कर्म का फल भोगने में परतन्त्र है। जीवात्मा अल्पज्ञ है। इसका सामर्थ्य बहुत कम है। कोई भी जीवात्मा अपने बुरे कर्मों के फल को भोगना या प्राप्त करना नहीं चाहता है। इसलिए परमात्मा ने कर्म फल व्यवस्था अपने अधिकार में ले रखी है। हाँ! जीवात्मा के कुछ अशुद्ध कर्मों (पाप कर्म) का दंड उसे परिवार और समाज में अच्छी व्यवस्था बनाये रखने के लिए, माता-पिता, गुरु और न्यायपालिका भी देते हैं।

शुभ-अशुभ कर्मों के परिणाम

अच्छे अर्थात् शुभ कर्म करने से मनुष्य के संस्कार अच्छे बनते हैं। चित्त की शुद्धि होती जाती है। मन प्रसन्न रहता है और ईश्वर भक्ति में लगता है। समाज में मनुष्य का आदर सम्मान होता है। मृत्यु के बाद पुनर्जन्म में भी मनुष्य को अच्छी योनि में पूर्ण आयु व अच्छे भोग मिलते हैं।

लोभ व मोह के लालच में मनुष्य पाप कर्म करता है। बुरे अथवा पाप कर्म करने से चित्त में बुरे संस्कार बनते हैं। मनुष्य अधर्म के रास्ते पर चलना शुरू कर देता है। अधर्म से धन कमाता है। फिर दु:खों को भोगता है। उसका ईश्वर साधना में मन नहीं लगता है। पर्याप्त धन होने के बाद भी मनुष्य और उसका परिवार अशान्त और तनावपूर्ण जीवन व्यतीत करता है। सन्तान पर इसका नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। अन्त में मृत्यु के बाद आत्मा विभिन्न प्रकार की नीच योनियों में जाकर कष्ट सहता है।

वैदिक कर्म फल व्यवस्था के अनुसार अच्छे और बुरे कर्मों का फल जीवात्मा को सुख-दु:ख के रूप में-इस जन्म में अथवा अलगे जन्मों में अलग-अलग मिलता है। यहाँ पर जमा और घटा (Plus Minus and adjustment) का सिद्धान्त लागू नहीं होता है। **दान, महापुरुषों व गुरुओं की पूजा, ग्रह या देवता पूजा, वास्तु शास्त्र एवं ज्योतिष के उपाय, मजार पूजा, तीर्थ स्थान दर्शन, तीर्थस्नान अथवा ईश्वर प्रार्थना से भी बुरे कर्मों के फल को कम या नष्ट नहीं किया जा सकता है।**

वैदिक मान्यता के अनुसार मनुष्य के शुभ/अशुभ कर्मों से उसके सात जन्म और सात पीढ़ियाँ प्रभावित होती हैं अर्थात् मनुष्य के शुभ कर्मों के फल का लाभ धीरे-धीरे अगले सात जन्मों तक तो उसको मिलता ही है-उसकी अगली सात पीढ़ियों में पैदा होने वाली सन्तान भी इसमें भागीदार बनती है।

इसके विपरीत अशुभ कर्मों का फल दु:ख के रूप में मनुष्य और उसकी अगली पीढ़ियों को भी सात जन्म तक सहना

पड़ता है। यही कारण है कि अधर्म से एकत्रित किया हुआ धन दो या तीन पीढ़ियों के बाद स्वयं ही नष्ट हो जाता है। अतः मनुष्य को अष्टांग योग (विशेषकर यम, नियम) का पालन जीवन में अवश्य करना चाहिये। अधर्म की कमाई से बचना चाहिए।

शुभ-अशुभ कर्म सम्बन्धित शुद्ध ज्ञान

जीवन में कर्म का महत्व सर्वविदित है। कर्म फल के अनुसार ही मनुष्य उपयुक्त योनि में जन्म, सुख, दुःख पाता है। (देखें पृष्ठ 14-15) लेकिन समाज में देखा जाता है कि कुछ मनुष्य जाने-अनजाने में अनेक प्रकार के नगण्य (Negligible) कर्म करते रहते हैं। उनको मालूम ही नहीं होता कि उनके ये कर्म अशुभ/पाप कर्म की श्रेणी में आते हैं। फलस्वरूप वे पाप के भागीदार (कम या अधिक मात्रा में) बनते जाते हैं। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति का दायित्व है कि उसको शुभ-अशुभ कर्मों का पूर्ण रूप से वैदिक ज्ञान होना चाहिए ताकि वह पाप कर्मों से स्वयं बच सके, अपने परिवार का मार्गदर्शन कर सके और अपना जीवन सुखमय बना सके।

कर्म मुख्यतः मन, वाणी या शरीर से होता है।

मन द्वारा किये जाने वाले शुभ कर्म -

(1) दया, (2) अस्पृहा (अनिच्छा/अरूचि) (3) आस्तिकता (ईश्वर में विश्वास)

मन द्वारा किये जाने वाले अशुभ कर्म -

(1) द्रोह (द्वेष), (2) स्पृहा (रूचि) (3) नास्तिकता (ईश्वर में विश्वास न होना)

वाणी द्वारा किये जाने वाले शुभ कर्म -

(1) सत्य बोलना, (2) हितकर बोलना, (3) मीठा बोलना

वाणी द्वारा किये जाने वाले अशुभ कर्म -

(1) झूठ बोलना, (2) अहितकर बोलना, (3) कठोर बोलना और (4) व्यर्थ बोलना।

शरीर द्वारा किये जाने वाले शुभ कर्म -

(1) दान देना, (2) सेवा करना और (3) रक्षा करना।

शरीर द्वारा किये जाने वाले अशुभ कर्म -

(1) हिंसा करना, (2) चोरी करना और (3) व्यभिचार करना (दुष्कर्म/बदचलनी/अनैतिकता करना)

फल की दृष्टि से कर्म दो प्रकार के होते हैं :-

(1) निष्काम कर्म :- जो कर्म बिना फल की इच्छा से किये जाते हैं, उन्हें निष्काम कर्म कहते हैं। कोई कर्म निष्काम है अथवा सकाम-यह कर्ता के उद्देश्य/इच्छा पर निर्भर करता है। यदि उद्देश्य लौकिक फल की प्राप्ति नहीं है तो ऐसा कर्म निष्काम कर्म की श्रेणी में आयेगा।

निष्काम कर्म सदैव अच्छे होते हैं-बुरे नहीं। इनका फल इस जीवन में ईश्वर अनुभूति या ईश्वर आनन्द अथवा समाधि अवस्था की प्राप्ति के रूप में मिलता है अथवा इसका फल मृत्यु के बाद बिना जन्म लिए मोक्ष अवस्था में भोगा जाता है। ये कर्म मनुष्य को बन्धनों से छुटकारा दिलाते हैं।

निष्काम कर्म करने वाला व्यक्ति फल के अच्छे या बुरे होने पर अप्रभावित रहता है। वह सुख-दु:ख की स्थिति से परे होता है।

(2) सकाम कर्म - जिन कर्मों का उद्देश्य लौकिक फल (धन, यश, सन्तान आदि) प्राप्त करना होता है, उन्हें सकाम कर्म कहते हैं। सकाम कर्म अच्छे या बुरे हो सकते हैं। इसलिए इनका

फल सुख या दु:ख होता है। इसके फल को इस जीवन में अथवा मृत्यु के बाद पुनर्जन्म में किसी भी योनि में (कर्म के अनुसार) भोगा जाता है।

सकाम कर्म तीन प्रकार के होते हैं :-

(क) **अच्छे कर्म** :- सेवा, दान, परोपकार करना आदि।

(ख) **बुरे कर्म** :- चोरी करना, असत्य बोलना, धोखा देना आदि।

(ग) **मिश्रित कर्म** :- खेती करना आदि। इसमें पाप कर्म और पुण्य कर्म दोनों विद्यमान रहते हैं।

एक अन्य दृष्टि से कर्म चार प्रकार के होते हैं :-

(1) कर्म :- वे कर्म जो हम दूसरों के उपकार के लिए करते है, जैसे गरीबों और दु:खियों की सहायता करना, गरीबों के लिए अस्पताल, स्कूल, गुरुकुल, अनाथालय खोलना, **(2) अकर्म** :- वे सभी क्रियायें जो व्यक्ति अपने जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए करता है जैसे खाना, पीना, धर्मानुसार कमाना, ईश्वर स्तुति, प्रार्थना, उपासना करना आदि। **(3) विकर्म** :- ऐसी क्रियायें जिनका उद्देश्य दूसरों को हानि पहुँचाना होता है जैसे दूसरों से लड़ना या दूसरों को लड़ाना, घृणा करना या घृणा पैदा करवाना, दूसरों को नीचा दिखाना, अपमान करना आदि। **(4) सकर्म** :- ऐसी क्रियायें जिनसे स्वयं के साथ-साथ दूसरों को भी लाभ हो, जैसे दान देना, हवन करना, दूसरों का सही मार्गदर्शन करना आदि।

कर्मों के परिणाम अथवा उनसे मिलने वाले ''फल''

मनुष्य के जैसे सकाम कर्म होंगे, उन्हीं के अनुपात में/अनुसार

उसको कुछ कर्मों का फल इसी जन्म में और अधिकतर शेष कर्मों का फल मृत्यु के उपरान्त (पुनर्जन्म पर) जाति, आयु और भोग के रूप में सुख, दु:ख निम्न प्रकार से मिलता है :-

(1) जाति :- मनुष्य की (पूर्ण अंग-अधूरे अंग, स्वस्थ्य-अस्वस्थ शरीर, अमीर घर-गरीब घर, शिक्षित-अशिक्षित परिवार, विकसित- अविकसित राष्ट्र, देश, शहर, गाँव, जंगल-सब कुछ कर्मोंनुसार ही मिलता है। यही मापदंड पशु, पक्षी, कीट, वृक्ष, वनस्पति की जाति पाने पर लागू होता है। **(2) आयु :-** जिस जाति में आत्मा को पुनर्जन्म मिलता है, ईश्वर उसकी प्राकृतिक आयु भी निश्चित करता है जैसे मनुष्य 100 वर्ष, कुत्ता 10 वर्ष आदि। **(3) भोग :-** विभिन्न प्रकार का भोजन, वस्त्र, मकान आदि साधनों की प्राप्ति भी प्रत्येक जाति में जन्म लेने पर निश्चित हो जाती है। उदाहरण सड़क का कुत्ता और अमीर घर में पलने वाला कुत्ता आदि।

''जन्म अनेक होते हैं। यदि एक ही जन्म माने तो ईश्वर न्यायकारी न रह सकेगा। ईश्वर तो स्वभाव से पवित्र और न्यायकारी है। वह पूर्व जन्म के पाप-पुण्य के बिना किसी को भी सुख-दु:ख नहीं दे सकता है।'' - महर्षि दयानन्द, सत्यार्थ प्रकाश, नवम समुल्लास

जन्म लेना आत्मा के वश में नहीं है। आत्मा अपने कर्मफल के अनुसार और परमात्मा की व्यवस्था से संसार में उपयुक्त योनि में जन्म लेता है। मनुष्य स्वयं न तो अपनी योनि, आयु, भोग निश्चित कर सकता है और न ही किसी योनि में जन्म लेते समय अपने माता-पिता, परिवार या स्थान को चुन सकता है।

पूर्व जन्म में किये गये कर्मों के अनुसार ही विभिन्न आत्मायें मनुष्य योनि मिलने पर भी गरीब/अमीर, शिक्षित/अशिक्षित, विकसित/अविकसित स्थान में पूर्ण/अपूर्ण अथवा स्वस्थ/अस्वस्थ शरीर पाकर जन्म ले रही हैं। और इस प्रकार सुख-दु:ख भोग रही हैं। अत: पूर्व जन्मों के कर्मों के अनुसार ही मनुष्य को यह मानव देह और सुविधाजनक परिस्थितियाँ मिलती हैं। इसी प्रकार पशु, पक्षी, कीट, पतंग, वृक्ष आदि को भी उनके कर्मानुसार यह शरीर मिले हैं।

नि:संदेह, इस वर्तमान जीवन में किये गये अच्छे या बुरे कर्मों के अनुसार ही मनुष्य को अगला जन्म, शरीर व स्थान मिलेगा। यही ईश्वर का अटल नियम है। वेदों का सन्देश है।

ज्ञान ही जीवन है - अज्ञान मृत्यु है

विद्वान और ज्ञानी ज्ञान को दो भागों में बाँटते हैं।

(1) **भौतिक (व्यवहारिक) ज्ञान :** प्राकृतिक तत्त्वों के संयोग से उत्पन्न धन, सम्पत्ति, जमीन, जायदाद तथा भौतिक वस्तुओं का ज्ञान इस श्रेणी में आता है। इसे "अपर विद्या" या "अविद्या" भी कहते हैं।

आज के युग में आधुनिक भौतिक ज्ञान को प्राप्त करना अति आवश्यक है क्योंकि भौतिक विकास के अभाव में अच्छा और सुरक्षित जीवन जीना असंभव है। वेद और उपनिषद भी मनुष्य को समाज हित में उत्तम भौतिक विकास करने की प्रेरणा देते हैं। परन्तु संसार में आजकल पर्याप्त वैज्ञानिक और आर्थिक उन्नति के बाद भी सभी जगह अशान्ति ही अशान्ति दिखायी देती

है। इसका मुख्य कारण है कि वर्तमान मनुष्य भौतिकवाद पर अधिक से अधिक ध्यान दे रहा है, लोभ व लालच में आकर प्रकृति के नियमों और यम-नियम का उल्लंघन कर रहा है। आध्यात्मिक ज्ञान की उपेक्षा कर रहा है।

(2) **आध्यात्मिक (पारमार्थिक) ज्ञान :** वेद और आर्ष ग्रन्थों को पढ़ना, उनका चिंतन-मनन करना, उनके अनुसार जीवन यापन करना आध्यात्मिक ज्ञान कहलाता है। इसे ''पर विद्या'' या ''विद्या'' भी कहते हैं।

आध्यात्मिक ज्ञान के अनुसार ईश्वर, जीव व प्रकृति के गुण, कर्म, स्वभाव को जानना और वेदानुसार आचरण करने से जीवन में शान्ति की प्राप्ति होती है। ईश्वरीय आनन्द की अनुभूति होती है। वास्तव में यही जीवन का लक्ष्य है।

मस्तिष्क द्वारा अर्जित भौतिक ज्ञान (अविद्या) शरीर के मृत होने पर ही नष्ट हो जाता है। परन्तु मनुष्य द्वारा अर्जित आध्यात्मिक ज्ञान और उसके अनुसार किये गये शुभ और निष्काम कार्य के संस्कार सूक्ष्म शरीर का हिस्सा बनकर जीवात्मा के साथ सदैव रहते हैं व अच्छा फल देते हैं।

दुष्कर्मों का एक मुख्य कारण - अज्ञानता

आध्यात्मिक अज्ञानता, गलत शिक्षा प्रणाली, बढ़ती महंगाई, बेरोजगारी और भौतिक सुविधाओं की होड़ मनुष्य को अधर्म से धन कमाने और शीघ्र ही अमीर बनने के लिए प्रेरित कर रही है। अधर्म से धन कमाने और भोगवाद की प्रवृत्ति सभी प्रकार के अपराधों व पाप कर्मों की जननी है। देश की अव्यवस्थित कानून व न्याय व्यवस्था, राजनैतिक अपराधीकरण व भ्रष्टाचार भी

सामाजिक और व्यक्तिगत अपराधों को बढ़ावा दे रहे हैं। समाज में सभी प्रकार के दुष्कर्म, कुकर्म, अपराध व अनैतिक व्यवहार के अनेक कारण हैं। इनमें से एक मुख्य कारण है- कर्मफल व्यवस्था के नियमों की अज्ञानता और वैदिक ज्ञान का अभाव। **अविद्या-ऽस्मितारागद्वेषभिनिवेशाः क्लेशाः।।** (योग दर्शन)

योगदर्शन के अनुसार निम्न पाँच प्रकार के क्लेश हमारे चरित्र में नकारात्मक विकृति का निर्माण करते हैं। क्रोध, वासना, घृणा, ईर्ष्या, लोभ, अभिमान जैसे चारित्रिक लक्षण इन्हीं निम्न पाँच क्लेशों से आते हैं।

(1) अविद्या और मिथ्या ज्ञान : जैसे को तैसा न मानना। यह समस्त दोषों की जननी है।

(2) अस्मिता (अहंकार) : अहंकार न केवल स्वयं में घातक है, बल्कि अनेक दूसरे दुर्गुणों का पोषक भी है। अहंकारी व्यक्ति का आचरण दंभपूर्ण हो जाता है, उसका विवेक मर जाता है। उसका शीघ्र पतन निश्चित है।

(3) राग (विशेष प्रेम) : सुख और उसके साधनों के प्रति आकर्षण, तृष्णा, प्रेम और लोभ का नाम राग है। सुख मिलना बंद-दु:ख शुरू।

(4) द्वेष (घृणा) : यह राग का विपरीत है। दु:ख या दु:खजनक वृत्तियों के प्रति क्रोध अथवा घृणा की अनुभूति को द्वेष कहते हैं।

(5) अभिनिवेश अर्थात् शरीर से प्रीति (प्रेम) एवं मृत्यु का भय : प्रत्येक प्राणी चाहता है कि वह सदैव जीवित रहे। उसकी मृत्यु न हो। लेकिन मृत्यु का भय उसे डराता रहता है। इसी कारण वह न्याय-अन्याय, धर्म-अधर्म आदि कर्म भी करता रहता है।

दुष्कर्मों से समाज को मुक्त कराने के लिए सरकार द्वारा

देश की कानून व्यवस्था, राजनैतिक अपराधीकरण भ्रष्टाचार और शिक्षा प्रणाली पर विशेष ध्यान देना अनिवार्य है। सामाजिक स्तर पर यम-नियम का पालन और वैदिक संस्कृति की जागरूकता अपेक्षित है।

भोग और आयु की मात्रा - पूर्वजन्म के कर्मोनुसार

एकशतं लक्ष्म्यो मर्त्यस्य सांक तन्वा जनुषोऽधि जाताः।
तासां पापिष्ठा निरितः प्रहिष्मः शिवा अस्मिभ्यं जातवेदो नि यच्छ।।

(अथर्ववेद का0 7/सू0 115/मं0 3)

भावार्थः मनुष्य अपने पूर्व जन्मों के कर्म फलों से शुभ और अशुभ लक्षणों सहित जन्मता है। जो मनुष्य परमात्मा की आज्ञा में चलते हैं, वे क्लेशों को मिटाकर सुख भोगते हैं।

सांसारिक न्यायालयों में भिन्न-भिन्न अपराधों की सजा (दण्ड) अलग-अलग हैं। इसी प्रकार परमात्मा की न्याय व्यवस्था से भिन्न-भिन्न किये जा चुके कर्मों (कृत कर्म) का दण्ड और फल भी भिन्न-भिन्न निर्धारित है।

पूर्व जन्म में कृत कर्मों के तथा यथायोग्य कर्मफल भोगने के लिए ही कोई आत्मा मनुष्य रूप में विकसित देश के धनाढ्य के यहाँ और कोई निर्धन के यहाँ, विभिन्न प्रकार की अवस्थाओं को भोगने हेतु शरीर प्राप्त करती है।

मनुष्य ज्ञान के अभाव और अज्ञान के वशीभूत हो, क्षणभंगुर सुख भोगने की लालसा से ही अधार्मिक, अनैतिक और अन्यायपूर्ण कर्म करके, अपने पैरों पर अपने हाथों कुल्हाड़ी चलाकर अपनी आत्मा को अधोगति को प्राप्त कराकर, उसे पापों से संस्कारित कर, अपने प्रारब्ध अर्थात् भाग्य का स्वयं निर्माता बनता है। परिणाम में वह एक ही परिवार तथा एक ही माता-पिता की सन्तान होकर

भी भिन्न-भिन्न परिस्थितियों और अवस्थाओं को प्राप्त होता है।

आयु प्रदान करने वाले कर्म

किसी संकटग्रस्त मनुष्य या जीव के प्राणों की रक्षा करने वाले कर्म आयु प्रदान करने वाले कर्म कहलाते हैं। बकरा, मुर्गी या अन्य पशु का मांस भक्षण हेतु जीवों की हत्या करना या अण्डे का उपभोग करना अल्प आयु वाले कर्म कहलाते हैं।

''भोग''और ''आयु'' निश्चिम करने हेतु वैदिक नियम

भोग प्रदान करने वाले कर्म

सामर्थ्य के अनुसार अधिक से अधिक खाद्य सामग्री द्वारा, अन्य सुख तथा आराम प्रदान करने वाले पदार्थों के द्वारा, जीव मात्र की सेवा करना इस श्रेणी में आता है। उदाहरणतः भूखे, असहाय अथवा गरीब को अन्न/भोजन का दान देना, पशु-पक्षियों को खाना देना।

''भोग'' और ''आयु'' निश्चित करने हेतु वैदिक नियम

नियम 1 :- यदि पूर्व जन्मों में भोग प्रदान कर्मों की संख्या कम और आयु प्रदान करने वाले कर्मों की संख्या अधिक है तो प्राप्त आयु (साधारण प्राकृतिक आयु) लम्बी होगी। इसकी पहली अवस्था में मनुष्य को कड़ी मेहनत करने के उपरान्त भी मुश्किल से जीविका के साधन उपलब्ध होंगे।

इसकी दूसरी अवस्था में प्रचुर मात्रा में भोग सामग्री उपलब्ध होने के उपरान्त भी किसी रोग या विशेष परिस्थिति के कारणवश, मनुष्य प्राप्त भोग सामग्री का उपभोग करने में असमर्थ रहेगा। उदाहरण: कई धनाढ्य मनुष्य जटिल रोग के कारण मनोवांछित खाद्य आदि सामग्री का उपभोग नहीं कर पाते हैं। कई बार तो दूध

या फलों का रस भी उनको नहीं पचता है।

इस प्रकार पूर्व जन्मों के दीर्घ आयु प्रदान कर्मों के प्रधान होने के कारण शरीर में श्वास का आने-जाने का क्रम दीर्घ काल तक चलता रहता है परन्तु ऐसे मनुष्य भोग प्रधान कर्मों का आयु प्रधान कर्मों के साथ सामंजस्य न होने से प्राप्त भोग सामग्रियों को नहीं भोग पाते हैं।

नियम 2 : यदि पूर्व जन्म के कृत कर्म भोग प्रधान हैं और आयु प्रदान कर्म अल्प आयु प्रधान हैं तो ऐसे मनुष्य अल्प अवस्था में धनवान एवं साधनों से सम्पन्न होकर अल्प आयु में ही मृत्यु को प्राप्त होते हैं।

नियम 3 :- यदि पूर्व जन्मों में ''कृत कर्म'' - आयु और भोग बराबर-बराबर प्रदान करने वाले हैं तो सम्बन्धित आत्मा किसी भद्र कुल में मनुष्य जन्म प्राप्त कर, सामान्य अथवा विशेष (कर्मानुसार) प्रकार के भोग तथा सामान्य आयु प्राप्त, जीवन सामान्य प्रकार से व्यतीत कर, सामान्य आयु को प्राप्त करता है।

नियम 4 :- यदि पूर्व जन्मों में ''कृत कर्म'' अति शुभ और अत्याधिक मात्रा में हैं तथा भोग प्रधान भी हैं तो ऐसी आत्मा दीर्घ आयु की मनुष्य योनि प्राप्त कर आजीवन सामान्य से अधिक धनाढ्य तथा सभी प्रकार की सुख सामग्री प्राप्त कर सुख तथा आनन्द प्राप्त करता है।

नि:संदेह आयु और भोगों की मात्रा परमात्मा के विधि-विधान और व्यवस्था के अनुसार शरीर के जन्म लेने के साथ ही निश्चित हो जाती है।

अत: यदि मनुष्य भविष्य के जन्मों में भी मनुष्य योनि और

मनुष्य योनि काल में दीर्घ और सुख शान्ति की अभिलाषा रखता है तो उसे वर्तमान मनुष्य योनि में सभी प्रकार के शुभ कर्म जो कि आयु के साथ भोग प्राप्ति कराने वाले भी हों, करने चाहिए।

अधिकतर दु:ख स्थायी नहीं-फिर चिंता क्यों?

परिवर्तन प्रकृति का नियम है, गुण है। प्रत्येक जीव जन्म से लेकर मृत्यु तक अनेक भौतिक और सामाजिक परिवर्तन से गुजरता है। लेकिन ये सब उतार-चढ़ाव वास्तव में अस्थायी होते हैं जैसे रात के बाद दिन और दिन के बाद रात, गर्मी के पश्चात् वर्षा और वर्षा के बाद शीत ऋतु। मनुष्य के जीवन में दु:ख और शौकादि भी विशेष अवस्थायें हैं। अधिकतर अवस्थायें वर्तमान या पूर्व जन्म में किये गये दुष्कर्म (पाप कर्म) का फल हैं। पाप कर्म की गम्भीरता के अनुसार, धीरे-धीरे इन दुष्कर्मों का फल भी समाप्त होता जाता है। फलस्वरूप दु:ख और शोकादि प्रभाव का भी अन्त हो जाता है। प्रत्येक प्रारब्ध कर्म (संचित कर्मों में से जो कर्म मनुष्य ने इस जन्म में भोगने हैं) पाप या पुण्य कर्म की अपनी एक निश्चित "काल अवधि" होती है। यह काल अवधि कभी भी अनन्त (Permanent) नहीं होती है। अत: कर्म का फल भी अनन्त न होकर खत्म होने वाला होता है। इस प्रकार ये अपना प्रभाव दिखाकर समाप्त हो जाते हैं।

समस्या और दु:ख में अन्तर है। समस्या का उपाय केवल युक्ति, ज्ञान, कर्म और परिश्रम से हो सकता है लेकिन यह सिद्धान्त दु:ख पर लागू नहीं होता है। दु:ख पर विजय पाने के लिए कर्म व्यवस्था का ज्ञान व उसमें पूर्ण श्रद्धा, सकारात्मक व धार्मिक दृष्टिकोण और धैर्य का होना आवश्यक है। **समस्या या दु:ख**

आने पर ग्रह दोष, नक्षत्र दोष, वास्तु शास्त्र व ज्योतिष उपाय, तीर्थ स्थान जाना, या मजार पर माथा टेकना, केवल अन्धविश्वास है। बहुत बडी भ्रान्ति है। वर्तमान में कुछ चालाक व स्वार्थी पण्डितों, ज्योतिषियों, कथा वाचकों, मौलवियों और तान्त्रिकों के गलत मार्गदर्शन के कारण हिन्दु समाज का एक बड़ा वर्ग इस भ्रान्ति का शिकार हो चुका है। फिर भी यदि कोई शिक्षित व सभ्य व्यक्ति इन अवैज्ञानिक/अवैदिक उपायों में रूचि लेता है तो यह उसकी अज्ञानता है अथवा उसका अपना व्यक्तिगत निर्णय है। ईश्वर मनुष्य को ऐसे अवैदिक कृत करने से रोकता नहीं है, क्योंकि मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र है।

''दु:ख'' में प्रसन्न रहने के उपाय

जिस मनुष्य ने जितने पाप या पुण्य कर्म किये हैं, वर्तमान में अथवा पूर्व जन्म में, उनके कर्मफल भोग में किसी भी उपचार से, किसी प्रकार की कमी या अधिकता नहीं हो सकती–यही वैदिक नियम है, मान्यता है। कर्मफल व्यवस्था है। फिर भी दु:ख की परिस्थिति को प्रसन्नतापूर्वक सहन करने के निम्न उपाय हैं –

(1) **दु:ख को ऋण मानना :**– मनुष्य को चाहिए कि दु:ख को अपने ऊपर एक ऋण समझा जाये। इसको पूर्व जन्मों में स्वयं के द्वारा कृत दुष्कर्मों के कर्म फल भोग का फल माना जाय जिसे वह अब चुका रहा है। ऐसी मानसिकता मन में उत्पन्न होने पर दु:ख की अनुभूति कम होती जाती है।

(2) **वैदिक सत्संग सुनना :**– आर्य समाज मन्दिर में वैदिक विद्वानों द्वारा ''सत्संग'' या ''वेद कथा'' से ज्ञान प्राप्त कर मनुष्य

''कर्म फल व्यवस्था'' को समझ सकता है, अपने दु:खों को सहन करने की शक्ति बढ़ा सकता है, आत्मिक शान्ति का अनुभव कर सकता है। अधिकतर आर्य समाज मन्दिरों में प्रत्येक रविवार को वैदिक सत्संग का आयोजन होता है।

(3) **यम-नियम का पालन करना**:- जीवन में यम नियम का दृढ़ता से पालन करने से मनुष्य वर्तमान में पाप कर्म करने से बचता है। कुवासनाओं का त्याग करता चला जाता है और अन्त में दु:खों से लड़ने का आत्म विश्वास प्राप्त कर लेता है।

(4) **ईश्वर की आज्ञाओं का पालन करना** :- प्रभु कृपा उन्हीं मनुष्यों पर होती है जो उसकी आज्ञानुसार जीवन यापन करते हैं। **प्रभु भक्त ''समस्या'' या ''दु:ख'' आने पर ग्रह दोष, नक्षत्र दोष, वास्तु शास्त्र व ज्योषित के उपाय, तीर्थ स्थान यात्रा अथवा मजार पूजा आदि अवैज्ञानिक और अवैदिक उपायों में रूचि नहीं लेते हैं। ऐसा करना ईश्वर की आज्ञाओं (कर्म-फल व्यवस्था नियमों) का अपमान है।**

(5) **प्रायश्चित करना** :- दु:ख आने पर वर्तमान स्थिति पर सन्तोष करना, उसको स्वीकार भाव से सहना और ईश्वर को धन्यवाद देना कि '' अमुक दु:ख का ऋण समाप्त हो रहा है। अपने पूर्व कर्मों की कल्पना/चिंतन करना, प्रायश्चित करना, भविष्य में ऐसे पाप कर्म न करने की प्रतिज्ञा करना-ये ऐसे कार्य हैं जिनसे दु:ख सहने की शक्ति मिलती है।

(6) **अहंकार, काम, क्रोध पर नियन्त्रण** :- मनुष्य काम, क्रोध और अहंकार के वशीभूत होकर और बड़ी-बड़ी व्यर्थ की कल्पनायें करके भी दु:खी होता रहता है। ऐसे व्यक्ति धीरे-धीरे मानसिक रोग (Depression) के शिकार भी होते जाते हैं। अत:

दु:खों पर विजय प्राप्त करने के लिए काम, क्रोध, अहंकार, लोभ, मोह, राग, द्वेष, ईर्ष्या पर संयम रखना चाहिए। व्यर्थ की कल्पनाओं और नकारात्मक विचारों से बचना चाहिये। ये "आत्महत्या प्रकृति" को जन्म देती है।

(7) **संगति :** दु:खी मनुष्य को सामाजिक गतिविधियों में सक्रिय होकर भाग लेना चाहिए। सकारात्मक सोच वाले व्यक्तियों के साथ अधिक समय व्यतीत करना चाहिए-नकारात्मक व अज्ञानी व्यक्तियों (जिनमें वैदिक ज्ञान का अभाव है) के साथ कम। अज्ञानी व्यक्ति हर समस्या या दु:ख को अन्धविश्वासीय क्रियाओं से जोड़ कर दु:ख को और बढ़ा देता है।

(8) **नित्य प्रात: सायं ओ३म् व गायत्री मन्त्र का जप करना, ध्यान करना :-** प्रतिदिन ईश्वर-स्तुति-प्रार्थना-उपासना व ध्यान और आर्ष ग्रन्थों का स्वाध्याय आत्मिक विश्वास पैदा करता है, दु:ख सहने की शक्ति देता है। अत: ईश्वर उपासना और वेदों का अध्ययन नियमित रूप से करना चाहिए।

(9) **समाज में दु:खी अन्य प्राणियों का चिन्तन :-** यदि समाज में अपने आस-पास दु:खी, दरिद्र व्यक्तियों पर दृष्टि डाली जाये तो मनुष्य को अपना दु:ख निश्चय ही छोटा प्रतीत होगा। ईश्वर को धन्यवाद देने की मानसिक सोच बनती है-न कि सदैव शिकायत की। इससे स्वास्थ्य अच्छा रहता है और दु:ख की अवस्था धीरे-धीरे बीत जाती है। दूसरों के आगे दु:खों को वर्णन करने की प्रवृत्ति पर नियंत्रण होता है।

(14) अष्टांग योग की (सूक्ष्म में) सरल व्याख्या

हम सभी भक्त ईश्वर के दर्शन करना चाहते हैं। उसकी अनुभूति करना चाहते हैं। उसकी कृपा पाना चाहते हैं। अनेक महापुरुषों और ऋषियों ने अपनी-अपनी योग्यता व अनुभव के अनुसार ईश्वर प्राप्ति और उसकी कृपा के अनेकों उपाय बताये हैं व इस विषय पर अनेकों ग्रन्थ लिखे हैं। इनमें से एक प्रसिद्ध ग्रन्थ का नाम है-योगदर्शन। इसके रचयिता महर्षि पतञ्जलि हैं। यह ग्रन्थ वेदों पर आधारित है। ऋषि ने वेदों व अन्य ग्रन्थों का गहन अध्ययन किया। तत्पश्चात् अपने ज्ञान, अनुभव व वेदों के आधार पर मानव कल्याण के लिए और ईश्वर साक्षात्कार हेतु इस ग्रन्थ में एक कार्यक्रम/विधि बताई जिसका पालन करने से हम सांसारिक कार्य करते हुए भी ध्यान ईश्वर की अनुभूति व आनन्द प्राप्त कर सकते हैं।

महर्षि पतञ्जलि ने योग में सफलता के लिए आठ निर्देश/उपाय बताये हैं। इन्हें योग के आठ अंग के नाम से जाना जाता है। अष्टांग योग के प्रथम 6 अंगों का अभ्यास करने, पालन करने से अर्थात् अपने आचरण में लाने से हमें न केवल ध्यान और ईश्वर साक्षात्कार में सफलता मिलती है बल्कि हमारा जीवन शान्त, पवित्र, तेजोमयी और सुखमय बनता है। अष्टांग योग में बतायी गई बातें सभी मनुष्यों के कल्याण व उन्नति के लिए हैं चाहे वह व्यक्ति किसी भी जाति या समुदाय या देश का हो। **यदि प्रत्येक मनुष्य अष्टांग योग के प्रथम दो अंग-यम व नियम का एक साथ पालन करना शुरू कर दे तो निःसन्देह समाज,**

राष्ट्र व विश्व में शान्ति स्थापित हो सकती है।

अष्टांग योग के पालन करने से मुख्य रूप से निम्न लाभ हैं :-

1. सुख-शान्ति, सन्तोष व तृप्ति जीवन में मिलती है।
2. शरीर निरोग, मन स्थिर और प्रज्ञा बुद्धि की प्राप्ति होती है।
3. अविद्या का नाश व जीवन की कठिनाईयों में सही निर्णय लेने की क्षमता बढ़ती है।
4. शरीर, मन व इन्द्रियों पर नियन्त्रण रहता है।
5. काम, क्रोध, लोभ, मोह, अन्धकार, द्वेष का नाश और सेवा, परोपकार, दया व दान की भावना में वृद्धि होती है।
6. शारीरिक व मानसिक दु:खों को सहन करने की शक्ति मिलती है।
7. अनेक ईश्वरीय गुणों की प्राप्ति और पाप कर्मों से मनुष्य बचता है।
8. ध्यान में सफलता प्राप्त होती है, अर्थात् ईश्वर-अनुभूति होती है।
9. आत्मा-परमात्मा का दर्शन होता है/अनुभूति होती है।
10. समाज में फैली अव्यवस्था और अस्थिरता पर अंकुश लगता है, समाज में शान्ति स्थापित होती है।

योग का प्रथम अंग - यम

इसके पांच विभाग हैं। सामाजिक व आध्यात्मिक उन्नति व शान्ति के लिए इनका पालन करने से लाभ होता है।

(1) अहिंसा :

मन, वाणी और शरीर से सदैव सभी प्राणियों के साथ

द्वेषभाव त्याग कर प्रेमपूर्वक व्यवहार करना अहिंसा कहलाती है। कोई क्रिया अहिंसक है या हिंसक, इसका निर्णय न्याय-अन्याय की कसौटी पर किया जाता है। न्यायपूर्वक दण्ड देना अहिंसा की और अन्यायपूर्वक सुख लेना हिंसा की श्रेणी में आता है।

मन में किसी का बुरा करने का विचार, किसी को हानि पहुँचाने या मारने का विचार, कठोर वचन बोलना, किसी को शारीरिक दु:ख देना, चोट पहुँचाना, मार डालना-सभी कार्य हिंसा के अन्तर्गत आते हैं। ईश्वर भक्ति में सफलता के लिए अहिंसा का पालन अनिवार्य है।

अहिंसा का पालन करने से हमारे मन, वाणी व शरीर के विकार कम/दूर होते हैं। हमारा मन शान्त होता है और ध्यान में लगता है। सभी प्राणियों के प्रति मन से द्वेष भाव छूट जाता है। इसके विपरीत अहिंसक व्यक्ति का मन अशान्त, असन्तोष, अतृप्त व भयपूर्ण होता है जिसे वह दान-पुण्य व समाज-सेवा करके दूर करना चाहता है जो कि असम्भव है।

(2) सत्य :

सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में हमें सदा उद्यत रहना चाहिए। यह सभी जानते हैं कि सत्य सबसे बड़ा धर्म और झूठ सबसे बड़ा पाप है। धर्म का आधार ही सत्य है। अत: हमें सदैव सत्य बोलना चाहिए। मीठा बोलना चाहिए। अप्रिय सत्य व प्रिय झूठ नहीं बोलना चाहिए। असत्य का आचरण करना ईश्वर भक्ति में मुख्य रूप से बाधक है।

बिना मतलब के बोलना, दूसरों की निन्दा करना, कठोर शब्द बोलना या जिस सत्य को बोलने से किसी निरपराध व्यक्ति

को कष्ट या हानि होवे यह सब पाप की श्रेणी में आते हैं। इन सबसे यथा संभव बचने का प्रयास करना चाहिए।

सत्य का पालन करने से जीवन में निर्भीकता आती है, समाज में मनुष्य का विश्वास बनता है, मन शान्त होता है। ईश्वर साक्षात्कार में सिद्धि होने के साथ-साथ सभी उत्तम कार्यों में सफलता मिलती है।

इसके विपरीत असत्य को आचरण में लाने से मानसिक चिन्तायें बढ़ती हैं, आत्मग्लानि होती है, पाप कर्म करने की वृत्ति बढ़ती है। अतः हमें हमेशा सत्य का ही पालन करना चाहिए।

(3) अस्तेय :

मन, वाणी और शरीर से चोरी छोड़ देना अस्तेय कहलाता है। दूसरों की वस्तु बिना पूछे ले लेना या प्रयोग करना चोरी की श्रेणी में आता है चाहे वह वस्तु अपने किसी रिश्तेदार या सम्बन्धी की ही क्यों न हो। बिना परिश्रम या अन्याय के द्वारा धन एकत्रित करना भी चोरी के अन्तर्गत आता है। रिश्वत लेना, कार्यकाल में कर्तव्य का पालन न करना, कार्यालय में देर से जाना और समय से पहले कार्यालय छोड़ देना, कार्य में लापरवाही बरतना, पूरा न तोलना, उचित मूल्य से अधिक लेना, झूठ बोलकर सामान बेचना, सामाजिक व धार्मिक संस्थाओं में पदाधिकारियों द्वारा सामान्य वित्तीय नियमों का पालन न करना और फलस्वरूप अनुचित आर्थिक लाभ प्राप्त करना अथवा अपने मित्रों को अवैध लाभ पहुँचाना आदि सभी कार्य अस्तेय (चोरी) की श्रेणी में आते हैं। इन सब दुर्गुणों से प्रत्येक व्यक्ति और धार्मिक संस्था के पदाधिकारियों को बचना चाहिए।

अभावग्रस्त गरीब व्यक्ति दूसरे के पदार्थों को छीनने या पाने का सदा प्रयत्न करते हैं। अतः उनकी आवश्यकता की पूर्ति के लिए हमें हमेशा अपने पदार्थ, धन आदि यथा शक्ति व यथासंभव उनको दान करने चाहिए। इससे अस्तेय की स्थापना होती है।

अस्तेय का पालन करने से शान्ति, प्रसन्नता, सन्तुष्टि व सुख की अनुभूति होती है। हम समाज में विश्वास के पात्र व श्रद्धेय बन जाते हैं। हमारी आध्यात्मिक उन्नति होती है। इसके साथ-साथ हम प्रभु साक्षात्कार के अधिकारी भी बनते हैं।

(4) ब्रह्मचर्य :

सभी इन्द्रियों पर यथायोग्य संयम रखना ब्रह्मचर्य कहलाता है। यह संयम मन, वचन व कर्म से होना चाहिए। इसके अन्तर्गत बाल्यावस्था में विवाह न करना व उपस्थ इन्द्रियों का संयम रखना, वेद व आर्ष ग्रन्थ पढ़ना, विवाह के बाद भी ऋतुगामी बना रहना, और परस्त्री गमन आदि व्यभिचार को मन, वचन, कर्म से त्याग देना आता है।

आचार्य चरक के अनुसार यदि हम अपने शरीर को स्वस्थ रखना चाहते हैं, उसकी रक्षा करना चाहते हैं, उसे रोग मुक्त बनाना चाहते हैं, ईश्वर भक्ति का आनन्द पाना चाहते हैं तो हमें अपने वीर्य की रक्षा करनी चाहिए। अतः हम जो कुछ खाते हैं उसके सत्त्व को संभाल कर रखें।

हमारे भोजन से एक प्रकार का रस बनता है, रस से रक्त बनता है, रक्त से चर्बी बनती है, चर्बी से हड्डी बनती है, हड्डी से मज्जा (हड्डी के अन्दर का तरल पदार्थ) बनती है, मज्जा से वीर्य बनता है, वीर्य से ओज (सप्त धातुओं का सार) बनता है। यह एक

लम्बी प्रक्रिया है। इसी ओज से हमारा मुखमण्डल चमकता है, दिमाग तेज होता है। ईश्वर के आनन्द और अनुभूति को प्राप्त करने में यह अति सहायक होता है।

ब्रह्मचर्य के पालन के लिए महापुरुषों व ऋषियों के चरित्र का चिन्तन करना चाहिए, आर्ष ग्रन्थों का अध्ययन करना चाहिए। दिनचर्या भी व्यस्त होनी चाहिए। इसके साथ-साथ सात्विक भोजन, नियमित निद्रा, उचित दिनचर्या, आसन, प्राणायाम व व्यायाम के साथ-साथ शारीरिक श्रम भी करना चाहिए। कुसंगति व मन को विचलित करने वाले दृश्य, अश्लील सिनेमा, टेलीविजन, फेस बुक, यू-टयूब और मोबाईल पर दिखाये जाने वाले दूषित कार्यक्रम व गन्दे उपन्यास आदि से बचना चाहिए।

ब्रह्मचर्य का पालन करने से शारीरिक तथा बौद्धिक बल की वृद्धि होती है। आयु बढ़ती है। ध्यान में सफलता जल्दी मिलती है।

(5) अपरिग्रह :

मन, वाणी व शरीर से अपनी योग्यतानुसार अनावश्यक भौतिक पदार्थों की इच्छा न करना, उनका संग्रह न करना, अनावश्यक विचारों को मन में या तो आने न देना या उनको मन से निकाल देना अपरिग्रह कहलाता है। इसके विपरीत उचित या अनुचित साधनों का ध्यान न रखते हुए धन, सम्पत्ति व अनावश्यक भौतिक पदार्थ एकत्रित करना परिग्रह कहलाता है। परिग्रह की आदत सदैव दूसरों को किसी न किसी रूप में पीड़ा देने के साथ-साथ स्वयं के लिए भी परेशानी पैदा करता है। क्योंकि फिर हम अपने मुख्य लक्ष्य को छोड़कर धन व सम्पत्ति को अर्जित

करने व उसकी रक्षा में ही लगे रहते हैं। जितना अधिक धन व भौतिक वस्तुओं का संग्रह हम करते हैं, हमारा मोह उनके लिए उतना ही बढ़ता जाता है। फलस्वरूप यह सामाजिक व्यवस्था व उन्नति के साथ-साथ हमारी ध्यान प्रक्रिया व मुक्ति में भी बाधा डालता है। आजकल धन की चाह और व्यक्ति का लोभ, लालच इतना बढ़ गया है कि मनुष्य अपनी आने वाली कई पीढ़ियों के लिए भी सम्पदा जोड़कर जाना चाहता है, चाहे उसकी कुपात्र सन्तान उस धन को अपने व्यसनों में बरबाद कर दे। इस कुप्रथा से सामाजिक व धार्मिक संस्थायें भी ग्रस्त हो रही हैं। इस परिग्रह को करने वाले व्यक्ति और धार्मिक संस्थाओं के पदाधिकारी-सभी पाप कर्म के दोषी हैं। अतः प्रत्येक व्यक्ति व धार्मिक संस्था को अपनी आवश्यकताओं को सदा सीमित रखना चाहिए एवं सदैव प्रयत्न करना चाहिए कि हमारी कमाई धर्मानुसार हो और अधिक धन होने पर वह समाज व राष्ट्र के विकास और धर्म के कार्यों पर लगे।

अपरिग्रह का पालन करने से हम छल, कपट, झूठ, अन्याय, लोभ व ईर्ष्या से बचते हैं। परोपकार की भावना जाग्रत होती है। स्वास्थ्य उत्तम रहता है, आत्म चिन्तन व प्रभु भक्ति में मन लगता है। मन शान्त रहता है। ध्यान में सफलता मिलती है। हमारे अन्दर आत्मा के स्वरूप को जानने की इच्छा उत्पन्न होती है।

योग का दूसरा अंग - नियम

इनका पालन करने से हमारी आध्यात्मिक उन्नति होती है। व्यक्तिगत विकास होता है। ध्यान साधना में सहायता मिलती है। इनकी संख्या भी पाँच है।

(1) शौच :

शौच से तात्पर्य शुद्धि से है। मन, वाणी व शरीर की पवित्रता को शौच या शुद्धि कहते हैं। यह दो प्रकार की होती है –

(क) बाह्य शुद्धि : इसके अन्तर्गत अपने वस्त्र, बाह्य स्थान, शरीर व धनोपार्जन को पवित्र रखना आता है।

(ख) आन्तरिक शुद्धि : इसके अन्तर्गत स्वाध्याय, सत्संग, प्राणायाम, सत्य बोलना, धर्मानुसार आचरण करना और काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या आदि पर संयम रखना या उनका त्याग करना आता है।

ध्यान में सफलता के लिए और अच्छा जीवन व्यतीत करने के लिए बाह्य व आन्तरिक–दोनों प्रकार की शुद्धि का विशेष महत्व है। इन दोनों का एक साथ पालन न करने से मनुष्य अपने वास्तविक लक्ष्य को कभी भी प्राप्त नहीं कर सकता। आजकल समाज में बाह्य (बाहरी) शुद्धि पर ही अधिक ध्यान दिया जा रहा है। शरीर को सुन्दर रखना ही मुख्य लक्ष्य हो गया है। अधिकतर लोग पार्कों में व स्वास्थ्य केन्द्रों में शरीर की बाहरी शुद्धि व देखरेख पर ही अपना ज्यादा समय व धन लगाते नजर आते हैं। अध्यात्म व सत्संग आदि की ओर लोगों का आकर्षण न के बराबर है। फलस्वरूप अधिकतर लोगों में शान्ति, शुद्ध आचरण और आत्म विश्वास की कमी पायी जाती है।

शौच के पालन करने से हमें अपने शरीर के प्रति आसक्ति नहीं रहती। शरीर की नश्वरता का बोध होता है। इसका अर्थ यह नहीं कि शरीर की स्वस्थता पर ध्यान नहीं देना है। शौच का पालन करने से ध्यान में मन लगता है। मन प्रसन्न रहता है। अतः हमें

जीवन को दीर्घायु व स्वस्थ बनाने के लिए, आत्मिक शान्ति व ईश्वर साक्षात्कार के लिए अपने आहार-विहार व आन्तरिक शुद्धि पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

(2) सन्तोष :

अपनी योग्यता, शक्ति, ज्ञान व साधनों का पूर्ण प्रयोग करने के बाद जो फल प्राप्त होता है, उससे सन्तुष्ट होना सन्तोष कहलाता है। जो कुछ हमारे पास है उससे अधिक का लोभ न करना सन्तोष है। यदि पूर्ण पुरुषार्थ के बाद फल की प्राप्ति आशा से कम हो तो चिन्तित व हताश नहीं होना चाहिए। हाँ, कोशिश निरन्तर जारी रखना चाहिए। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि व्यक्ति अपनी योग्यता व सामर्थ्य को न बढ़ाये या उसे न पहचान कर कम पुरुषार्थ करे और उसी में सन्तोष कर ले, आलसी बन जाये। यह सामाजिक व आर्थिक उन्नति में बाधक नहीं है। इसका पालन करने से सामाजिक व आर्थिक उन्नति तो होती ही है, इसके साथ-साथ जीवन में निराशा नहीं आती। अधिक सम्पन्न व्यक्तियों से ईर्ष्या व द्वेष नहीं होता है।

आजकल हमारी दृष्टि अधिकतर दूसरों की सम्पत्ति और सफलता पर जाती है। अपनी योग्यता, कर्म, परिश्रम व साधनों पर नहीं। यहीं से असन्तोष, लोभ और द्वेष की भावना का जन्म होता है। यही कारण है कि आजकल माता-पिता, अपने परिवार व बच्चों का आर्थिक स्तर बढ़ाने के लिए, झूठ बोलते हैं, रिश्वत लेते हैं, चोरी करते हैं, अधर्म से पैसा कमाते हैं और स्वयं को गर्क में डालकर पाप कर्म के भागीदार बनते हैं। वे भूल जाते हैं कि ईश्वर ने आपके बच्चों को, उनके पूर्वजन्म के कर्मफल के आधार पर ही

आपके यहाँ जन्म दिया है और आपके बच्चों ने अपने कर्मफल के अनुसार ही यह जीवन यापन करना है। हाँ, उनके स्वास्थ्य, शिक्षा व संगति का ध्यान रखना माता-पिता का कर्तव्य है। इसलिए परिवार के पालन के लिए परिश्रम करें लेकिन पापकर्म से बचें। अपने विचारों को सकारात्मक रखें, नियन्त्रण में रखें और ठीक दिशा में परिश्रम करते हुए अपने कर्तव्यों का पालन करें और पूर्ण प्रयास के बाद जो कुछ प्राप्त हो, उसमें सन्तुष्ट रहें। ईश्वर का धन्यवाद करें। दूसरों की आध्यात्मिक या भौतिक उन्नति देखकर उनसे द्वेष व घृणा न करें। अतः हमें अपने परिवार में, माता-पिता में, अपनी पत्नी में, जो भी भोजन मिले उसमें, तथा जो भी हमारे पास धन साधन हैं, उसमें सदा सन्तोष रखना चाहिए।

सन्तोष का पालन करने से मन शान्त व प्रसन्न रहता है। मानसिक तनाव नहीं होता है, सुख की अनुभूति होती है, आत्म विश्वास बढ़ता है, अधिक कार्य करने की प्रेरणा मिलती है। अत्यधिक विषय भोगों को भोगने की इच्छा धीरे-धीरे नष्ट होने लगती है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, घृणा से मुक्ति मिलती है, आयु दीर्घ होती है, शरीर स्वस्थ रहता है।

(3) तप :

धर्म तथा न्याय का पालन और शुभ कार्य करते हुए, लाभ हानि, सुख-दु:ख, भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी, मान-अपमान आदि द्वन्द्वों को प्रसन्नता से सहना तप है। जो मनुष्य सुख में अहंकार नहीं करता और दु:ख में घबराता नहीं, वही तपस्वी है।

तप को तीन भागों में बांटा जा सकता है :-

(1) **शरीर का तप :** अपनी इन्द्रियों को वश/संयम में रखना

व उनका ठीक-ठीक उपयोग करना शरीर का तप है। इसके अतिरिक्त माता-पिता, गुरुओं, विद्वानों , निर्धन व कमजोर की सेवा करना भी शरीर का तप कहलाता है।

(2) **वाणी का तप :** सत्य बोलना, मीठा बोलना, उपयुक्त व कम बोलना, मर्यादा में बोलना आदि वाणी के तप के अन्तर्गत आता है।

(3) **मन का तप :** मन सभी इन्द्रियों का राजा है। सभी इन्द्रियाँ मन के आदेशानुसार कार्य करती हैं। लेकिन मन बुद्धि के नियन्त्रण में कार्य करता है। नियन्त्रण हटते ही मन बेलगाम हो जाता है। मन के तप के बिना शरीर व वाणी का तप नहीं हो सकता। अपने मन को निर्मल, एकाग्र करने के लिए बुद्धि को सुबुद्धि बनाना मन का तप कहलाता है। इसमें स्वाध्याय, प्राणायाम व योग बहुत सहायक होते हैं।

हमारे अन्दर पवित्रता तप के बिना नहीं आ सकती। हमें मन में अपवित्र विचार नहीं आने देने चाहियें, सत्य का आचरण करना चाहिए। छल, कपट, क्रोध, द्वेष, ईर्ष्या, लोभ, मोह का त्याग व बड़ों की सेवा व आदर सत्कार करना चाहिए।

तप के बिना मन व चित्त की वृत्तियों को दूर करना व इन्द्रियों पर संयम रखना असंभव है।

ईश्वर भक्ति में सफलता के लिए हमें अपनी सभी क्रियाओं में यथा संभव तप का पालन और त्याग की भावना उत्पन्न करनी चाहिए।

योग्यता व उपलब्धता के अनुसार साधनों का हम प्रयोग करें। लेकिन इनके अभाव में भी प्रसन्नता से रहना आना चाहिए।

भौतिक पदार्थों की कमी के कारण सीमित सांसारिक सुख होते हुए भी परमात्मा की स्तुति, प्रार्थना, उपासना, ध्यान से हमें अपने आपको वंचित नहीं करना चाहिए।

महर्षि दयानन्द के अनुसार हमें थोड़ा दु:ख, थोड़ा-थोड़ा कष्ट, थोड़ी-थोड़ी पीड़ा सहन करते रहना चाहिए ताकि योगाभ्यास में सफलता प्राप्त हो सके।

तप का पालन करने से शारीरिक, मानसिक व आत्मिक उन्नति होती है। हमारा शरीर बलवान हो जाता है। इन्द्रियाँ और मन वश में हो जाते हैं। बड़ी-बड़ी असफलताओं के सुलझाने में प्रेरणा और ध्यान में सफलता मिलती है।

(4) स्वाध्याय :

आर्ष ग्रन्थों का अध्ययन, चिन्तन, मनन व ईश्वर के मुख्य नाम ''ओ३म्'' का जप करना स्वाध्याय कहलाता है।

जीवन में पूर्ण सफलता, मन की शान्ति व मोक्ष की प्राप्ति के लिए हमें भौतिक विद्या व आध्यात्कि विद्या- दोनों का ही अध्ययन करना चाहिए। दोनों में समन्वय बनाकर जीवन में आगे बढ़ना चाहिए। भौतिक शास्त्र/विद्या के बिना हम संसार में मिलने वाले अनेक उचित व आवश्यक भौतिक सुविधाओं से वंचित रहेंगे। गरीब, निर्बल व दु:खी की आर्थिक सहायता नहीं कर पायेंगे। धन द्वारा परोपकार के कार्य नहीं कर पायेंगे। आध्यात्मिक ज्ञान के अभाव में सुखी जीवन, ईश्वरीय आनन्द, शान्ति और आत्मा व परमात्मा की अनुभूति नहीं हो सकती। अत: जीवन को सुखी, शान्त, प्रसन्न, तृप्त व आनन्दमयी बनाने के लिए दोनों विद्याओं का अध्ययन, चिन्तन, मनन अनिवार्य है। भौतिक व

आध्यात्मिक क्षेत्रों में समान प्रगति करनी चाहिए। दोनों प्रकार की उन्नति में समन्वय बनाकर चलना चाहिए।

व्यवहार काल में कुछ समय निकाल कर हमें आर्ष ग्रन्थों के अध्ययन के द्वारा मुख्य रूप से ईश्वर, प्रकृति, आत्मा के गुण-कर्म-स्वभाव, ईश्वर प्राप्ति के उपाय व उसमें आने वाली बाधओं के निवारण का चिन्तन करते रहना चाहिए ताकि ध्यान व उपासना के समय केवल वे ही बातें सामने आयें, अन्य नहीं। इसके साथ-साथ हमें उपासना काल में ईश्वर के निज नाम ''ओ३म्' का जप, गायत्री मंत्र का जाप व अन्य वैदिक मन्त्रों का जप अर्थ के साथ करना चाहिए। जप करते समय प्राणायाम, श्वास, प्रश्वास क्रियायें व धारणा का भी यथा संभव प्रयोग करना चाहिए। ऐसा करने से मन संयम में आसानी से हो जाता है और ध्यान में मन लगता है।

स्वाध्याय करने से ज्ञान की वृद्धि के साथ-साथ ईश्वर के प्रति श्रद्धा व रुचि बढ़ती है। मन व चित्त की वृत्तियों पर संयम होने लगता है। सकारात्मक विचारों की वृद्धि होती है, नकारात्मक विचारों पर अंकुश लगता है। हम अनेक प्रकार के दु:खों व पापकर्मों से बचते हैं और लाभकारी वस्तुओं के उपभोग से सुख प्राप्त करते हैं।

(5) ईश्वर प्रणिधान :

जब हम अपना प्रत्येक कार्य/कर्म यह जानते हुए करते हैं कि ईश्वर सर्वव्यापक व सर्वान्तर्यामी है, मेरे अन्दर भी विद्यमान है, वह मुझे देख रहा है, सुन रहा है, जान रहा है, यह कार्य उसकी उपस्थिति में हो रहा है तो ऐसी मानसिक स्थिति को ईश्वर प्रणिधान

कहते हैं।

हमें अपने सभी कार्य ईश्वर की व्यापकता को मन, बुद्धि व आत्मा में अनुभूति करते हुए करने चाहिए ताकि हम ईश्वर के साथ अपना सम्बन्ध बनाये रख सकें और गलत कार्य न कर सकें लेकिन बड़े दु:ख की बात है कि आजकल ईश्वर प्रणिधान का उल्लंघन न केवल व्यक्तिगत रूप में हो रहा है, बल्कि धार्मिक व परोपकारी संस्थायें भी कर रही हैं, पाप कर्म के भागीदार हो रही हैं।

ईश्वर प्रणिधान का दूसरा अर्थ है ईश्वर की आज्ञाओं का पालन करना। अपने तन, मन, धन को सदैव ईश्वर के प्रति समर्पित करते रहना अर्थात् उसकी आज्ञानुसार, निर्देशानुसार उनका सदुपयोग न केवल अपने लिए बल्कि समाज के लिए भी करना।

ईश्वर प्रणिधान का पालन करने से हम पाप कर्म से बचते हैं। हमें प्रत्येक आत्मा व जड़ वस्तु में ईश्वर का आभास होता है। हमारा मन ध्यान में लगता है।

तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान की साधना से हमारे तीनों शरीर-स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर व कारण शरीर की शुद्धि होती है। तप से शरीर व इन्द्रियों की शुद्धि होती है। स्वाध्याय से मन व बुद्धि की शुद्धि होती है। ईश्वर प्रणिधान से चित्त की शुद्धि होती है। **इन तीनों की साधना को क्रिया योग भी कहते हैं।**

योग का तीसरा अंग - आसन

आजकल आसन के नाम पर अनेक योग क्रियायें समाज में चल रही हैं। इनको हम दो भागों में बांट सकते हैं।

(1) शारीरिक दृष्टि से लाभदायक

शरीर को स्वस्थ व निरोग रखने के लिए हठयोग में विभिन्न प्रकार के आसन बताये गये हैं। इन आसनों को विधिपूर्वक करने से शरीर का प्रत्येक अंग सक्रिय व स्वस्थ बना रहता है। यह आसन किसी योगाचार्य के मार्गदर्शन में ही सीखने चाहिए, अन्यथा हानि होने की संभावना बनी रहती है।

(2) आध्यात्मिक दृष्टि से उपयोगी

यह आसन, ध्यान या समाधि में बैठने के लिए उपयोगी होते हैं। यह आसन महर्षि पतञ्जलि द्वारा प्रतिपादित किये गये हैं। इनका मुख्य उद्देश्य ध्यान व समाधि में सफलता प्राप्त करना है। इसके लिए हम जिस स्थिति में सुखपूर्वक व स्थिरता के साथ बैठ जायें, उसे आसन कहते हैं। वैसे तो हम शरीर की स्थिरता बनाते हुए किसी भी आसन में जप व ध्यान के समय बैठ सकते हैं लेकिन पद्मासन, सिद्धासन, सुखासन या स्वस्तिकासन अधिक उपयुक्त हैं। जो साधक रोग ग्रस्त होने के कारण इनमें से किसी एक भी आसन में नहीं बैठ सकते, वे लकड़ी की चौकी या बिना भुजा की कुर्सी पर बैठकर या दीवार आदि का सहारा लेकर प्राणायाम, जप व ध्यान का अभ्यास कर सकते हैं।

आसन में बैठते हुए ढीले कपड़े पहनें, शरीर को सीधा रखें, ढीला छोड़ें व गति रहित रखें, अर्थात् शरीर स्थिर अवस्था में रहे। कमर, छाती, गर्दन व सिर सीधी रेखा में रखें ताकि सुषुम्ना नाड़ी सीधी रहे। यदि आवश्यकता हो तो कमर के पीछे एक तकिया लगाकर दीवार का सहारा लिया जा सकता है। आसन की स्थिरता के बिना मन को एकाग्र करना और इसे ध्यान में पूर्णतः लगाना

असंभव है। आसन की सिद्धि हो जाने पर हमें गर्मी-सर्दी, भूख-प्यास आदि कम सताते हैं। चित्त में लौकिक भावनायें प्रकट कम होती हैं। शरीर की स्थिरता से चित्त स्थिर होने लगता है। फलस्वरूप प्राण वायु भी स्थिर होने लगता है।

आसन का अभ्यास कम आयु में ही शुरू कर देना चाहिए। पचास वर्ष के बाद आसन का अभ्यास करना कठिन हो जाता है। इस आयु में लातों की हड्डियाँ मोटी होती जाती हैं और पैरों को मोड़ने में कष्ट होता है।

नोट – जो साधक शारीरिक कमजोरी, रोग या किसी अन्य कारणवश कुर्सी, चौकी या दीवार आदि का सहारा लेकर भी प्राणायाम व ध्यान का अभ्यास नहीं कर सकते, उनको किसी प्रकार की चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है। ऐसे साधक शव आसन में लेटकर शरीर को पूर्ण रूप से ढीला छोड़ दें व शरीर को स्थिर कर लें। तत्पश्चात् प्राणायाम की कुछ क्रियाओं जैसे भस्त्रिका प्राणायाम, अनुतोम विलोम, नाड़ी शोधन क्रिया आदि करें। इसके बाद जप और ध्यान का अभ्यास शुरू कर सकते हैं। कुछ ही दिनों के अभ्यास के बाद उनको भी प्राणायाम व ध्यान में सफलता मिलती जाती है।

योग का चौथा अंग – प्राणायाम

किसी भी सुविधाजनक आसन में बैठकर मन की चंचलता को रोकने के लिए, शरीर में प्राण ऊर्जा को बढ़ाने के लिए और प्राण, अपान, समान, व्यान, उदान को बलिष्ठ करने के लिए श्वास-प्रश्वास की जो क्रियायें की जाती हैं उसे प्राणायाम कहते हैं। यह महत्त्वपूर्ण क्रियायें हैं। इन क्रियाओं का पर्याप्त व निरन्तर अभ्यास का प्रभाव हमारे मन और पूरे शरीर पर पड़ता है। शरीर

रोग मुक्त होता जाता है। इसके साथ-साथ हमारी इन्द्रियाँ, मन और चित्त की मलिनता और अशुद्धि भी दूर होती जाती है। अतः शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य के साथ-साथ आध्यात्मिक उन्नति के लिए साधक को प्रतिदिन प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए।

ध्यान में सफलता व ईश्वर की अनुभूति में प्राण साधना का प्रयोग अति आवश्यक है। श्वसन क्रियायें और प्राणायाम का अभ्यास, प्राण और प्राण साधना को बलिष्ठ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

योगदर्शन में, शारीरिक व्याधियों को दूर करने के लिए, चार प्राणायामों का वर्णन है। यह बहुत सरल हैं। इनके करने की ठीक विधि किसी योगाचार्य से सीखी जा सकती है। यदि प्रथम तीन प्राणायाम को पर्याप्त मात्रा में प्रतिदिन नियम से किया जाय तो साधक का आत्मबल प्रचुर मात्रा में बढ़ता है। मन पर नियन्त्रण होता जाता है। प्राण साधना दृढ़ से दृढ़तर होती चली जाती है। शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बहुत बढ़ जाती है।

(1) बाह्य प्राणायाम :

इसे बाहरी कुम्भक या प्रथम प्राणायाम भी कहते हैं। इसमें प्राणवायु को धीरे-धीरे अन्दर लेते हैं। इसके बाद पेट को धीरे-धीरे अन्दर खींचते हुए प्राणवायु को धीरे-धीरे फेफड़ों से बाहर निकाला जाता है। पूर्ण प्राण वायु बाहर निकलने पर उसे यथा शक्ति बाहर ही रोका जाता है। (बाह्य कुम्भक) जब प्राण वायु बाहर न रूक सके तो उसे धीरे-धीरे अन्दर लेते हैं। इसके बाद 2-3 सामान्य श्वास लेते हैं। फिर पुनः यही क्रिया करते हैं। इस प्रकार यह क्रिया 3 से 21 बार तक कर सकते हैं। यह क्रिया जप व ध्यान में बहुत

सहायक होती है। प्राण वायु को बाहर निकालते समय (रेचक क्रिया) प्राणायाम मंत्र का मानसिक उच्चारण करने से अधिक लाभ होता है। इसमें मूलबन्ध व उड्डीयान बन्ध का प्रयोग भी कर सकते हैं-अनिवार्य नहीं है।

(2) आभ्यन्तर प्राणायाम :

इसे आन्तरिक कुम्भक या दूसरा प्राणायाम भी कहते हैं। इसमें श्वास को धीरे-धीरे अन्दर भरते हैं। श्वास अन्दर भरने के बाद जालन्धर बंध लगाना अनिवार्य है, अन्यथा हानि हो सकती है। श्वास को अन्दर भरकर यथाशक्ति अन्दर ही रोकते हैं। (आन्तरिक कुम्भक)

इस स्थिति में भी प्राणायाम मंत्र का मानसिक उच्चारण करने से बहुत लाभ होता है। जब श्वास अन्दर न रूक सके तब धीरे-धीरे श्वास को बाहर निकालते हैं। श्वास बाहर निकालने के बाद 2-3 सामान्य श्वास लेकर फिर पुनः यही क्रिया करते हैं। यह प्राणायाम भी 3 से 21 बार तक कर सकते हैं।

नोटः- एक समय में केवल एक ही प्राणायाम करें - या तो बाह्य प्राणायाम करें या आभ्यन्तर प्राणायाम। एक प्रकार के प्राणायाम के अभ्यास के समाप्त होने पर ही दूसरा शुरू कर सकते हैं।

(3) स्तम्भवृत्ति प्राणायाम :

इसमें श्वास-प्रश्वास की सामान्य स्थिति में प्राणवायु को अचानक ही ''जहाँ का तहाँ'' यथाशक्ति रोका जाता है। इस स्थिति में भी प्राणायाम मंत्र का मानसिक उच्चारण करना चाहिए। अधिक लाभ मिलेगा। प्राणवायु न रूकने पर सूक्ष्म श्वास प्रश्वास

की क्रिया की जाती है। उसके बाद पुनः स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनाई जाती है। जप व ध्यान की उच्च स्थिति में इस प्राणायाम का अधिक उपयोग होता है। इसमें बाह्य या आभ्यन्तर कुम्भक नहीं लगाते हैं। यह क्रिया ध्यान में बहुत सहायक होती है। यह प्राणायाम भी 3 से 21 बार तक किया जा सकता है।

(4) बाह्य आभ्यान्तर विषयाक्षेपी प्राणायाम :

यह क्रिया बाह्य और आभ्यान्तर प्राणायाम को मिलाकर की जाती है। बाह्य कुम्भक के समय जब श्वास अन्दर आने लगे तो उसे धक्का देकर यथाशक्ति बाहर ही रोकते हैं। इसी प्रकार आभ्यन्तर कुम्भक में जब श्वास भीतर से बाहर निकलना चाहे तो उसे यथाशक्ति बाहर न निकलने देना और बाहर से और श्वास अन्दर लेते हैं। दोनों स्थितियों में श्वास को रोकने के बाद धीरे-धीरे छोड़ते हैं। इसके अभ्यास से मन व इन्द्रियाँ संयम में होने लगती हैं। यह प्राणायाम कठिन है। अतः किसी योगाचार्य के मार्गदर्शन में ही इसको सीखें अन्यथा न करें।

प्राणायाम का अभ्यास शुरू करने से पहले प्रतिदिन या सप्ताह में 2 बार सुबह दोनों नासिकाओं को साफ करना चाहिए। स्नान करने से पहले अंगुली से दोनों नासिकाओं में सप्ताह में 1 या दो बार सरसों का तेल लगाना चाहिए। तत्पश्चात् प्रत्येक नासिका से धीरे-धीरे श्वास अन्दर लें ताकि कुछ तेल का अंश नासिका के अन्दर चला जाये। इस प्रकार अभ्यास करने से नासिकाओं में जमा मल मुलायम होकर धीरे-धीरे बाहर निकलता रहता है और नासिकायें साफ व मुलायम बनी रहती हैं। इस क्रिया से दोनों

स्वरों को सम करने में सहायता मिलती है। सप्ताह में एक या दो बार दोनों नासिकाओं में बादाम रोगन की तीन-तीन बूंदें रात को सोते समय डालना अधिक लाभदायक है। इससे भी नासिकायें मुलायम रहती हैं व सिर दर्द नहीं होता है।

प्राणायाम करने से पहले शारीरिक शुद्धि क्रियाओं का अभ्यास करने से साइनसाइटिस का रोग नहीं होता है। मेरुदण्ड के अन्दर की तीन आध्यात्मिक नाड़ियाँ-इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना सदा सक्रिय बनी रहती हैं।

प्राणायाम में प्रयोग होने वाली क्रियाओं के नाम

(क) पूरकः प्राणायाम में श्वास के अन्दर लेने की क्रिया को पूरक कहते हैं।

(ख) रेचकः श्वास को भीतर से बाहर निकालने की क्रिया को रेचक कहते हैं।

(ग) कुम्भक : श्वास को अन्दर या बाहर रोकने की क्रिया को कुम्भक कहते हैं। कुम्भक द्वारा शरीर और मन स्थिर होता जाता है। कुम्भक के अभ्यास से मन की चंचलता / सक्रियता समाप्त होती जाती है।

जप व ध्यान में सफलता प्राप्त करने के लिए उपरोक्त तीनों प्रकार की क्रियाओं का अभ्यास पर्याप्त समय तक करना चाहिए। यह क्रियायें जप व ध्यान में भी बहुत सहायक होती हैं।

श्वसन क्रियायें -

श्वसन अर्थात् "श्वास लेना और छोड़ना" की चार निम्नलिखित महत्वपूर्ण अवस्थायें हैं - दीर्घ, मध्यम, लघु एवं सामान्य।

(1) दीर्घ श्वसन : इसमें पूरक (सांस लेना) और रेचक (सांस छोड़ना) को तीव्र गति से करते हैं और श्वास लम्बा व गहरा लेते हैं–श्वास गति को कार की गति के उदाहरण से समझा जा सकता है। श्वास गति 40 कि.मी. प्रति घं.

(2) मध्यम श्वसन : इसमें भी श्वास-प्रश्वास लम्बा व गहरा होता है लेकिन श्वास गति मध्यम होती है, श्वास गति 20 कि.मी. प्रति घं.

नोट : शरद ऋतु में गहरा श्वास अन्दर न लें। ठंड लगने की संभावना हो सकती है।

(3) लघु श्वसन : इसमें श्वास-प्रश्वास की गति बहुत धीमी होती है। श्वास गति 5 कि.मी. प्रति घं. ।

(4) सामान्य श्वसन (सूक्ष्म श्वसन): इसमें श्वास-प्रश्वास की गति सामान्य होती है। लम्बा व गहरा श्वास नहीं लिया जाता है।

नोट: (1) उपरोक्त श्वसन क्रियायें हानिरहित हैं। इन्हें कोई भी व्यक्ति कुछ ही दिनों के अभ्यास से सीख सकता है। अपने शरीर को स्वस्थ रखने के साथ-साथ इनका प्रयोग आध्यात्मिक लाभ के लिए मन्त्र उच्चारण, जप व ध्यान में भी किया जाता है।

नोट : (2) बूढ़े, रोगी व निर्बल/कमजोर व्यक्ति बहुत अधिक गहरा श्वास प्रश्वास न करें। इसके अतिरिक्त शीत ऋतु में भी सभी को खुले वातावरण में अधिक गहरा श्वास नहीं लेना चाहिये। इससे ठण्ड लगने की सम्भावना हो सकती है।

बूढ़े साधक केवल सामान्य श्वसन व लघु श्वसन का

अभ्यास कर सकते हैं। इनसे भी पूर्ण लाभ मिलता है।

श्वसन क्रियायें व प्राणायाम करते समय सावधानियाँ :-

1. प्राणायाम और श्वसन क्रियाओं के करने का ठीक समय प्रातःकाल है।

2. प्राणायाम खाली पेट होने पर या 12 घण्टे का उपवास (Intermittent fasting) होने पर ही करें अन्यथा नहीं।

3. यदि भोजन न पचा हो या मल त्याग न हुआ हो तो प्राणायाम/श्वसन क्रियायें न करना अच्छा है।

4. प्राणायाम व श्वसन क्रियायें शुद्ध व खुले स्थान, जहाँ पर शुद्ध वायु हो, वहीं पर बैठकर करना चाहिए। सर्दी के मौसम में खुले स्थान पर बैठने से बचें।

5. प्राणायाम व श्वसन क्रियाओं की मात्रा मौसम/ऋतु के अनुसार और अपनी सामर्थ्य, आयु व स्वास्थ्य को ध्यान में रखकर तय करनी चाहिए। अधिक सर्दी में किसी भी प्राणायाम को करते समय, बहुत गहरा लम्बा श्वास न लें। ठंड लग सकती है। हृदय रोग व उच्च रक्तचाप से पीड़ित व्यक्ति प्राणायाम व श्वसन क्रियाओं की मात्रा निश्चित करते समय अपने योगाचार्य एवं डाक्टर से सलाह अवश्य ले लें और यह क्रियायें करते समय ऋतु और मौसम का विशेष ध्यान रखें।

6. प्राणायाम व श्वसन क्रियाओं की मात्रा, संख्या पर ध्यान न देकर, उसकी विधि और कुशलता पर ध्यान देना चाहिए।

7. प्राणायाम, श्वसन क्रियाओं को करते समय साधक का मन प्रसन्न अवस्था में होना चाहिए और भोजन शाकाहारी, सात्विक सीमित मात्रा में ही होना चाहिए ताकि पूर्ण लाभ मिल सके।

8. प्राणायाम, श्वसन क्रियायें करते समय यदि सिर भारी हो जाये, सिर दर्द होने लगे या चक्कर आने लगे या कोई अन्य शारीरिक परेशानी हो तो ये क्रियायें तुरन्त रोक दें और किसी निपुण योगाचार्य की सलाह लें।

9. प्राणायाम व श्वसन क्रियाओं की संख्या शीत ऋतु में अधिक हो सकती है। ग्रीष्म ऋतु में कम होनी चाहिए। वर्षा ऋतु में न अधिक न कम।

10. प्राणायाम और विशेष रूप से हठ योग के अन्तर्गत आने वाली क्रियायें-भस्त्रिका आदि अच्छे शिक्षक से सीख कर ही शुरू करना चाहिए, नहीं तो हानि भी सकती है। उक्त रक्तचाप व हृदय के रोगी इन क्रियाओं को डाक्टर की सलाह लेकर ही करें अन्यथा न करें।

11. प्राणायाम व श्वास प्रश्वास क्रिया के साथ (मानसिक रूप में) नियमित ओ३म् जप, गायत्री मंत्र जप व ध्यान (मंत्र के अर्थ अथवा मंत्र की भावना के साथ) करने से मन की चंचलता को रोकने में सहायता मिलती है। मन की एकाग्र अवस्था बनती जाती है।

मंत्र उच्चारण की गतियाँ

श्वास-प्रश्वास की गति की तरह मंत्र उच्चारण की गति का भी प्रभाव हमारे अन्त:करण पर पड़ता है। इसकी भी चार गति होती हैं। इनको भी कार की गति के उदाहरण से समझा जा सकता है।

(क) तीव्र गति : इसमें मंत्र उच्चारण की गति 40 कि0मी0 होती है।

(ख) मध्यम गति : इसमें मंत्र उच्चारण की गति तेज होती

है–लगभग 20 कि0मी0 होती है।

(ग) सामान्य गति : इसमें मंत्र उच्चारण की गति 5 कि0मी0 की होती है।

(घ) धीमी गति : इसमें मंत्र उच्चारण की गति 1 से 2 कि0मी0 की होती है।

नोट :– जप व ध्यान में उच्चारण की कौन सी गति का प्रयोग करना है। यह साधक की सतोगुणी, रजोगुणी या तमोगुणी प्रवृत्ति पर निर्भर करता है। तमोगुणी प्रवृत्ति में तीव्र गति, रजोगुणी प्रवृत्ति में मध्यम गति और सतोगुणी प्रवृत्ति में सामान्य एवं/या धीमी गति का उपयोग लाभदायक होता है।

योग का पाँचवाँ अंग–प्रत्याहार

प्रत्याहार का अर्थ है–अपनी इन्द्रियों को संयम में रखना, मन पर नियन्त्रण रखना। मन को वश में करने से सभी इन्द्रियाँ स्वयं वश में हो जाती हैं। इसके लिए संकल्प और तप की आवश्यकता है। त्याग की भावना अपने अन्दर उत्पन्न करनी होती है। त्याग की भावना व तप का निरन्तर अभ्यास इन्द्रियों पर संयम रखने में सफलता प्रदान करता है। जब तक व्यक्ति विषय भोगों में सुख समझता रहता है तब तक प्रत्याहार की सिद्धि होना कठिन है।

प्रत्याहार का पालन करने से इन्द्रियाँ विषय भोगों में नहीं फंसतीं, ध्यान में एकाग्रता बढ़ती है और मनुष्य आत्म दर्शन का अधिकारी बनता है।

योग का षष्ठम् अंग – धारणा

धारणा मन की एकाग्रता है जिसमें एक समय में एक ही स्थान, वस्तु या विचार पर अपना पूरा ध्यान केन्द्रित किया जाता

है। धारणा का अर्थ है चित्त/मन को एक स्थान पर स्थिर रखना अर्थात् ध्यान करते समय चित्त/मन द्वारा एक ही विषय का चिन्तन करना और एक स्थान पर स्थिर रखना। ध्यान करते समय मन को मस्तक, भ्रूमध्य, नासिका का अग्र भाग, जीभ का अग्र भाग या हृदय प्रदेश पर केन्द्रित करना चाहिए। प्रारम्भ में कुछ समय के लिए मन को ओ३म् अथवा किसी अन्य वैदिक मंत्र की ध्वनि पर केन्द्रित करने से भी ध्यान करने में सहायता मिलती है। मन भटकता नहीं है।

वास्तव में ध्यान करते समय धारणा का विधान शरीर के अन्दर ही है। धारणा का केन्द्र बिन्दु हृदय प्रदेश ही होना चाहिए। ध्यान वहीं पर किया जाता है। यदि यह संभव न हो तो धारणा का केन्द्र, भ्रूमध्य (मस्तक) भी हो सकता है।

धारणा का केन्द्र बिन्दु ''हृदय प्रदेश''

हृदय प्रदेश (स्थान) छाती के दायीं ओर स्थित है। यह छाती के मध्य रेखा से लगभग एक अंगुली की चौड़ाई पर है। इस स्थान को आध्यात्मिक हृदय भी कहते हैं। शास्त्रों के अनुसार आत्मा मुख्य रूप से इसी स्थान पर रहता है। ईश्वर भी (परमाणु के रूप में) इसी स्थान पर आत्मा के साथ रहता है अर्थात् आत्मा के अन्दर विद्यमान है। इसी स्थान पर धारणा केन्द्रित करके ध्यान करने से आत्मा व परमात्मा की अनुभूति होती है। आध्यात्मिक पथ पर शुद्ध अन्तःकरण के साथ, चलने वाले साधक को ध्यान के माध्यम से आत्मा व ईश्वर की खोज में सफलता यहीं पर मिलती है। इसलिए धीरे-धीरे धारणा का केन्द्र बिन्दु ''हृदय प्रदेश'' को ही बनाना चाहिए।

हृदय प्रदेश को कैसे केन्द्र बिन्दु बनायें

(1) प्रातःकाल व सायंकाल, मन्त्र जप, ईश्वर स्तुति, प्रार्थना, उपासना प्रारम्भ करने से पहले निम्न विधि अपनायें –

(क) किसी भी आसन में सुखपूर्वक बैठ कर गर्दन, कमर सीधी रखें।

(ख) लम्बा, गहरा व धीमा श्वास अन्दर लें (पूरक)

(ग) श्वास को धीरे-धीरे बाहर छोड़ते हुए ओ३म् का तीन बार मानसिक उच्चारण करें। उच्चारण करते हुए धारणा बनायें कि प्रभु! आप मेरे हृदय प्रदेश में विद्यमान हैं।

ओ..............................३.............................. म्

(घ) अब 2-3 सामान्य श्वास लेकर निम्न मानसिक उच्चारण करें।

हे प्रभु! आप सृष्टि के उत्पत्तिकर्ता है, पालक है, धारक है, प्रलयकर्ता हैं। आप सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में विद्यमान हैं। मेरे हृदय प्रदेश में भी सूक्ष्म रूप से विद्यमान हैं। आपकी कृपा से मेरा अन्तःकरण दिन प्रतिदिन पवित्र हो रहा है। इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ, नमन करता हूँ।

अथवा

(क) प्रातःकाल शौच आदि से निवृत्त होकर शव आसन में 3 से 5 मिनट तक लेट जायें। आँखें बन्द करके, ईश्वर के निम्न गुणों का मानसिक चिन्तन, (स्तम्भावृत्ति प्राणायाम की स्थिति में), ईश्वर मेरे हृदय में विद्यमान है, इस भावना के साथ करें।

आनन्दमयी परमेश्वर, चैतन्यमयी परमेश्वर, सत्यमयी परमेश्वर

(ख) शव आसन से उठने से पहले मानसिक उच्चारण करें -

प्रभु ! आप मुझे आनन्द दे रहे हैं, स्वस्थ आयु दे रहे हैं, वेद ज्ञान दे रहे हैं। श्रेय मार्ग पर चलने की प्रेरणा दे रहे हैं, मैं हृदय से आपको धन्यवाद देता हूँ।

उपरोक्त निरन्तर अभ्यास के द्वारा धीरे-धीरे धारणा का केन्द्र बिन्दु आपका "हृदय प्रदेश" बन जायेगा।

धारणा का प्रयोग दो प्रकार से होता है। एक ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना करने के लिए और दूसरा किसी पदार्थ के स्वरूप को जानने के लिए। धारणा में सफलता के लिए यम नियम का पालन, आसन की सिद्धि, प्राणायाम का अभ्यास और इन्द्रियों पर संयम रखना अति आवश्यक है।

धारणा से मन एकाग्र, प्रसन्न व शान्त रहता है। ध्यान की प्रक्रिया शीघ्र नहीं टूटती है। टूटने पर मन पुनः शीघ्रता से ईश्वर-चिंतन में लग जाता है।

योग का सातवाँ अंग-ध्यान

ध्यान हमारे जीवन का सबसे उत्तम कार्य है। इसे जितनी अच्छी विधि व लगन से किया जाय, उतना ही लाभकारी है। ध्यान में सफलता, ईश्वर, प्रकृति व आत्मा का शुद्ध ज्ञान, व्यक्तिगत निरन्तर अभ्यास व शुद्ध आचरण पर निर्भर करती है। नियमित अभ्यास के बिना किसी भी कार्य में सफलता नहीं मिलती। अतः हमें ध्यान में सफलता के लिए निरन्तर अभ्यास व प्रयास करते रहना चाहिए। ध्यान में असफलता का कारण ईश्वर, प्रकृति व आत्मा का भ्रमित या अशुद्ध ज्ञान, अविद्या, मन्त्र के अर्थ व उसकी भावना का ज्ञान न होना, प्राण साधना की अज्ञानता, नियमित

अभ्यास व श्रद्धा की कमी, पर्याप्त समय न देना या शुद्ध आचरण का पालन न करना ही होता है।

शरीर के अन्दर मन को धारणा स्थल पर टिका कर ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव आदि का लगातार व अबाधित चिन्तन मनन करना अथवा वैदिक मंत्रों का अर्थ की भावना के साथ उच्चारण (विशेषकर मानसिक) करना ध्यान कहलाता है।

ईश्वरीय गुणों वाले शब्दों और वैदिक मंत्रों के अर्थ की भावना का निरन्तर मानसिक चिंतन करने से तीन लाभ होते हैं-

(1) शब्द/मंत्र के अर्थ की भावना साधक के अन्तःकरण में अपना एक विशेष स्थान बना लेती है। पर्याप्त अभ्यास के बाद अर्थ/भावना का चिंतन स्वयं ही जप व ध्यान प्रक्रिया में होता रहता है।

(2) आत्मा धीरे-धीरे परमात्मा के समीप होती जाती है और

(3) साधक को ईश्वरीय आज्ञाओं का पालन करने की प्रेरणा मिलती रहती है।

ध्यान में शरीर के साथ-साथ चित्त की चंचलता बिल्कुल नहीं रहती है। चित्त पूर्णतयः स्थिर हो जाता है। यह चित्त की सर्वश्रेष्ठ स्थिर अवस्था है। जिस प्रकार जल में डुबकी लगाकर मनुष्य कुछ समय के लिए पानी के भीतर रहकर संसार से सभी सम्बन्ध तोड़ लेता है, उसी प्रकार ध्यान में जीवात्मा परमेश्वर के बीच कुछ समय के लिए आनन्दस्वरूप ज्ञान में मग्न होकर फिर बाहर आ जाता है।

ध्यान का अभ्यास करने व ध्यान में बैठने से मन प्रसन्न व

शान्त होता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, द्वेष, अहंकार से छुटकारा मिलता है। बुद्धि की एकाग्रता बढ़ती है, नाड़ी तन्त्र व्यवस्थित रहता है। आत्मा ईश्वर की अनुभूति करता है। यह सभी प्रकार के मानसिक रोगों को कम करने में राम बाण का कार्य करता है। शारीरिक रोगों को कम करने में भी ध्यान प्रक्रिया कुछ सीमा तक सहायक होती है। टेंशन, डिप्रेशन, हृदय रोग आदि होने की संभावना कम होती है। जीवन में सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास होता है।

निरन्तर व नियमित ध्यान में बैठने से समाधि (योग का आठवां अंग) में प्रवेश होता है। इसमें साधक पूर्ण ध्यानावस्था में होता है और ईश्वर आनन्द का अनुभव करता है। वह जान लेता है कि अब उसने अगला जन्म देने वाले कारणों को समझ लिया है और उनको धीरे-धीरे क्षीण करता चला जाता है। मोक्ष का अधिकारी होने का प्रयत्न करता है।

मन की 3 शक्तियाँ / विशेषतायें

1. **विचार शक्ति** - इन्द्रियों के सम्पर्क में रहकर, मन में हर समय संकल्प-विकल्प, सत्य, असत्य, अच्छा, बुरा, कोई न कोई विचार आता रहता है और उसी के अनुसार व्यक्ति कर्म करता है। अपनी बुद्धि के अनुसार या दूसरों के कहने पर विचारों में परिवर्तन होता रहता है। अतः इस शक्ति का प्रयोग बुद्धि द्वारा सुविचार में लगायें।

2. **इच्छा शक्ति** - मन सदैव ज्ञानेन्द्रियों और बुद्धि के सम्पर्क में रहता है। अधिक समय तक ज्ञानेन्द्रियों के सम्पर्क के कारण, मन कुछ न कुछ सांसारिक वस्तु या ज्ञान को प्राप्त करके लगातार आत्मा को देने की चेष्टा करता रहता है। यह समुद्र की तरह है। इसका पेट

कभी नहीं भरता। इन्द्रियों के पास मन के पेट को भरने की क्षमता नहीं है। अतः आत्मा को सुबुद्धि द्वारा इसकी इच्छा शक्ति पर अंकुश लगाना चाहिए। मन की इच्छाओं को हृदय की तराजू से तोलना चाहिए। मन की उचित बात मानने वाला और उस पर शासन करने वाला व्यक्ति ही धर्म के क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर सकता है।

इच्छाओं पर नियन्त्रण

इच्छायें पूरी हों तो मोह व राग का जन्म होता है और यदि पूरी न हों तो क्रोध व द्वेष की उत्पत्ति होती है। इच्छाओं पर नियन्त्रण रखने के निम्न उपाय हैं :-

(i) विकल्प का चुनना बन्द करके केवल आवश्यकता पर ध्यान दें।

(ii) आवश्यकता और इच्छा के अन्तर को समझें।

(iii) धन का अपव्यय करना पाप है। उसे आडम्बर में खर्च करने की अपेक्षा सामाजिक कार्यों व दान में लगाना चाहिए।

(iv) स्वाध्याय द्वारा अपनी बुद्धि को मेधा बुद्धि बनाकर मन व इच्छाओं पर नियन्त्रण करना सीखना चाहिए।

3. **तर्क शक्ति** – निर्णायक बुद्धि के अभाव में यह अधिकतर अच्छे कार्यों को या तो न करने के लिये तर्क देता रहता है या उनको टालने का संकेत बुद्धि को देता रहता है। यह इसकी प्रकृति है इसकी नकारात्मक प्रकृति पर विजय पाने के लिए अपनी बुद्धि को निर्णायक बनायें।

मन को संयम में रखने के उपाय

मन प्रकृति का पुत्र है। यह ईश्वर द्वारा मनुष्य को दी गई अद्‌भुत देन है। यह मुख्य रूप से आत्मा के पास हृदय में रहता है।

यह एक जड़ पदार्थ है। यह जीवात्मा को कर्म कराना और बाहरी विषयों के ज्ञान कराने का साधन है जैसे टेलीफोन (यन्त्र)। इसको नहीं पता होता है कि उसके द्वारा क्या बात हो रही है। मन के बारे में निम्न दो तथ्यों को जानना और उनमें विश्वास रखना अनिवार्य है।

1. **मन जड़ है** - जड़ ही समझना चाहिये।

2. **जीवात्मा** - मन को चलाने वाला है। ईश्वर ने आत्मा को शरीर व मन प्रयोग करने के लिए दिया है। आत्मा इसका मालिक नहीं है लेकिन आत्मा की इच्छा के बगैर मन संकल्प-विकल्प नहीं कर सकता है।

3. **मन का संयम रखने के लिए साधक** -

(क) अपने अन्दर सतोगुण की मात्रा को बढ़ाये।

(ख) स्व-स्वामी सम्बन्ध को समझे अर्थात् अपने स्वयं के शरीर, मन और जीवन पर पूर्ण अधिकार रखे।

(ग) ईश्वर प्रणिधान का जीवन में पालन करे।

(घ) ईश्वर, प्रकृति व आत्मा का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर ले।

(ङ) संसार के सभी जड़ पदार्थों को वास्तव में अनित्य समझ ले।

(च) वेदों के ज्ञान व ऋषियों के निर्णय पर विश्वास कर ले।

(छ) वेद ज्ञान के अनुसार सही निर्णय लेकर मन को कार्य करने का आदेश दें।

(ज) उपासना काल व व्यवहार काल में यम-नियम का पालन करते हुए मन में सदैव शुभ विचारों का चिन्तन करे।

(झ) विषय भोगों में सुख की अनुभूति कम करें। अपने मन और इन्द्रियों पर संयम रखे।

(ञ) फल की आशा से रहित (पुत्रैषणा, लोकैषणा, वित्तैषणा रहित) निष्काम भाव से कर्म करे।

(ट) हर समय प्रसन्न, सन्तुष्ट, निर्भय, पुरुषार्थी व सन्तोष की भावना बनाये रखे।

अज्ञानता सबसे बड़ा अभिशाप

''अज्ञानी रहने से जन्म न लेना ही अच्छा है क्योंकि अज्ञान ही समस्त विपत्तियों का मूल है'' - प्लेटो

'प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये''

- महर्षि दयानन्द सरस्वती

समस्त विकृतियों, बुराइयों, शारीरिक एवं मानसिक अस्वस्थता, सामाजिक कुरीतियों, आर्थिक व आध्यात्मिक शोषण का कारण मुख्य रूप से अज्ञान और अविद्या ही है। इसीलिए कुछ लोग जीवन की समस्त सुविधायें प्राप्त होने पर भी दु:खी व अशान्त देखे जाते हैं जबकि कुछ व्यक्ति साधनों व धन की कमी होने पर भी, सुख शान्ति और आनन्द का अनुभव करते हैं।

ईश्वर ने केवल मनुष्य को ही शुभ कर्म व ज्ञान दान करने का अधिकार दिया है। किसी अन्य योनि के प्राणी को नहीं। ध्यान में सफलता प्राप्त करने के लिए कर्मफल व्यवस्था का ज्ञान होना आवश्यक है। इसलिए कर्मफल विषय के वैदिक ज्ञान को सरल भाषा में आपके साथ सांझा करने का प्रयत्न किया जा रहा है ताकि सभी भाई, बहिन शारीरिक, आत्मिक व सामाजिक उन्नति पूर्ण रूप से कर सकें। अन्धविश्वास आध्यात्मिक व आर्थिक शोषण और

समाज में फैली भ्रान्तियों से बच सकें।

नोट :- इस पुस्तक में दिया गया कर्मफल व्यवस्था सम्बन्धित सभी ज्ञान वेदानुसार है। इससे सहमत होना या न होना अथवा पालन करना या न करना-आपका निर्णय है। मेरा एकमात्र उद्देश्य इस ईश्वरीय ज्ञान को सरल भाषा में आप तक पहुँचाना है।

(15) कर्मफल व्यवस्था का वैदिक स्वरूप

(i) यश-अपयश कर्मों का खेल है।

आजकल अधिकतर मनुष्य यह जानने के लिए उत्सुक रहते हैं कि उनका भविष्य कैसा होगा, उनका बच्चा अमीर बनेगा या गरीब, कितनी विद्या प्राप्त करेगा, कैसा कारोबार करेगा, कितनी आयु पायेगा आदि-आदि। इस जिज्ञासा को तृप्त करने के लिए वे ज्योतिषियों, तान्त्रिकों, पण्डितों और तिगड़मी ठगों के पास जाते हैं। यह ज्योतिषी आदि ऐसे व्यक्तियों को (जिनको कर्मव्यवस्था का ज्ञान नहीं है) वहम में डालकर, भय दिखाकर, मन घढ़न्त भयंकर होनी को टालने का वादा करके, उनको गुमराह करते रहते हैं, ठगते रहते हैं, उनकी अज्ञानता व विपरीत परिस्थिति का पूर्ण रूप से अनुचित लाभ उठाते हैं।

वास्तव में यह सुख-दु:ख, हानि-लाभ, उतार-चढ़ाव, संयोग-वियोग-वर्तमान में एवं पूर्व जन्मों में किये गये कर्मों का खेल है। **इससे निराश नहीं होना चाहिए। इसलिए अपने व अपने बच्चों का उज्जवल भविष्य बनाने का एकमात्र उपाय है-सदाचार, कठिन परिश्रम एवं शुभ कर्म करना क्योंकि कर्मों के मामले में केवल ईश्वर और कर्मकर्ता ही दो पक्ष हैं। तीसरे का इसमें कोई दखल नहीं।**

(ii) पहले सोचें-फिर कर्म करें

कर्म शरीर, मन, वाणी-तीनों से किये जाते हैं। इनके सदुपयोग से हम देव योनि प्राप्त कर सकते हैं और दुरुपयोग (नीच कर्म, पाप आदि करना) से मृत्यु के उपरान्त, पशु, पक्षी, कीट, पतंग या दरिद्र मानव जीवन में जा सकते हैं। हमारे द्वारा किये गये कर्म तीन श्रेणियों में बंट जाते हैं :-

(1) **क्रियामान कर्म :** हम इस जन्म में आकर जो कर्म करते हैं वे क्रियामान कर्म हैं। इनमें से कुछ कर्म तो मनुष्य प्रारब्ध कर्म (पिछले जन्मों के संचित कर्मों का फल) भोगने के लिए करता है और कुछ नये कर्म करता है। नये कर्मों द्वारा पैदा हुए संस्कार/वासनाएँ हमारे चित्त में, भविष्य में फल देने के लिए इकट्ठा हो जाते हैं। इनको संचित कर्मों का कोष कहते हैं।

समय आने पर (फल देने के लिए) कुछ क्रियमान कर्म संचित से प्रारब्ध में बदल जाते हैं।

(2) **संचित कर्म :** यह पिछले जन्मों में किये गये कर्मों (जिनका फल अभी मिलना है) का बकाया कोष है। आप इन्हें कर्मों के बैंक में जमा अपना कर्मकोश समझ सकते हैं। आपके द्वारा किये गये क्रियामान कर्म इस कर्म कोश में (फल देने के लिए) पंक्ति में लग जाते हैं। आपकी भविष्य की योनियाँ इन्हीं कर्मों से निश्चित होती हैं। अत: अपना भविष्य आप स्वयं लिखते हैं।

(3) **प्रारब्ध कर्म :** ये कर्म हमारे संचित कोश में फल भोगने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। फल शुरू होने पर यह प्रारब्ध कर्म बन जाते हैं। इनका फल सुख दु:ख के रूप में भोगना ही है। इनके भोग फल पर हमारा अधिकार नहीं है। **प्रारब्धानुसार ही हमें वंश,**

धन, योनि, आयु, सन्तान, सुख-दुःख आदि मिलते हैं। इसके लिए ग्रह दोष, नक्षत्र दोष आदि मानना व उनका उपाय करना अन्ध विश्वास है। धन का अपव्यय है।

(iii) अगला शरीर (अच्छा/बुरा) - आपके हाथ में है।

यह संसार कर्म क्षेत्र है। सुख-दुःख, अमीरी-गरीबी, यश-अपयश, विद्या, सांसारिक वस्तुएँ आदि सब कर्माधीन हैं। परमात्मा ने जीवों को अपने कर्मों का फल भोगने, नये कर्म करने अथवा/ और मोक्ष प्राप्त करने के लिए यह सुन्दर संसार रचा है।

आपका आज तो आज, आपके कल का निर्माण भी आपके वर्तमान कर्म ही करेंगे, बेशक जो कल बीत गया उस पर अब आपका जोर नहीं रहा। लेकिन भविष्य में कर्म करने में आप पूर्णतयाः स्वतंत्र हैं। आप जैसा शरीर (योनि) आगे पाना चाहें, तदानुसार पुण्य या पाप कर्म करके पा सकते हैं।

परमात्मा न किसी के पाप लेता है और न ही पुण्य। ईश्वर पाप क्षमा भी नहीं करता है। न्यायकारी है। वह अपने द्वारा बनाये गये कर्म फल व्यवस्था के नियमों का न तो स्वयं उल्लंघन करता है और न किसी को अतिक्रमण करने का अधिकार देता है। ये पिछले कर्म ही थे कि पुरुषोत्तम राम को सिंहासन के स्थान पर वनवास मिला। योगेश्वर कृष्ण का जन्म काल कोठरी में हुआ और युधिष्ठिर वन-वन भटके। आपने समाज में भी ऐसे उदाहरण देखे होंगे जब कोई व्यक्ति निर्धन से धनवान या अमीर से फकीर बन गया, उसका जीवन यश से अपयश में बदल गया। केवल अपने कर्मों के कारण।

आइये ! सत्य कर्म करते हुए पाप और नीच कर्मों से बचते

हुए, अपना जीवन सार्थक करें, और नीच योनियों से भी बचें।

कर्म सम्बन्धी वैदिक मान्यतायें

आजकल समाज में अनेक भ्रान्तियाँ फैली हुई हैं जैसे तीर्थ स्थल के दर्शन करने से, तीर्थ स्नान से, दान देने से, ग्रहों की पूजा से, दरगाह पर चद्दर चढ़ाने से पाप मिट जाते हैं अथवा मन्नत पूरी हो जाती है।

समाज में विद्यमान कोई कानून, नियम अथवा प्रथा सही है या नहीं, इसका निर्णय केवल उस देश का संविधान करता है। कोई अन्य पुस्तक या मत नहीं। अतः जिस व्यक्ति को देश के संविधान का पूर्ण व ठीक-ठीक ज्ञान नहीं है, और ऐसा व्यक्ति यदि उस कानून, नियम अथवा प्रथा पर कोई विचार प्रकट करता है तो ऐसे विचारों की समीक्षा संविधान के अनुसार ही करनी चाहिये। यदि ऐसे विचार संविधान की कसौटी पर खरे नहीं उतरते तो उनको मान्यता देना उचित नहीं है।

ठीक इसी प्रकार आध्यात्मिक क्षेत्र में यदि कोई मान्यता या प्रथा धर्म के संविधान "वेद" के अनुसार नहीं है तो उसे हमें मनुष्यकृत ग्रन्थ आदि के आधार पर मान्यता देने से बचना चाहिये। आर्ष ग्रन्थ (वेद दर्शन, उपनिषद आदि) का पूर्ण व सही ज्ञान न होने के कारण अथवा जान बूझकर कुछ गुरु एवं चालाक पंडित, ज्योतिषी लोगों की सादगी, अज्ञानता व भ्रमित स्वभाव की कमजोरी का अनुचित लाभ उठा रहे हैं और अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए उनका आर्थिक शोषण करते रहते हैं।

समाज में फैली भ्रान्तियों का वर्णन करने से पहले, नौ वैदिक मान्यताओं का उल्लेख किया जायेगा। आजकल समाज

का एक बड़ा वर्ग वेद और ऋषि-मुनियों द्वारा लिखे ग्रन्थ भी पढ़ना नहीं चाहता है और वैदिक मान्यताओं को भी महत्त्व नहीं देता है। यह एक दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है। ईश्वर ऐसे मनुष्यों को सद्बुद्धि दे, उनकी सहायता करे। ईश्वर से हमारी यही प्रार्थना है।

वैदिक मान्यताएँ

(1) कर्म कर्ता ही भोगता है - अन्य नहीं।

ईश्वरीय व्यवस्था का अटल नियम है कि जो कर्म करेगा, वही उसका दु:ख सुख रूपी फल पायेगा, दूसरा नहीं।

कुटुम्ब में एक व्यक्ति द्वारा पाप करके धन से सारे परिवार का निर्वाह करने पर पाप केवल करने वाले कर्ता को ही लगता है लेकिन पाप का कुछ फल परिवार के सदस्यों को भी भोगना पड़ता है।

वर्तमान में मनुष्य बुद्धिमान हो, विद्वान हो, अमीर हो, पण्डित हो, मूर्ख हो या शूरवीर हो, उसने पूर्व जन्म में जैसा शुभ या अशुभ कर्म किया है उसका वैसा ही फल उसे या तो इस जन्म में अथवा अगले जन्मों में भोगना ही पड़ता है।

एक: प्रजायते अन्वुरेक एव प्रलीयते।
एकोऽनुभुङ्क्ते सुकृतमेक एव च दुष्टकृतम्।।

(मनु 4/240)

वाल्मीकि रामायण (3/63/4) में श्री राम स्वयं स्वीकार करते हैं कि वे अपने पूर्व कर्मों का फल भोग रहे हैं। आदरणीय सीता माता भी अपने भाग्य में विषमता का कारण पिछले जन्मों के पाप मानती हैं (वाल्मीकि रा0 113/36)। पिछले जन्मों के पापों के कारण ही गांधारी ने अपना वंश खो दिया (महाभारत)। **अत:**

संकट या दुःख आने पर ग्रह दोष, नक्षत्र दोष आदि मानना व उनके उपाय करना या करवाना केवल अन्ध विश्वास है। पैसे और समय को बरबाद करना है। इसके लिए परिश्रम करना चाहिए, किसी विद्वान या विशेषज्ञ से सलाह लेनी चाहिए और ईश्वर से दुःख सहने की शक्ति की प्रार्थना करनी चाहिये।

करने से पहले विचार बन्दे, फिर कुछ नहीं हो सकेगा।
शुभ कर्म से हंसेगा तू, दुष्कर्म से केवल रो सकेगा।।

(2) दूसरे के कर्मों का प्रभाव और समाज दंड व कर्मफल में अन्तर

सामाजिक दंड समाज में अपराध करने पर सरकार द्वारा व्यवस्था बनाने हेतु दिया जाता है। कर्मफल पाप करने वाले को ईश्वर द्वारा दिया जाता है। सामाजिक दंड से व्यक्ति चालाकी से या मृत्यु होने पर बच सकता है कर्मफल से नहीं। अतः दोनों में अन्तर है।

मान लो पिता ने चोरी की और पकड़ा गया तो सरकारी दंड बाप को ही मिलेगा–बेटे, बेटी, पत्नी को नहीं। इस पाप का फल भी केवल बाप को इस योनि या अगले जन्मों में समय आने पर ईश्वर द्वारा अवश्य दिया जायेगा।

पिता या घर के किसी के दुष्कर्म का प्रभाव परिवार पर भी पड़ता है। लोग उन्हें घृणा की दृष्टि से देखते हैं। उनसे सम्बन्ध रखने में तैयार नहीं होते।

सरकार या समाज के प्रतिनिधियों (नेताओं) के कर्मों का

अच्छा या बुरा असर भी नागरिकों पर पड़ता है क्योंकि उनके निर्णय पूरे समूह की ओर से किये गये माने जाते हैं। इनका दंड भी समाज (समूह) को थोड़े या लम्बे समय के लिए भोगना पड़ता है। (उदाहरण-देश विभाजन के समय हुई गलतियाँ) परन्तु कर्मफल समय आने पर खोटी नीयत से कर्म करने वाले नेता या समाज मुखिया को ही भुगतना पड़ेगा। इसलिए चरित्रवान एवं योग्य नेता को ही समाज हित में चुनना चाहिये।

(3) कर्म फल से कोई बच नहीं सकता

समाज में दो भ्रान्तियाँ हैं-(1) क्या अपराध का दंड भोग लेने पर ईश्वर भी उसके लिए दु:ख देता है? क्या मन व वाणी द्वारा किये गये पाप/अपराध का फल भी ईश्वर देता है? दोनों का उत्तर है हाँ, अवश्य देता है।

दंड किसी देश के कानून को तोड़ने के लिए, समाज में व्यवस्था बनाने हेतु सरकार द्वारा दिया जाता है। इसके अंतर्गत अधिकतर शारीरिक व वाचिक ही पापकर्म आते हैं। मनुष्य सामाजिक दंड से अपनी चालाकी, झूठी गवाही, कानून की कलाबाजी, धन धान्य, न्यायाधीश के अपूर्ण ज्ञान या थोड़ा जुर्माना देकर बच सकता है। मृत्यु की परिस्थिति में भी बच जाता है। लेकिन मनुष्य जो पाप कर्म मन और बुद्धि से करता है, उसका फल ईश्वर ही देता है-सरकार उसका दंड नहीं दे सकती।

मन, वाणी, शरीर-प्रत्येक के द्वारा किये गये पाप अथवा पुण्य कर्मों के लिए ईश्वर ने कर्मफल व्यवस्था बनायी है। ईश्वर के न्याय में समानता है। वह न्यायकारी है। ईश्वर का महान् कम्प्यूटर हमारे चित्त में लगा हुआ है। मृत्यु के उपरान्त सूक्ष्म शरीर

के द्वारा सदैव आत्मा के साथ रहता है। यह कम्प्यूटर सब कुछ ठीक-ठीक रिकार्ड करता रहता है। अतः ईश्वर को साक्ष्य की जरूरत नहीं पड़ती है। ईश्वर रिश्वत व सिफारिश नहीं मानता। वह किसी गुरु, पण्डित या ज्योतिषी के प्रभाव में नहीं आता, वह किसी भी उपाय-पूजा, हवन, प्रार्थना, टोटके आदि के आधार पर अपनी बनाई हुई कर्मफल व्यवस्था में हस्तक्षेप नहीं करता है। यदि वह किसी गुरु के प्रभाव में आ जाये या पूजा आदि को महत्त्व देने लगे तो पक्षपाती व अन्यायकारी बन जायेगा जबकि ये गुण उसके नहीं हैं।

ईश्वर मन व वाणी द्वारा किये गये पापों का कुछ दंड तो मानसिक रोगों के रूप में इसी जन्म में दे देता है। बाकी अन्य पाप कर्मों का उचित दंड (दुःख) देकर या निम्न योनियों में भेजकर हमारे कुसंस्कारों को धो देता है ताकि दंड भोगने के पश्चात, निर्मल बुद्धि के साथ, हम पुनः मनुष्य योनि प्राप्त कर सकें। अच्छे कर्म कर सकें।

(4) पाप और पुण्य : दो अलग-अलग खाते

ईश्वर की कर्मव्यवस्था के अनुसार मन, वाणी या शरीर द्वारा किये गये सभी पाप और पुण्य कर्मों का कभी भी आपस में समायोजन (Adjustment) नहीं होता है। पाप और पुण्य कर्मों का आपस में जोड़ घटा (Pluse Minus) नहीं होता। पाप कर्म और पुण्य कर्म-दोनों का फल ईश्वर अलग-अलग देता है। ऐसी व्यवस्था नहीं है कि मनुष्य के 10 पुण्यों में से दो पाप कम कर दिये जायें और शेष आठ पुण्य कर्मों का फल देकर छुट्टी कर दी जाये। इसके विपरीत, दो पुण्य कर्मों का फल न दिया जाए और

दस के बजाय केवल आठ पाप कर्मों का दण्ड ही दिया जाए।

ईश्वर न्यायकारी है। वह पुण्य के फल ''सुख'' से किसी को भी वंचित नहीं करता है। यदि ईश्वर पाप और पुण्य कर्मों का समायोजन करने लग जाए तो ज्यादा पुण्य करने वालों को तो ''दु:ख'' का अनुभव होगा ही नहीं। ऐसे लोग अहंकारवश पथभ्रष्ट होने लग जायेंगे। इसी प्रकार अधिक पाप करने वाला व्यक्ति सदैव दु:ख में ही रहेगा। वह अपने शुभ कर्म का फल कभी नहीं भोग पायेगा जो कि न्याय संगत नहीं है।

नोट :- उपासना, यज्ञ (हवन), ध्यान, परोपकार करने पर ईश्वर हमें दु:ख सहने की शक्ति देता है। भविष्य में पाप कर्म न करने की प्रेरणा देता है। शुभ कर्मों के लिए प्रोत्साहित करता है। मानसिक रोगों (भय, काम, क्रोध, लोभ, अहंकार आदि) से मुक्ति प्राप्त करने में सहायता करता है।

कर्म से पहले सोचिए, कर्म का परिणाम।
पापों से बच न पाएगा, मानव ऐसा जान।।

(5) कर्मों के आगे ईश्वर भी बेबस

ईश्वर को कुप्रबन्ध पसन्द नहीं है। कर्मानुसार फल देना ईश्वर का अटल नियम है। वह अपने किसी भी नियम में-किसी भी प्रकार की-किसी के लिए भी-कभी भी-ढील नहीं देता है। अपने अटल नियमों के कारण ईश्वर अपनी व्यवस्था में पूणतया: बंधा है।

यह धारणा पूर्णतय: गलत है कि ज्योतिषीय उपाय समस्या अथवा दु:ख के प्रभाव को कम कर देता है, समस्या से राहत दिलाता है और परेशानियों का हल निकालने में मदद करता है।

पण्डित, मौलवी और ज्योतिषी लोग इसी भ्रान्ति का लाभ उठाकर लोगों का आर्थिक शोषण करते हैं।

ईश्वर यदि अपने ही द्वारा बनायी गई कर्म व्यवस्था सम्बन्धी एवं अन्य नियमों को तोड़ने लगे तो उसकी सारी व्यवस्थाएं चरमरा जायेंगी और विश्व बे-लगाम घोड़ा बन जायेगा।

ईश्वर कर्म फल में किसी भी प्रकार की रियायत नहीं देता है अन्यथा उसका दरबार भी सरकारी या सांसारिक कार्यालय बन जायेगा। कोई कर्मों में रियायत अथवा आरक्षण मांगेगा, कोई आयु में, कोई दुःख में और कोई धन दौलत में आदि-आदि। परिणाम स्वरूप मनुष्य शुभ व अच्छे कर्म करने पर ध्यान देने के बजाय पाप कर्म करने में अधिक रुचि लेगा। और, निसन्देह यदि ऐसा होता है तो मनुष्य की ईश्वर के प्रति आस्था व श्रद्धा सदा के लिए समाप्त हो जायेगी। ईश्वर निश्चय ही, अपने प्राणियों, पुत्रों व पुत्रियों के लिए, ऐसी कुव्यवस्था की कल्पना भी नहीं कर सकता।

आपो अद्य अन्व चारिषम रसेन समगस्मीह।
पयस्वान् अग्ने आ गीह तं मा सं सृज वर्चसा।।

(ऋग्वेद मंत्र - 10/9/9)

भावार्थ :- सभी प्राणियों को उनके कर्मों का फल इस जन्म में या अगले जन्म में अवश्य प्राप्त होता है।

(6) फल दाता केवल ईश्वर ही

कर्मों का फल ईश्वर के आधीन है। वेदों, उपनिषदों एवं आर्ष ग्रन्थों के अनुसार ईश्वर सर्व-शक्तिमान है। स्वयं दंड देता है। **किसी दूसरे व्यक्ति, सत्ता, ग्रह, नक्षत्र, देवता आदि से न तो दंड दिलवाता है और न ही उनकी सिफारिश मानता है।**

वास्तव में जड़ देवता सिफारिश करने योग्य भी नहीं हैं।

मनुष्य को स्वतन्त्रता पूर्वक कर्म करने का पूर्ण अधिकार है। उसे इस अधिकार से वंचित रखने पर सब पुण्य और पाप कर्म-अच्छे अथवा बुरे-का श्रेय ईश्वर को जायेगा और मनुष्य को किसी भी प्रकार से दोषी मानना न्यायसंगत नहीं होगा। ऐसी परिस्थिति में सरकार द्वारा भी दोषी/अपराधी व्यक्ति को दंड देने का अधिकार नहीं होना चाहिये। लेकिन यह संभव नहीं है। सब काम भगवान के जिम्मे डालना और कर्म कर्ता का बरी (दोषमुक्त) हो जाना कर्म व्यवस्था के नियमों के विरुद्ध है। समाज हित में बिल्कुल नहीं है।

ईश्वर मनुष्य को गलत कार्य करने से पूर्व उसको, आत्मा के द्वारा, हृदय में भय, डर आदि के साथ-साथ बुरे कर्म न करने का संकेत निरन्तर देता रहता है और शुभ काम करने पर प्रेरणा और प्रसन्नता का भाव देता है। यदि ईश्वर शुभ या पाप कर्म खुद करवायेगा तो ऐसे संदेशों की कोई सार्थकता नहीं रह जाती है।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

(गीता 2/47)

भावार्थ :- कर्म करने का अधिकार मनुष्य का है जबकि फल देने का अधिकार ईश्वर का है।

(7) समान कर्मों का समान दण्ड जरूरी नहीं (विशेष परिस्थितियों में)

1. पांच वर्ष तक के बच्चे के कर्म :-

मान लो एक 5 वर्ष के बच्चे ने खेलते-खेलते अपने पिता व माता को चाकू मार दिया। खून निकल आया। ऐसा ही कर्म चोर ने चोरी के दौरान किया। इन दोनों घटनाओं का फल एक सा नहीं मिलेगा। चोर को सख्त और बच्चे को बहुत कम अथवा कोई

दण्ड नहीं मिलेगा।

कारण - चोर ने दुर्भावना से और बच्चे ने भोलेपन में चाकू मारा।

2. अनजाने में किये कर्म/कुकर्म का फल जान-बूझकर किये गये कर्म / कुकर्म की अपेक्षा कम मिलेगा।

मान लो कुछ आतंकियों ने गांव वाले मार दिये। गांव वालों ने भी मुठभेड़ में 2 आतंकी ढेर कर दिये लेकिन गांव का एक व्यक्ति जख्मी हो गया गांव वालों द्वारा। आतंकियों को कठोर दंड और गांव वालों को मामूली दंड भोगना पड़ेगा।

3. भूल से किये गये पाप और जान-बूझकर किये गये पाप का फल भी अलग-अलग होता है।

मान लो कर्मचारी 'ए' बगैर घूस के कोई काम नहीं करता। कर्मचारी 'बी' कभी रिश्वत नहीं लेता। कर्मचारी 'बी' की जेब में एक दिन भूल से 20/- रुपये चले गये। उसे इसका पता नहीं चला। यह भूलचूक सरकारी खजाने में भी दफन हो गई। इस उदाहरण में कर्मचारी 'ए' को अधिक और कर्मचारी 'बी' को बहुत कम दण्ड मिलेगा।

4. दूसरे की अधीनता के कारण किये गये कुकर्मों का फल कर्ता को कम और आदेशकर्ता को अधिक भोगना पड़ता है - प्रभु अन्तर्यामी हैं, सर्वान्तर्यामी हैं। असली कुकर्मी को जानते हैं। इस श्रेणी में डान, सुपारीदाता, कुछ राजनेता, कुछ अधिकारी, माफिया गैंग आदि आते हैं।

8. कुछ कर्मों का फल नहीं

वेदों के अनुसार मनुष्य द्वारा कुछ विशेष परिस्थितियों में किये गये कर्मों का फल दु:ख, सुख रूप में उसको नहीं मिलता है।

(1) **अबोध (नासमझ) बच्चे के द्वारा किये गये कर्म**

(2) **बेहोशी में किये गये कर्म** (केवल मानसिक रोग स्थिति में)

(3) **कर्तापन के अभिमान के बिना किये गये कर्म**–उदाहरण–

(क) जज द्वारा अपराधी को (कर्तव्यानुसार) फांसी की सजा देना और

(ख) सेना द्वारा युद्ध भूमि में दुश्मन के सैनिकों एवं शहरी व ग्रामीण को हताहत करना।

उपरोक्त कर्म ''मैं ही कर्ता हूँ'' इस अभिमान को छोड़कर किये जाते हैं। अतः सर्वशक्तिमान ईश्वर ऐसे कर्मों को दंडनीय नहीं बनाता है।

(4) समष्टि (सर्वलोक) कल्याण हेतु किये गये कर्म- उदाहरण

(क) योगीराज श्रीकृष्ण ने महाभारत में युधिष्ठिर से जबरदस्ती आधा झूठ बुलवाया ताकि द्रोणाचार्य को मारकर हजारों सैनिकों को हताहत होने से बचाया जा सके। कल्याणार्थ झूठ बोलना पाप की श्रेणी में नहीं आता है।

(ख) योगीराज कृष्ण ने धर्म रक्षा हेतु जयद्रथ को मरवाने के लिए अर्जुन को अधर्म का सहारा लेने की प्रेरणा दी।

(ग) इसी प्रकार धर्म रक्षा हेतु श्री कृष्ण ने कर्ण और दुर्योधन को मरवाने से पहले उनके द्वारा किये गये कुकर्मों से उनको अवगत कराया और महाभारत का भीषण युद्ध समाप्त हुआ।

उपरोक्त चारों उदाहरणों में कर्म करने की प्रेरणा देने में श्रीकृष्ण का अपना कोई स्वार्थ नहीं था सिवाय सत्य और धर्म की स्थापना करना।

भ्रान्तियाँ

(क) क्या कर्मों से छुटकारा पाया जा सकता है-नहीं।

हाँ एक उपाय है- यह लम्बा, जोखिम भरा, और बहुत कठिन है। उपाय निम्न है-प्रयत्न करके देखें -

(क) यमों का पालन करें - यह सामाजिक नियम हैं। गुण, कर्म, स्वभाव, वाणी व आत्मा से अहिंसा, सत्य, अस्तेय (चोरी न करना), ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह (आवश्यकता से अधिक वस्तुओं व धन आदि का संग्रह न करना) का पूर्णतया: पालन करें।

(ख) नियमों का पालन करें - यह व्यक्तिगत नियम हैं। शौच (शरीर और मन की शुद्धि), संतोष (संतुष्ट और प्रसन्न रहना), तप (स्वयं से अनुशषित रहना) स्वाध्याय (आत्मचिंतन व वेदों का स्वाध्याय करना), ईश्वर प्रणिधान (ईश्वर के प्रति पूर्ण श्रद्धा एवं समर्पण) को अपने जीवन का अनिवार्य हिस्सा बनायें।

(ग) प्रतिदिन योग दर्शन के अनुसार निराकार ईश्वर का ध्यान करें।

(घ) परोपकार करें - अपनी शारीरिक शक्ति के अनुसार श्रम दान और आर्थिक स्थिति के अनुसार धन व वस्तुओं का दान करते रहें।

उपरोक्त विधि के अनुसार आपका मन व बुद्धि निर्मल हो जायेगी। इस अवस्था पर पहुँचकर आपका भौतिक शरीर केवल प्रारब्ध कर्म भोगने के लिए चालू रहता है। आपके संचित कर्म योग अग्नि में जल जाते हैं। प्रारब्ध कर्म भोगने के बाद आपकी आत्मा मोक्ष प्राप्त कर लेती है।

नोट - इस अवस्था तक पहुँचते-पहुँचते आपने जो कठिनाईयाँ और बाधाओं का सामना किया, अभाव सहन किये- वे भी आपके

पापों के दंड ही माने जायेंगे। आपने निम्न योनियों में न जाकर एक बार में ही सब कष्ट-दण्ड भोग लिए। बहरहाल, पाप बिना दण्ड दिये नहीं छोड़ता है।

(ख) सब किस्मत के अनुसार होता है - नहीं, नहीं, नहीं

कर्मों के बारे में दूसरी भ्रान्ति है-सब पहले से लिखी किस्मत के अनुसार होता है। मनुष्य इसमें कोई परिवर्तन नहीं कर सकता। आपके जीवन में दु:ख-सुख, यश-अपयश, उन्नति, गिरावट आदि के लिए दो तत्त्व जिम्मेदार हैं।

(1) **प्रारब्ध :-** यह हमारे संचित कर्मों का वह भाग है जिसे भोगने के लिए ईश्वर ने हमें यह शरीर दिया है। इसके फल पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं है। इसे किस्मत या पूर्व जन्मों का लाभ या घाटा मान सकते हैं। यदि आपके प्रारब्ध में पहले से ही कुछ जमा है तो थोड़े परिश्रम से ही आपको सफलता मिल जायेगी अन्यथा आपको अधिक मेहनत करनी पड़ेगी।

(2) **परिश्रम :-** मनुष्य कर्म करने में स्वतंत्र है। इस पर हमारा पूर्ण अधिकार है। परिश्रम अगले जन्मों के प्रारब्ध (किस्मत) की नींव डालता है। परिश्रमी व्यक्ति को मेहनत करने का कुछ फल इस जन्म में व शेष फल आने वाले जन्मों में अवश्य मिलता है।

प्रारब्ध+परिश्रम पर ही हमारा वर्तमान निर्भर है केवल किस्मत पर नहीं। हम जो कुछ करते हैं वह पूर्वकृत कर्मफल और वर्तमान में किये परिश्रम के आधीन है। **अत: भाग्य हमारे या किसी ग्रह/देवी देवता के वश में नहीं हैं लेकिन पुरुषार्थ हमारे हाथ में है।**

(ग) क्या गुरु

(i) शिष्यों के पाप दूर कर उन्हें स्वयं भोग सकता है?

(ii) सीधी पहुँच ईश्वर के दरबार में कर सकता है?

(iii) आपको जीते जी मुक्ति दिला सकता है?

उपरोक्त तीनों प्रश्नों का उत्तर है- नहीं, कदापि नहीं।

ईश्वर सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, सर्वव्यापक और सर्वान्तर्यामी है। उसके वैदिक कर्म फल सिद्धान्त (1) कर्म कर्ता ही भोक्ता (2) पाप-पुण्य के कर्मों के दो अलग-अलग खाते एवं (3) सुख-दुख ग्रहों के आधीन नहीं- अटल हैं। ईश्वर इन सिद्धान्तों में कभी भी परिवर्तन नहीं करता है।

उपरोक्त तीनों धारणायें केवल मिथ्या प्रचार हैं। कर्मफल सिद्धान्तों के विरुद्ध हैं। ईश्वर कर्मचारी नहीं है जो मनुष्यों की सिफारिश मानकर अपने सिद्धान्तों में तबदीली करे और अन्यायकारी कहलाये।

आजकल अनेक गुरु बीमारियों का फल भोगते हुए नजर आते हैं। कुछ तो अपने दुष्कर्मों के कारण जेलों में पड़े हुए हैं। ऐसे में अपने कर्मों का फल भोगते हुए कोई गुरु क्या किसी शिष्य की, किसी भी प्रकार की सहायता कर पायेगा, बिल्कुल असंभव है।

अवश्यमेव भोक्तव्यं, कृत कर्मा शुभाशुभ

(छः उपनिषद)

भावार्थ :- शुभ-अशुभ किये कर्मों का फल सबको अवश्य भोगना पड़ता है।

आत्मान्त गुणानामात्मान्तरेऽकारणत्वात।।

(वैशेषिक 6/1/5)

भावार्थ- एक आत्मा के किये हुए कर्म का फल दूसरी आत्मा को नहीं मिल सकता है।

(घ) सब कुछ ईश्वर ही करता है - गलत! गलत!

तेरी इच्छा के बिना, हे प्रभु मंगल मूल।
पत्ता तक हिलता नहीं, खिले न कोई फूल।

उपरोक्त धारणा वेदों के अनुसार बिल्कुल गलत है।

यदि ईश्वर ही मनुष्य से अच्छे या बुरे कार्य करवाता है अथवा प्राकृतिक आपदा (विपत्ति) देता है तो इनके फल रूप में सुख दु:ख का और दण्ड का भागी एवं जिम्मेदार ईश्वर ही बनेगा-''मनुष्य नहीं'' क्योंकि कर्ता ही भोक्ता का सिद्धान्त ईश्वर ने स्वयं स्थापित किया है। ऐसी स्थिति में सरकार द्वारा अपराधी को सामाजिक दण्ड देना भी उचित नहीं होगा। **जरा सोचिए ईश्वर क्या अन्यायकारी है जो अपनी करनी का दण्ड मनुष्यों को दिलवायेगा। इसीलिए यह धारणा गलत है।**

ईश्वर दयालु है, न्यायकारी है। उसने कर्म करने की स्वतंत्रता अपनी स्वेच्छा से सभी मनुष्यों को एक समान दी है। वह कुछ मनुष्यों को घृणित कार्य और कुछ को उत्तम काम करने की प्रेरणा दे ही नहीं सकता- कार्य करवाना तो दूर की बात है। यदि वह ऐसा करेगा तो उसकी न्यायकारिता एवं निष्पक्षता पर प्रश्न चिन्ह लग जायेंगे।

हाँ! कर्म का फल देने का अधिकार ईश्वर ने अपने पास रखा है। किसी देवी, देवता, ग्रह, वास्तुशास्त्र अथवा जो पवित्र व श्रेष्ठ महापुरुष (इस सृष्टि में) जन्म ले चुके हैं, जैसे मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम, योगीराज कृष्ण, गुरु नानक जी, महावीर हनुमान को कदापि नहीं दिया है। इसीलिए ईश्वर से प्रार्थना की गई है -

स नो मुञ्चचतु अहंसः।। (अ. 4/23/1)

वह परमेश्वर हमें पापों से मुक्त कर दे।

(ङ) क्या केवल सुमिरन से कल्याण हो सकता है-नहीं क्या ईश्वर का नाम ही सब रोगों को दूर व समृद्धि की दवा है - नहीं

निःसन्देह सुमिरन, ईश्वर उपासना करना अपने आप में एक सुकर्म है। लंगर लगाकर, भण्डारा करके निर्धनों व बेसहारों की भूख मिटाना भी एक उत्तम कार्य है। परन्तु इतना करके यह समझ लेना कि इतने से भवसागर पार हो जायेगा - **यह एक बहुत बड़ी भूल है।** हम प्रतिदिन समाज में देखते हैं कि अधिकतर नाम जपने वाले तो अपने को व अपने परिवार के मामूली कष्टों, क्लेशों से भी छुटकारा नहीं दिला पाते - कल्याण की बात तो दूर रही।

अतः केवल सुमिरण, उपासना अपने आप में श्रेष्ठ कर्म होते हुए भी हमारा उद्धार करने में सक्षम नहीं हैं। यह केवल शुभ कर्म करने और पाप कर्म को त्यागने की प्रेरणा देते हैं। इसके साथ ही हमें कर्मशील बनना पड़ेगा, यम-नियम का पालन करना पड़ेगा। **काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, राग, द्वेष, ईर्ष्या आदि मानसिक रोगों पर विजय प्राप्त करनी होगी।** परोपकार, पर सेवा, सुपात्रों को दान, असहायों पर दया व मानव मात्र से प्रेम जैसे कर्म भी करने पड़ेंगे। तभी हम शारीरिक, आर्थिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति कर सकेंगे।

इसीलिए ईश्वर से प्रार्थना की गई है -

यशः श्री श्रृंयता मयि स्वाहा।। (यजु. 39/4)

भावार्थ :- **यश, ऐश्वर्य तथा धन-धान्य हमारे अन्दर**

आश्रित हो रहे हैं। मैं इनका स्वामी बनूँ।

कर्म की स्वतंत्रता-एक वरदान

दयालु परमेश्वर ने मनुष्य को कर्म करने की पूर्ण स्वतंत्रता का अधिकार देकर अद्वितीय उपकार किया है। ईश्वर सर्वान्तर्यामी है, ईश्वर सभी जड़ व चेतन पदार्थों के अन्दर-बाहर विद्यमान है। उसकी दयालुता देखिए-मनुष्य के पाप की ओर प्रवृत्त होते ही ईश्वर, आत्मा का, उसके मन में भय, शंका, लज्जा, संकोच के भाव उत्पन्न करके मनुष्य को ऐसा कार्य न करने के लिए सतर्क कर देता है। इसी प्रकार जब मनुष्य कोई श्रेष्ठ धर्मयुक्त कर्म करने का निश्चय करता है तो ईश्वर उसके हृदय में प्रसन्नता, उत्साह, गर्व, नम्रता का भाव भर कर ऐसा कर्म करने हेतु प्रेरित करता है।

ईश्वर की प्रेरणा को मानना या उसकी अनदेखी करना मनुष्य (आत्मा) पर निर्भर करता है। लेकिन ईश्वर आत्मा में विद्यमान होकर सदैव उसका निरीक्षण करता रहता है। उसका मार्गदर्शन भी करता रहता है परन्तु उसकी स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप नहीं करता है।

यह मनुष्य की स्वतंत्रता का अधिकार ही है कि वह पाप की ओर झुके या पुण्य की ओर। श्रेय मार्ग पर चले या प्रेय मार्ग को अपनाये। **इसीलिए केवल ईश्वर ही मनुष्य को पाप कर्म के लिए दण्ड देता है अन्य कोई देवी-देवता या ग्रह नहीं। हाँ! किसी भी परिस्थिति में ईश्वर क्षमा नहीं करता है।**

कर्म स्वतंत्रता का वरदान मनुष्य के सामने तीन रास्ते खोलता है -

(1) श्रेष्ठ पुण्य कर्म करके देवयोनि प्राप्त करना अथवा योगाभ्यास व साधना द्वारा मुक्ति पाना।

(2) पाप कर्मों की अपेक्षा उत्तम कर्म, परोपकारी कर्म अधिक करना और पुनः मनुष्य योनि प्राप्त करना।

(3) नीच पाप रूपी कर्म करना अथवा पुण्य कर्मों की अपेक्षा अधिक पाप कर्म करना और मृत्यु के उपरान्त नीच योनियों में जाना।

बन्धुओ! आपके सामने तिराहा है, जिधर जाना है, जाओ क्योंकि ईश्वर ने कर्म करने की पूर्ण स्वतंत्रता आपको दे रखी है। उसने आपको कठपुतली बना कर सृष्टि में नहीं भेजा है। कोई आपको रोकेगा नहीं-ईश्वर भी नहीं।

अप अमतिं दुर्मतिं बाधमानाः। (यजु. 19/84)

(हम अज्ञान, दरिद्रता, कुमति को दूर कर आगे बढ़ें।)

जन्म सिद्धान्त एवं 84 लाख योनियों का सत्य

दु:ख, सुख, क्लेश, अगला जन्म (योनि) मनुष्य के स्वयं के कर्मों के फलस्वरूप ही निर्मित होते हैं।

अथैकयाध्र्व उदानः पुण्येन पुष्यं लोकं नयति।
पापेन पापमु भाभ्यामेव मनुष्य लोकम्।। (प्रश्नोपनिषद्)

भावार्थ :- पुण्य कर्म जीवात्मा को उत्तम योनियों और पाप कर्म जीवात्मा को नीच योनियों में ले जाता है। पाप पुण्य बराबर हैं तो जीवात्मा मनुष्य योनि को प्राप्त करता है।

अतः मनुष्य उत्तम कर्म करके मनुष्य से मुक्ति, मनुष्य योनि से देवयोनि, मनुष्य से मनुष्य योनि पा सकता है और नीच पाप रूपी कर्म करके साधारण अथवा दरिद्र मनुष्य, पशु-पक्षी

योनि, कीट पतंग योनि, स्थावर योनि (पेड़-पौधों की योनि) या अन्य निम्न योनियों में जा सकता है। पाप-पुण्य 50:50 प्रतिशत होने पर मनुष्य को सामान्यतः पुनः साधारण मनुष्य योनि मिलती है, ताकि वह उन्नति के पथ पर अग्रसर हो सके।

क्या प्रत्येक आत्मा 84 लाख योनियाँ भोगने के बाद ही मनुष्य योनि में जन्म लेती है। **नहीं-पूर्णतया असत्य है।** यह धारणा/मत वेद सम्मत नहीं है। यदि ऐसा हो तो फिर पुण्य पाप कर्म में मनुष्य अन्तर ही नहीं करेगा। केवल 84 लाख योनियों के बाद अपने नम्बर की प्रतीक्षा करेगा। यदि यह धारणा सत्य होती तो सभी सत्य शास्त्र एवं पथ सम्प्रदाय पुण्य कर्म करने और पाप कर्म न करने की प्रेरणा नहीं देते। 84 लाख योनियों का वर्णन वेदों में भी नहीं मिलता है।

मनुष्य योनि में हमारे कर्म कैसे हों?

क्या मनुष्य योनि पाकर व्यक्ति पशुवत् कर्म करे और पहले से भी नीचे गिर जाय या उत्तम कार्य करके ऊँचा उठ जाये जिससे उसका भी उत्थान व कल्याण हो और दूसरों का भी भला हो जाये। इस विषय में शास्त्र कहते हैं -

उद्यानं ते पुरुष नावयानम्।। (अ. 8/1/16)

भावार्थ :- **हे पुरुष! तुम्हारा लक्ष्य उन्नति करना है, अधोगति (दुर्गति, पतन, दुर्दशा) में जाना नहीं है।**

यत्कर्म कुर्वतोऽस्य स्यात परिषोऽन्तरात्मनः।
तत्प्रयत्नेन कुर्वीतविपरीतंतुवर्जयेत्।। (मनु. 4/161)

भावार्थ :- वह कर्म प्रयत्नपूर्वक करना चाहिए जिसके करने से हमारा अन्तरात्मा सन्तुष्ट हो और जो कर्म इसके विपरीत हो, उसे छोड़ देना चाहिए। जीवन तो सभी जीते हैं-मनुष्य भी और पशु, पक्षी व कीट भी। जो शुभ कर्म करते हुए अच्छी तरह जीता

है उसी को अगली योनि मनुष्य की मिलती है। इसके विपरीत जो मनुष्य पाप-कर्म करता है, समय और धन का दुरुपयोग करता है, ईश्वर उसकी बुद्धि और मानव शरीर से मिलने वाली सुविधाओं का हरण कर लेता है और यह कार्य ईश्वर द्वारा आत्मा को नीच योनियों में, मानव शरीर की मृत्यु के बाद, भेजकर किया जाता है, यही ईश्वरीय कर्मफल व्यवस्था है।

भाग-4

''आदर्श दिनचर्या का एक प्रारूप''

(1) प्रातःकाल समय पर उठना-सूर्योदय से पूर्व का समय आनन्दकारी होता है। (2) शौच आदि से निवृत्त होकर प्राणायाम, व्यायाम व सैर करना।(3) स्नान करना - शारीरिक शुद्धि का विशेष ध्यान रखना। (4) प्रातः एवं सायं ईश्वर स्तुति प्रार्थना उपासना व ध्यान करना - मानसिक व आध्यात्मिक उन्नति के लिए। (5)चाय- नाश्ता - हल्का-फुल्का सात्विक भोजन करने के साथ फास्टफूड व मैदे की वस्तुओं का त्याग करना।(6) कार्यक्षेत्र पर जाना - ईमानदारी से कार्य करते हुए धर्मानुसार धन कमाना।(7) सायंकालीन समय - परिवार में एक साथ भोजन करना, प्रार्थना-उपासना करना, परिवार के साथ समय बिताना, माता-पिता की सेवा करना, परोपकार करना, दान देना। (8) रात को समय पर सोना व घर में टी.वी. व मोबाइल पर नियंत्रण रखना।

हर रविवार को घर में हवन (यज्ञ) करना व आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग में (वैदिक ज्ञान हेतु) परिवार सहित जाना, परिवार के साथ पिकनिक पर जाना।

पुण्य-पाप कर्मों का फल कब मिलता है

न सद्याः कालान्तरोपभोग्यत्वात् (न्याय)

भावार्थ :- कर्म का फल तुरन्त नहीं परन्तु कालान्तर में

मिलता है अर्थात् कुछ समय के उपरान्त (कम या अधिक) के बाद मिलता है। यह अन्तराल कुछ दिनों, महीनों, वर्षों, कई जन्मों का भी हो सकता है। वैदिक सिद्धान्त के अनुसार जैसे-जैसे कोई कर्म पकता है, वैसे-वैसे और तब तब ही उसका फल मिलता है।

क्लेशमूलः कर्माशयो दृष्टादृष्ट जन्मवेदनीय (मनु)

भावार्थ :- मनुष्य के कर्म संग्रह में से क्लेशमूलक (पाप, नीच कर्म) का फल उसे इस जन्म में भी मिल सकता है और आने वाले कई जन्मों में भी। **लेकिन एक बात निश्चित है कि फल भोगे बिना कर्म कदापि शान्त नहीं होते।**

इस जन्म में फल भोग का नियम

इस जन्म के कुछ कर्म + पिछले जन्मों के कुछ कर्म

जैसे ही कोई कर्म फल देने के लिए पकता है वैसे ही सर्वशक्तिमान, सर्वान्तर्यामी, सर्वव्यापक, न्यायकारी प्रभु उसका फल दे देता है। इस जन्म के जो कर्म हमारे जीते जी पक जाते हैं उनका फल इसी जन्म में मिल जाता है और जो बच जाते हैं (अर्थात् नहीं भोगे जाते) वे संचित कोश में जमा हो जाते हैं। संचित कोश के कर्मों में से भी जो कर्म फल देने के लिए तैयार हो जाते हैं उनका फल भी ईश्वर इसी जन्म में देता है।

इस प्रक्रिया में ईश्वर न तो किसी महापुरुष को और न ही किसी देवी-देवता, ग्रह-नक्षत्र, वास्तु देवता की दखलंदाजी (Interference) की अनुमति देता है। वास्तव में यह जड़ देवता शक्तिहीन हैं-कुछ नहीं कर सकते हैं।

ईश्वर द्वारा दिया गया
पाप कर्म का दण्ड अभिशाप नहीं, वरदान है।

संसार में भौतिक माँ, अपने बेटे के हित में, उसकी गलतियों

के लिए, उसे दण्ड देती है तो क्या मनुष्य की आध्यात्मिक माँ, परमपिता परमात्मा उसको दण्ड उसके कल्याणार्थ नहीं दे सकता। अवश्य दे सकता है और यह मनुष्य के भले के लिए, सुधार के लिए तथा उत्थान के लिए है।

पाप कर्म करने से मनुष्य की आत्मा अपवित्र हो जाती है। पापों के दु:ख रूप फलों के भोगने के बाद पापी का अन्त:करण (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार) और प्रेरक आत्मा पुन: शक्तिशाली हो जाता है। शुद्ध हो जाता है।

दण्ड मनुष्य को पाप करने से (भविष्य में) बचाने का साधन है। ईश्वर दण्ड देकर मनुष्य को उठने व सुधरने का अवसर देता है। यदि दण्ड न दे तो अधिकतर व्यक्ति नीच/पाप कर्म ही करते जायेंगे, क्योंकि पाप कर्म करने से अनुचित लाभ मिलता है। इसमें बड़ा मजा आता है और तुरन्त भौतिक लाभ भी मिलता है। पुण्य कर्म करना तो तपस्या है, साधना है और इसमें समय, धन खर्च करने के साथ-साथ शारीरिक कष्ट भी होता है परन्तु तुरन्त फल तो केवल आत्म सन्तुष्टि ही है।

पाप कर्म का दण्ड (शारीरिक, मानसिक दु:ख, गरीबी, साधनों का अभाव आदि आदि) मिलने पर **मनुष्य को अधिक पुरुषार्थ एवं परिश्रम करके उस पर विजय पाने के लिए ईश्वर से ही प्रार्थना करनी चाहिये किसी अन्य से नहीं। यदि फिर भी दु:ख न जाये तो हृदय से उसे स्वीकार करते हुए ईश्वर का धन्यवाद करना चाहिये। इधर-उधर काल्पनिक व अन्ध-विश्वासनीय उपायों के लिए नहीं भटकना चाहिये।**

पाप दण्ड से नहीं-पाप कर्म से बचें।

भाग -2

(18) ईश्वर एवं प्रकृति की उपासना

(अध्यात्म व स्वास्थ्य की दृष्टि से)

(क) ईश्वर की उपासना

मनुष्य को ईश्वर की उपासना करनी चाहिए या नहीं। यह पूर्णतयः मनुष्य पर निर्भर करता है। ईश्वर इस सृष्टि का उत्पत्तिकर्ता, पालक, धारक व प्रलयकर्ता है। यह बिना भेदभाव के, सम्पूर्ण संसार के सभी जीवों को पाल रहा है। वह दयालु है। सभी प्राणियों को एक समान जल, वायु, प्रकाश, अग्नि, वनस्पतियाँ, वेद ज्ञान (मानव योनि में) आदि दे रहा है। यदि कोई व्यक्ति या समाज उसमें आस्था नहीं रखता है या किसी अन्य देवी-देवता, महापुरुष की पूजा करता है तो भी ईश्वर न तो निराश होता है और न ही अप्रसन्न। लेकिन वेदों में अनेक जगहों पर वेद मन्त्र आदेश देते हैं कि केवल सृष्टिकर्ता, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सर्वाधार, सर्वेश्वर, न्यायकारी, पवित्र व दयालु ईश्वर की ही स्तुति, प्रार्थना, उपासना करने योग्य है। हाँ, निराकार ईश्वर की अवहेलना करने वाला व्यक्ति ईश्वर उपासना के लाभों से अवश्य वंचित रहता है।

इसके विपरीत जो मनुष्य केवल सृष्टिकर्ता की उपासना करता है, उसे शुभ व निष्काम कर्म करने की प्रेरणा मिलती है। पाप कर्म करते समय उसको हृदय में, प्रभु की चेतावनी मिलती है कि वह यह पाप कर्म न करे-उसको सुनना या उसकी अनदेखी करना मनुष्य पर निर्भर है। ईश्वर के भक्त का आचरण शुद्ध होता जाता है और उसे ईश्वरीय आनन्द व सन्तोष की प्राप्ति होती है।

(ख) प्रकृति की उपासना

मनुष्य प्रकृति की सर्वोत्तम कृति है। प्रकृति के नियमों के अनुसार जीवन व्यतीत करना, प्रकृति की उपासना कहलाती है। प्रकृति के नियमों का पालन करने वाला व्यक्ति सदैव स्वस्थ व प्रसन्न रहता है। बहुत कम रोग ग्रस्त होता है।

स्वस्थ व दीर्घ आयु प्राप्त करने हेतु प्रकृति के कुछ नियम निम्न हैं :-

(1) शरीर सम्बन्धित नियम -

ईश्वर ने आत्मा को मानव शरीर देकर पूर्णतय: स्वतन्त्र कर दिया है। इसको स्वस्थ रखने के लिए, इसको सुव्यवस्थित चलाने के लिए, परमात्मा ने मनुष्य को पर्याप्त ज्ञान, पदार्थ व साधन दिये हैं, अत: इसकी देखरेख करना आत्मा का कर्तव्य भी है और कार्य भी। ईश्वर का नहीं। यदि शरीर रोग ग्रस्त है तो इसका कारण आत्मा स्वयं है। अत: स्वस्थ व दीर्घ आयु के लिए मनुष्य का कर्तव्य है कि वह शरीर को स्वस्थ रखने के नियमों का दृढ़ता से पालन करे। इसमें मुख्य हैं :-

(1) प्रतिदिन प्रात:काल अथवा सायंकाल सैर करना और यथासंभव प्राकृतिक वातावरण में रहना।

(2) प्रतिदिन सुबह या सायंकाल, जैसा संभव हो, व्यायाम, योग आसन व प्राणायाम करना।

(3) जहाँ तक संभव हो, लाभ, पापकर्म और तनावपूर्ण जीवन से बचना।

(4) अपनी क्षमता के अनुसार ही शारीरिक व मानसिक श्रम करना। सदैव स्वच्छ व ढीले वस्त्र ही ऋतु और मौसम के

अनुसार पहनना।

(5) प्रातःकाल सूर्योदय से पहले उठना व रात को समय पर सोना ताकि शरीर ऊर्जावान व तरोताजा रह सके।

(6) रात को सोने से पहले व खाना खाने के बाद सदैव पेशाब करना।

(7) जैसे ही पेशाब करने की इच्छा हो, तुरन्त टॉयलेट जाएँ। पेशाब रोकने से मूत्राशय व गुर्दे सम्बन्धी समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं।

(8) यदि स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता है तो सप्ताह में एक बार उपवास (पाचन क्रिया को दृढ़ करने के लिए) अवश्य करें। उपवास की समाप्ति पर तले पदार्थ, घी आदि का सेवन न करें अन्यथा उपवास का कोई लाभ नहीं होता है।

(9) सप्ताह में एक बार पूरे शरीर की तेल के साथ मालिश करना और उसके दो घंटे बाद स्नान करना चाहिए।

(2) भोजन सम्बन्धित नियम

(1) भोजन में सलाद, बिना पका भोजन अथवा उबला हुआ भोजन की मात्रा अधिक और अन्न-दाल की मात्रा कम होनी चाहिए, विशेषकर उन व्यक्तियों के लिए जो शारीरिक परिश्रम बहुत कम करते हैं। पर्याप्त सलाद को भोजन करने से पहले खाना चाहिए-भोजन के साथ-साथ नहीं। सलाद को इस विधि द्वारा खाने से कब्ज की समस्या कभी भी उत्पन्न नहीं होती है। भोजन के साथ सलाद व फल खाने से पाचन क्रिया में रूकावट आती है।

(2) दिन में एक बार किसी भी फल, जो सस्ता हो, उसका

पर्याप्त मात्रा में भोजन के रूप में सेवन अवश्य करें व भोजन के साथ फल, मेवे न खायें।

(3) प्रात:काल का नाश्ता (Breakfast), दोपहर का खाना व रात का खाना केवल तभी खायें जब खूब भूख लगी हो अन्यथा न खायें। यदि भूख नहीं है तो खाना कभी न खायें अन्यथा यह पेट में जाकर सड़ता है।

(4) सदैव ऋतु अनुसार ही भोजन करें। स्वास्थ्य की दृष्टि से भोजन संयोजन (Food Combination) का ध्यान भी अवश्य रखें ताकि गलत संयोजन के कारण पैदा होने वाले शारीरिक रोगों से बचा जा सके। भोजन में गेहूँ की मात्रा कम और मिलट्स (मोटा अनाज) का प्रयोग अधिक करें। यह उत्तम स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है।

(5) खाना धीरे-धीरे चबा कर खायें और खाते समय अपना ध्यान केवल स्वादिष्ट खाने पर ही रखें-उस समय मोबाइल या टेलीविजन न देखें।

(6) (क) आंतों को स्वस्थ रखने के लिए, नमक और चीनी का सेवन कम से कम करें।

(ख) फास्ट फूड, मैदे से बनी सभी चीजें- पीजा, मैगी, कन्फैक्शनरी चीजें आदि का सेवन कम से कम करें, अथवा न करें।

(ग) भारत में विभिन्न प्रकार की खिचड़ी बनायी जाती है। सप्ताह में, दोपहर या रात के भोजन में, एक बार खिचड़ी का सेवन करना स्वास्थ्य के लिए अति लाभदायक है। इसका सेवन अवश्य करें।

(7) भारत में रोटी या परांठा - तवे पर तेल या घी में तलना बहुत ही हानिकारक प्रथा है। यह पाचन तंत्र को नुकसान करता है, कोलेस्ट्राल बढ़ाता है, मोटापा, गैस, अपच, फैटी लीवर की समस्या पैदा करता है। अतः तेल या घी रोटी या परांठे पर तवे से उतारने के बाद में लगायें।

(8) भोजन करने के आधा घण्टा पहले पानी पी लें, यदि प्यास है। भोजन के तुरन्त बाद पानी या चाय नहीं पीना चाहिए। भोजन के 40 मिनट के बाद पानी या चाय लेना मान्य है। चाय व काफी का सेवन कम से कम मात्रा में करने का प्रयत्न करें। दूध वाली चाय, चीनी के साथ खूब उबालकर पीना अत्यन्त हानिकारक है। अतः चाय पत्ती को उबालना नहीं चाहिए अन्यथा अम्लता (Acidity) का रोग होना आवश्यक है।

(9) दोपहर के भोजन के बाद 30 मिनट आराम करना व रात्रि के भोजन के बाद 30 मिनट सैर करना अति लाभदायक है।

(10) रात्रि का भोजन सूर्यास्त से पहले अथवा रात्रि 8 बजे से पहले अवश्य कर लें ताकि 12 घण्टे का आंतरायिक उपवास (Intermittent fasting) करके लीवर को आराम मिल सके।

(11) बाजार से स्वास्थ्यवर्धक भोजन बनाने की सामग्री लाते हुए अपनी बुद्धि का प्रयोग करें-मन व इच्छाओं का नहीं। यदि आर्थिक स्थिति अच्छी है तो गुणवत्ता से समझौता न करें। भोजन सात्विक होना चाहिए, रिफाइण्ड तेल व घी का

प्रयोग पूर्णतय: बन्द करें और घी व तेल का प्रयोग भी कम से कम करें। पाम ऑयल और रिफाइंड तेल शरीर के लिए हानिकारक है। यह तेल अनेक बीमारियों को जन्म देता है।

घी व तेल को एक बार प्रयोग करने के बाद पुन: प्रयोग न करें। दोबारा प्रयोग किया गया तेल, घी जहरीला (Toxic) हो जाता है और शरीर में कोलेस्ट्राल को भी बढ़ाता है।

(12) सभी पेय पदार्थ जो बोतल में उपलब्ध हैं, अन्य खाने की वस्तुएं जो बाजार में पैकेट में मिलती हैं, उनके सेवन से बचें। इनमें विभिन्न प्रिजर्वेटिव, कैमिकल्स और पाम ऑयल होता है, जोकि शरीर के लिए हानिकारक होते हैं। भारत में पाम ऑयल सस्ता है। इसलिए अधिकतर कनफैक्शनरी वाले व कम्पनियाँ इसका प्रयोग बिना किसी रोक-टोक के नमकीन, बिस्कुट, मट्ठी, कचौड़ी, चिप्स, समोसे, मिठाई आदि बनाने में प्रयोग कर रहे हैं।

(13) जितनी भूख हो, उसका तीन-चौथाई ही दोपहर व रात्रि के भोजन में खाना चाहिए। भंडारा, विवाह-कार्यक्रम व अन्य सामूहिक कार्यक्रमों में अधिक खाना अथवा विभिन्न व्यंजनो का एक साथ सेवन करने से बचना चाहिए। यह स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

यदि कोई व्यक्ति या परिवार उपरोक्त नियमों का पालन नहीं करता है तो प्रकृति उसे क्षमा नहीं करती है। वर्तमान में या भविष्य में शारीरिक रोगों के रूप में दण्ड अवश्य देती है। उपरोक्त नियमों की अवहेलना करने का ही परिणाम है कि

हमारे देश में बच्चे, युवा, वृद्ध-बहुत बड़ी संख्या में, मोटे और रोग ग्रस्त होते जा रहे हैं। यह दृश्य किसी भी चिकित्सालय, अस्पताल में जाकर आप स्वयं देख सकते हैं।

इसलिए प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि वह अपनी व अपने परिवार के सभी सदस्यों की जीवन शैली प्रकृति के नियमों के अनुसार बनाये ताकि परिवार के सभी सदस्य रोग मुक्त रहें और एक स्वस्थ व दीर्घ जीवन जीकर शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करें। राष्ट्र की सम्पत्ति बने, ऋण या बोझ नहीं।

आजकल संसार में, और विशेषकर भारत में कैंसर, शुगर, जोड़ों का दर्द, हृदय रोग, लीवर के रोग व मोटापा के रोग दिन प्रतिदिन बढ़ते जा रहे हैं। जिस भी स्वास्थ्य केन्द्र या अस्पताल का निरीक्षण करो, सभी जगह युवा और वृद्ध दोनों प्रकार के रोगियों की भीड़ दिखाई देती है। यह सब प्रकृति के नियमों के ना पालन करने का ही पहला परिणाम है और समाज व राष्ट्र के लिए चिंता का विषय है। इसका दूसरा परिणाम है परिवार की आर्थिक हानि व समय की बरबादी। तीसरा परिणाम है सरकारों द्वारा स्वास्थ्य सेवाओं पर अत्यधिक खर्च करना और चौथा परिणाम है रोग्रस्त व्यक्ति स्वयं भी दु:खी होता है और आध्यात्मिक उन्नति में पूर्णतय: सफलता प्राप्त नहीं कर पाता है।

19. हठयोग की क्रियायें (आध्यात्मिक दृष्टि से शरीर व प्राणों को बलिष्ठ बनाने हेतु)

निम्न हठयोग की क्रियाओं (प्राणायामों) (पृष्ठ 129-140 तक) को जिस क्रम में दिया जा रहा है-उसी क्रम में करें-अधिक लाभ होगा। यह सभी क्रियायें पाँचों प्राणों को

निःसन्देह बलिष्ठ बनाती है। इन क्रियाओं को जप व ध्यान से आधा घंटा पहले करें-साथ-साथ नहीं, यदि किसी बीमारी-बुखार, जुकाम आदि से रोगग्रस्त हैं तो डॉक्टर/वैद्य की सलाह लेकर ही करें।

(1) भस्त्रिका क्रिया

निर्देश :-

(क) किसी भी सुविधाजनक आसन में बैठें (सिद्धासन, पदमासन, सुख आसन आदि)

(ख) हाथों को घुटनों पर ज्ञान मुद्रा में रखें।

(ग) कमर और गर्दन सीधी रखें।

(घ) दोनों नेत्रों को कोमलता से बन्द करें।

(ङ) सर्वप्रथम तीन आचमन करें अर्थात् 3 बार सीधे हाथ (ओक) में थोड़ा जल लेकर पियें।

(1) अब दोनों नासिकाओं से श्वास को (ओ३म् का मानसिक उच्चारण के साथ) धीरे-धीरे डायाफार्म तक) अन्दर भरें।

(2) फिर श्वास को ओ३म् के मानसिक उच्चारण के साथ धीरे-धीरे बाहर छोड़ें।

(3) श्वास को अन्दर रोकना नहीं है।

(4) यह एक चक्र पूरा हुआ। ऐसे पाँच से दस चक्र पूरे करें लेकिन चक्रों की गिनती न करें-गिनती पर ध्यान न दें।

(5) यह क्रिया मध्यम एवं लघु श्वसन विधि-दोनों से की जा सकती है।

सावधानियाँ

(1) कमजोर व्यक्ति, हृदय रोगी, रक्तचाप रोगी, बीमार व्यक्ति

डाक्टर/वैद्य/योगाचार्य की सलाह लेकर ही करें।

(2) ग्रीष्म ऋतु में कम मात्रा में करें।

(3) शरद ऋतु में खुले वातावरण में न करें-सर्दी के मौसम में अधिक गहरा श्वास भी न लें, ठंड लग सकती है।

लाभ

(1) सम्पूर्ण शरीर में आक्सीजन पर्याप्त मात्रा में पहुँचती है।

(2) शरीर में कफ, पित्त, वात संतुलन में रहते हैं। मनुष्य शारीरिक रोगों से बचा रहता है।

(3) जुकाम, सर्दी, एलर्जी, दमा, साइनस में लाभकारी है।

(4) मन के नियन्त्रण में सहायक है।

(5) ईश्वर भक्ति में मन लगता है।

(2) कपालभाति क्रिया

निर्देश क, ख, ग व घ का पालन करें।

(1) सामान्य श्वास-प्रश्वास क्रिया करें और छाती को स्थिर रखें इसमें केवल पेट की मांसपेशियाँ ही हरकत करती हैं अर्थात् श्वास को बाहर फेंकते हुए पेट अन्दर की ओर सिकुड़ता है।

(2) अब श्वास को शक्तिपूर्वक (जोर से) बाहर फेंके/छोड़ें।

(3) श्वास बाहर छोड़ते हुए **ओ३म् का चिंतन करें, मानसिक उच्चारण नहीं।**

(4) अब बिना प्रयास के श्वास अन्दर आ जायेगा, आने दें।

(5) यह क्रिया लगातार लगभग 1 मिनट तक करें। यह एक चक्र हुआ। चक्र की गति धीमी रखें-तेज नहीं। चक्र की संख्या को गिनने पर ध्यान न दें। मन में ओ३म् का चिन्तन चलता रहे।

(6) अब 2-3 सामान्य श्वास लें और अगला चक्र शुरू करें और 1 मिनट तक जारी रखें।

(7) प्रारम्भ में ऐसे 3 चक्र प्रतिदिन करें। पर्याप्त अभ्यास के बाद इन चक्रों की संख्या स्वास्थ्य के अनुसार बढ़ाई जा सकती है।

नोट :- यदि थकान महसूस करें तो कपालभाति क्रिया को रोक कर प्रत्येक चक्र के बाद 30 सैकण्ड तक आराम करें। सामान्य श्वास लें।

सावधानियाँ

(1) महिलायें गर्भावस्था व पीरियड के दिनों में न करें।
(2) बुखार, हर्निया, लीवर रोग व कमर दर्द में न करें।
(3) हाईब्लड प्रेशर व हृदय रोगी डाक्टर की सलाह से ही करें।

लाभ

(1) कब्ज, श्वास, हृदय, फेफड़े, मधुमेह व मानसिक रोगों में फायदा करता है।
(2) मोटापा कम करता है।
(3) पाचन शक्ति अच्छी करता है
(4) माथे पर आभा, ओज व तेज बढ़ाता है।

(3) बाह्य कुम्भक क्रिया

निर्देश क, ख, ग व घ का पालन करें

(4) सर्वप्रथम ओ३म् का मानसिक चिंतन करते हुए दोनों नासिकाओं से श्वास अन्दर भरें।
(5) अब ओ३म् का मानसिक उच्चारण करते हुए श्वास को धीरे-धीरे बाहर निकालें-पेट को थोड़ा अन्दर सिकोड़ें/दवाएं।
(6) अब श्वास को यथासंभव बाहर ही रोके रहें। (बाह्य कुम्भक)

(7) धीरे-धीरे ठोड़ी को नीचे झुकाते हुए छाती से लगायें।

(8) मन में ओ३म् का चिन्तन चलता रहे।

(9) जब श्वास बाहर न रूके-तब गर्दन सीधी करें, धीरे-धीरे श्वास अन्दर लें और सामान्य स्थिति में आयें।

(10) यह एक चक्र पूरा हुआ। ऐसे 3 चक्र करें। चक्रों की गिनती पर ध्यान न दें।

नोट :- इसमें त्रिबन्ध का प्रयोग नहीं किया गया है।

सावधानियाँ :-

(1) बीमार, हृदय एवं उच्च रक्तचाप रोगी डॉ0 की सलाह लेकर ही करें अन्यथा नहीं।

(2) महिलायें गर्भावस्था व पीरियड में न करें।

लाभ :-

(1) पाचन शक्ति मजबूत करता है।

(2) मन को एकाग्र करने व ध्यान में लाभदायक है।

(4) (क) अनुलोम-विलोम क्रिया

प्रथम चरण

श्वास का बायीं नासिका से लेना शुरू करना और दायीं नासिका से निकालना, फिर दायीं नासिका से अन्दर लेकर अन्त में (चक्र पूरा करते हुए) बायीं नासिका से ही निकालना।

निर्देश क, ख, ग व घ का पालन करें

(4) इस क्रिया में केवल दाहिने हाथ की मध्यमा अंगुली (प्रत्येक नासिका बारी-बारी से कोमलता के साथ बन्द करने के लिए) का प्रयोग करें।

(5) सर्वप्रथम मध्यमा अंगुली से अपनी दाहिनी नासिका (छिद्र) को हल्का दबाकर बन्द करें।

(6) अब बायीं नासिका से लम्बा गहरा श्वास धीरे-धीरे अन्दर लें तथा ओ३म् का मानसिक चिंतन भी साथ-साथ करें।

(7) अब बायीं नासिका को (मध्यमा अंगुली से) बन्द करें और दायीं नासिका से श्वास ओ३म् का मानसिक उच्चारण करते हुए धीरे-धीरे बाहर निकालें।

(8) अब उपरोक्त विधि के साथ दाहिनी नासिका से श्वास अन्दर लें और इसके बाद दाहिनी नासिका को बन्द करें।

(9) अब श्वास को बायीं नासिका से उपरोक्त विधिनुसार धीरे-धीरे बाहर निकालें।

(10) श्वास को अन्दर रोकना नहीं है।

(11) इसमें श्वास-प्रश्वास मध्यम गति से किया जाता है।

(12) यह एक चक्र पूरा हुआ। ऐसे 10 से 12 चक्र पूरे करें लेकिन चक्रों की गिनती पर ध्यान केन्द्रित न करें। यह चक्र समयानुसार कम-अधिक हो सकते हैं।

सावधानियाँ व लाभ

(1) शरद ऋतु में (अधिक ठंड होने पर) खुले स्थान/पार्क आदि में न करें, गहरा लम्बा श्वास भी न लें, ठंड लग सकती है।

(2) अधिक तेज हवा चल रही हो-तो न करें। ऐसी परिस्थिति में घर पर ही करें।

(3) उच्च रक्तचाप के रोगी डॉक्टर की सलाह लेकर ही करें अथवा बहुत धीमी गति से कम मात्रा में ही करें।

(4) ओ३म् के मानसिक चिंतन/उच्चारण से मन पर धीरे-धीर नियन्त्रण होता जाता है।

(5) मानसिक तनाव दूर होता जाता है।

4 (ख) अनुलोम- विलोम क्रिया

दूसरा चरण

श्वास को दायीं नासिका से लेना शुरू करना और बायीं नासिका से निकालना, फिर बायीं नासिका से अन्दर लेकर अन्त में चक्र पूरा करते हुये दायीं नासिका से ही निकालना।

इस क्रिया में भी केवल दाहिने हाथ की मध्यमा अंगुली (प्रत्येक नासिका बारी-बारी से कोमलता के साथ बन्द करने के लिए) प्रयोग करें।

निर्देश क, ख, ग व घ का पालन करें।

(1) सर्वप्रथम मध्यमा अंगुली से बांयी नासिका को बन्द करें।

(2) दायीं नासिका से गहरा लम्बा श्वास धीरे-धीरे अन्दर लें और ओ३म् का मानसिक उच्चारण/चिंतन भी साथ-साथ करें।

(3) अब मध्यमा अंगुली से दायीं नासिका बन्द करें और बायीं नासिका से श्वास धीरे-धीरे ओ३म् का मानसिक उच्चारण करते हुए बाहर छोड़े।

(4) (क) अब बायीं नासिका से श्वास धीरे-धीरे अन्दर लें और बायीं नासिका को बन्द करते हुए दायीं नासिका से श्वास धीरे-धीरे बाहर निकालें।

(ख) श्वास-प्रश्वास में ओ३म् का मानसिक चिंतन/उच्चारण प्रथम चरण की तरह करें।

(5) यह एक चक्र पूरा हुआ। ऐसे 10-12 चक्र करें लेकिन चक्रों को गिनते नहीं हैं। समयानुसार कम-अधिक हो सकते हैं।

(6) श्वास-प्रश्वास मध्यम गति या लघु श्वसन विधि से किया जाता है।

(7) श्वास को अन्दर रोकते नहीं हैं।

लाभ

(1) फेफड़ों को स्वस्थ रखता है।

(2) मन शान्त करता है। रक्त संचार ठीक करता है।

(3) मानसिक तनाव को कम करता है।

(4) मन पर नियन्त्रण होता जाता है।

(5) नाड़ी शोधन क्रिया

नाड़ी शोधन क्रिया भी हठयोग के अन्तर्गत आती है। यह एक प्रभावी क्रिया है और शरीर की प्रत्येक नाड़ी में पर्याप्त आक्सीजन पहुँचाने के कार्य में मदद करती है। शरीर की सभी नाड़ियों का शुद्धिकरण करती है। इस क्रिया से चिंता, तनाव व अनिद्रा की समस्या से राहत मिलती है। शरीर स्वस्थ रहता है।

यह क्रिया जप व ध्यान में भी लाभकारी है। जप व ध्यान की दृष्टि से इसको चार चरणों में बाँटा गया है।

नाडी शोधन क्रिया प्राणायाम प्रारम्भ करने से पहले निम्न प्रारम्भिक प्राणायाम करने चाहिये -

(1) सुख प्राणायाम I : इसमें बायीं नासिका से धीरे-धीरे श्वास अन्दर लेकर उसी नासिका से धीरे-धीरे बाहर छोड़ते हैं और ऐसे 3 चक्र करते हैं। इसी प्रकार दायीं नासिका से धीरे-धीरे

श्वास लेकर दायीं नासिका से ही धीरे-धीरे बाहर छोड़ते हैं। ये भी तीन चक्र करते हैं।

(2) सुख प्राणायाम II :-इसमें बांयी नासिका से धीरे-धीरे श्वास अन्दर लेकर दायीं नासिका से धीरे-धीरे बाहर छोड़ते हैं। फिर दायीं नासिका से धीरे-धीरे श्वास अन्दर लेकर बायीं नासिका से धीरे-धीरे बाहर निकालते हैं। श्वास को अन्दर नहीं रोकते हैं।

(3) सम प्राणायाम : इसमें श्वास को धीरे-धीरे दोनों नासिकाओं से एक साथ लेते हैं और फिर दोनों नासिकाओं से धीरे-धीरे ही बाहर निकालते हैं। इस प्रक्रिया में भी श्वास को अन्दर नहीं रोकते हैं।

(4) अतिरिक्त प्राणायाम : इसमें श्वास को धीरे-धीरे दोनों नासिकाओं से एक साथ अन्दर लेते हैं। इसके बाद श्वास को 5-7 सेकण्ड के लिए अन्दर रोककर (आन्तरिक कुम्भक) फिर धीरे-धीरे बाहर निकाल देते हैं।

नोट :- उपरोक्त प्रत्येक क्रिया को 2 से 3 मिनट तक करते हैं।

नाडी शोधन प्राणायाम (प्रथम चरण)

निर्देश :

(क) किसी भी सुविधाजनक आसन (सिद्धासन, सुखासन, पद्मासन आदि) में बैठ जायें।

(ख) दोनों हाथों को घुटनों पर रखें और ज्ञान मुद्रा बनायें।

(ग) कमर और गर्दन सीधी रखें।

(घ) श्वास-प्रश्वास में "लघु श्वसन प्रक्रिया" का प्रयोग किया जाता है। (देखें पृष्ठ-85-86)

(ङ) श्वास लेते समय, रोकते समय और छोड़ते समय ओ३म् का मानसिक जप या किसी ईश्वरीय गुण का चिंतन किया

जाता है।

(च) दोनों आँखों को कोमलता के साथ बन्द रखा जाता है।

(छ) प्रत्येक नासिका को बारी-बारी से बन्द करने के लिए दाहिने हाथ की मध्यमा उंगली का प्रयोग करते हैं।

विधि

नोट :- इस विधि में जिस नासिका से श्वास अन्दर लिया जाता है, उसी नासिका से बाहर निकाला जाता है।

(1) सर्वप्रथम मध्यमा उंगली से अपनी दाहिनी नासिका (छिद्र) को कोमलता से दबाकर बन्द करें।

(2) अब बायीं नासिका से श्वास (मन्द गति से) - ओ३म् का मानसिक उच्चारण/चिंतन करते हुए धीरे-धीरे अन्दर लें और यथाशक्ति अन्दर ही रोकें (आन्तरिक कुम्भक)

(3) आन्तरिक कुम्भक की स्थिति में मानसिक उच्चारण करें- प्रभु! आप मेरे हृदय प्रदेश में विद्यमान हैं। आप मुझे देख रहे हैं, जान रहे हैं, सुन रहे हैं। मुझे श्रेय मार्ग पर चलने की प्रेरणा दे रहे हैं। मैं हृदय से आपको धन्यवाद देता हूँ।

अथवा

प्राणायाम मंत्र का मानसिक उच्चारण करें।

(4) अब बायीं नासिका से ही श्वास को, ओ३म् का मानसिक उच्चारण करते हुए, बाहर निकालें और यथाशक्ति बाहर ही रोकें।

(5) इस क्रिया को 3 बार दोहरायें।

(6) इसी प्रकार यह क्रिया 3 बार दायीं नासिका से श्वास अन्दर, बाहर लेकर करें, और

(7) आन्तरिक कुम्भक की स्थिति में निम्न मानसिक उच्चारण करें।

प्रभु! आप मेरे हृदय प्रदेश में विद्यमान हैं। आप मुझे देख रहे हैं, जान रहे हैं, सुन रहे हैं। मुझे श्रेय मार्ग पर चलने की प्रेरणा दे रहे हैं। मैं हृदय से आपको धन्यवाद देता हूँ।

अथवा

प्राणायाम मंत्र का मानसिक उच्चारण करें।

नाड़ी शोधन प्राणायाम (द्वितीय चरण)

नोटः- इस विधि में सर्वप्रथम बाईं नासिका से श्वास अन्दर लेते हैं और दायीं नासिका से बाहर निकालते हैं। इसके बाद दायीं नासिका से श्वास अन्दर लेते हैं और बाईं नासिका से बाहर निकालते हुए समाप्त करते हैं।

निर्देश क से घ का पालन करें।

(1) सर्वप्रथम मध्यमा उंगली से अपनी दाहिनी नासिका (छिद्र) को हल्का सा दबाकर बन्द करें।

(2) अब बायीं नासिका से श्वास (मन्द गति से) - ओ३म् का मानसिक उच्चारण/चिंतन करते हुए धीरे-धीरे अन्दर लें और यथाशक्ति अन्दर ही रोकें (आन्तरिक कुम्भक)

(3) अब आन्तरिक कुम्भक की स्थिति में प्राणायाम मंत्र का मानसिक उच्चारण करें, अन्यथा पहले की तरह ईश्वर का धन्यवाद करें।

(4) अब बायीं नासिका को मध्यमा उंगली से बन्द करें और दायीं नासिका से श्वास धीरे-धीरे (ओ३म् के मानसिक उच्चारण के साथ) धीरे-धीरे बाहर निकालें और कुछ

समय के लिए बाहर ही रोकें।

(5) अब उपरोक्त विधि के अनुसार दायीं नासिका से श्वास धीरे-धीरे अन्दर लें, श्वास को यथाशक्ति अन्दर ही रोकें। इस स्थिति में पहले की तरह ईश्वर को धन्यवाद दें या प्राणायाम मन्त्र का मानसिक उच्चारण करें। इसके बाद श्वास को धीरे-धीरे बायीं नासिका से बाहर निकाल दें।

(6) अब 2-3 सामान्य श्वास लें। यह एक चक्र पूरा हुआ। ऐसे तीन चक्र करें। तीन चक्र पूरा होने पर बोलें -

हे प्रभु! प्राणायाम के द्वारा मेरा पूरा शरीर स्वस्थ हो रहा है। इसके लिए मैं आपको हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

नाड़ी शोधन प्राणायाम - तीसरा चरण

(1) नाड़ी शोधन क्रिया के निर्देशों का पालन करते हैं।

(2) तीसरे चरण में सर्वप्रथम मध्यमा उंगली से बायीं नासिका को बन्द किया जाता है और श्वास को अन्दर लेने की प्रक्रिया दायीं नासिका से प्रारम्भ करते हैं और दांयी नासिका से ही समाप्त करते हैं।

(3) शेष विधि-जैसे श्वास को अन्दर रोकना, मानसिक उच्चारण करना, श्वास को दूसरी नासिका से बाहर निकालना और कुछ समय के बाद बाहर ही रोकना-द्वितीय चरण के अनुसार ही है। इस चरण में मानसिक उच्चारण (आन्तरिक कुम्भक) के लिए निम्न वाक्यों का प्रयोग करते हैं -

प्रभु! आप मुझे वैदिक ज्ञान दे रहे हैं, दयालु बना रहे हैं, परोपकारी बना रहे हैं। मैं हृदय से आपको धन्यवाद देता हूँ।

अथवा

प्राणायाम मंत्र का उच्चारण करें।

3 चक्र पूर्ण होने के बाद बोलें -

हे प्रभु ! प्राणायाम से मेरी सभी इन्द्रियाँ व कर्मेन्द्रियाँ पवित्र हो रही हैं। इसके लिए मैं आपको हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

नाड़ी शोधन प्राणायाम -चौथा चरण

(1) नाड़ी शोधन प्राणायाम के निर्देशों का पालन करते हैं।

(2) चौथे चरण में दोनों नासिकाओं से एक साथ श्वास, (ओ३म् का मानसिक उच्चारण करते हुए) अन्दर लेते हैं, फिर आन्तरिक कुम्भक की स्थिति में, एक बार निम्न मंत्र का उच्चारण करते हैं:-

प्रभु ! आप मुझे आनन्द दे रहे हैं, आरोग्यता दे रहे हैं, दीर्घ आयु दे रहे हैं, सहनशीलता दे रहे हैं। मैं हृदय से आपको धन्यवाद देता हूँ।

अथवा

प्राणायाम मंत्र का उच्चारण करते हैं। तत्पश्चात् ओ३म् का मानसिक उच्चारण करते हुए, श्वास को धीरे-धीरे बाहर निकालते हैं। ऐसे तीन चक्र करने के बाद बोलते हैं :-

हे प्रभु ! प्राणायाम से मेरी बुद्धि कुशाग्र हो रही है। मेरा मन आपकी भक्ति में लग रहा है। मैं इसके लिए आपको धन्यवाद देता हूँ।

(20) आध्यात्मिक उन्नति में शारीरिक शुद्धि का महत्व

आध्यात्मिक उन्नति में शारीरिक शुद्धि अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह अन्तःकरण की पवित्रता को बढ़ाती है। मन की एकाग्रता में सहायता करती है जिससे आत्म-साक्षात्कार और ईश्वर से जुड़ने में आसानी होती है।

शारीरिक शुद्धि के उपाय

(1) मुँह की शुद्धि

(1) रात को सोने से पहले नित्य दांत किसी अच्छे आयुर्वेदिक मंजन या ब्रश पर कॉलेगेट पेस्ट लगाकर साफ करना चाहिये। ब्रश से दांत साफ करने के बाद पानी से तुरन्त कुल्ला न करें। दायें हाथ की तर्जनी अंगुली से मसूड़ों की मालिश करें। तालू पर भी अंगूठे से मालिश करें। मालिश करने के बाद पानी से कुल्ला आदि करें। इससे मुँह की सफाई ठीक होती है। मसूड़े मजबूत होते हैं। उनमें सूजन व दर्द होने की संभावना कम होती है।

(2) उपरोक्त विधि से मुंह साफ करने के बाद सप्ताह में एक या दो बार मसूड़ों की मालिश तिल के तेल से करें। बायें हाथ की हथेली पर 8-10 बूंद तेल की लेवें। दायें हाथ की तर्जनी अंगुली से तेल लगाकर मसूड़ों की मालिश करें। अंगूठे से तालू पर भी तेल लगावें। मालिश के बाद कुछ भी न खायें व सो जायें। तिल के तेल की मालिश करने से पायरिया की शिकायत नहीं होती है। यदि मसूड़ों से खून निकलता है तो रूक जाता है। दांत मजबूत रहते हैं। तिल के तेल में चुटकी भर नमक और 2 ग्राम पिसी हुई फिटकरी मिलाने पर अधिक लाभ होता है।

(3) प्रातःकाल में भी प्राणायाम एवं व्यायाम करने से पहले

उपरोक्त विधि (1) के अनुसार ही रोजाना मुंह साफ करें।

(2) नासिकाओं की शुद्धि

(क) प्राणायाम व श्वास-प्रश्वास की क्रियाओं का पूर्ण लाभ लेने के लिये साधक को दोनों नासिकायें सदैव साफ रखनी चाहियें। इसके लिये सप्ताह में कम से कम एक बार रात को दोनों नासिकाओं में सोते समय ड्रापर से बादाम या सरसों का तेल (3-5 बूंदें) डालनी चाहियें। तेल डालकर श्वास अन्दर लेवें ताकि तेल श्वास नली में आसानी से चला जाये। तेल के स्थान पर गाय का घी भी मामूली सा पिघलाकर प्रयोग कर सकते हैं। घी गर्म नहीं होना चाहिए। इससे नासिकाओं में मल नहीं जम पाता और जमा मल प्रातःकाल में आसानी से श्वास-प्रश्वास की सूक्ष्म क्रिया करने से बाहर निकल जाता है। जुकाम और सिरदर्द भी नहीं होता है।

(ख) प्राणायाम करने से पहले नाड़ी एवं नासिका शुद्धि क्रियायें (कपाल भाति एवं अनुलोम विलोम) करनी चाहियें ताकि हमारी दोनों नासिकायें साफ व स्वस्थ रहें, हमारे दोनों स्वर सम रहें और हमारे मेरुदण्ड के अन्दर की तीन आध्यात्मिक नाड़ियाँ-इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना सदा सक्रिय रहें। विधि निम्न प्रकार है-

कपालभाति क्रिया

(क) दायीं नासिका को सीधे हाथ की मध्यमा अंगुली से बन्द करें।

(ख) थोड़ा-थोड़ा सूक्ष्म श्वास लेकर श्वास को शक्तिपूर्वक बायी नासिका से बाहर फेंके। ऐसा 5 बार करें। प्रत्येक बार श्वास बाहर फेंकने से पहले सूक्ष्म श्वास लेवें।

(ग) अब बायीं नासिका को बन्द करके दायीं नासिका से उपरोक्त क्रिया करें।

(घ) उपरोक्त विधि से नासिकाओं के अन्दर जमा हुआ मल बाहर निकल जाता है। रूमाल का प्रयोग करें।

2(क) अब कपाल भाति क्रिया दोनों नासिकाओं से एक साथ करें।

(ख) अधिक गहरा श्वास अन्दर लेने या भरने का प्रयत्न न करें। प्रत्येक बार श्वास बाहर फेंकने के बाद पेट को तुरन्त थोड़ा सा अन्दर दबायें।

अनुलोम विलोम क्रिया :

(क) दायीं नासिका मध्यमा अंगुली से बन्द करें।

(ख) बायीं नासिका से सूक्ष्म श्वास अन्दर लेकर दायीं नासिका से (बायीं नासिका बन्द करते हुए) तीव्र गति से श्वास बाहर निकालें। यह क्रिया 5 बार करें।

(ग) अब दायीं नासिका से सूक्ष्म श्वास अन्दर लेकर बायीं नासिका से तीव्र गति से इसी प्रकार बाहर निकालें। यह क्रिया भी 5 बार करें।

नोट :- यदि दोनों स्वर सम रूप से नहीं चल रहे हैं तो जप व ध्यान से पहले, पीठ के बल लेट जायें। जो स्वर कम चल रहा हो उसके विपरीत दिशा से करवट लेकर 5 मिनट तक लम्बा श्वास लेते रहें। दोनों स्वर सम हो जायेंगे।

न करें।

(3) आँखों की शुद्धि - संरक्षण

(i) आँखों को नियमित रूप से ठण्डे पानी से प्रात: सायं दो बार

अवश्य धोयें।

(ii) संतुलित आहार लें जिसमें रंगदार फल, सब्जियाँ और ओमेगा-3 फैटी एसिड सम्मिलित हों।

(iii) आँखों का प्रातः समय खुले प्राकृतिक वातावरण में व्यायाम की क्रियायें करें।

(iv) आंवले का सेवन, गाय के घी का सेवन, त्रिफला का सेवन आँखों को स्वस्थ रखने में मदद करता है।

(v) आँख की किसी भी समस्या होने पर तुरन्त डाक्टर से परामर्श करें-लापरवाही न करें, घरेलू उपाय न करें।

(4) कानों का संरक्षण-देखभाल

(i) अपने निजी म्यूजिक प्लेयर, कार में म्यूजिक को तेज आवाज में न सुनें।

(ii) टीवी और रेडियो पर ध्वनि यथासंभव कम रखें।

(iii) स्नान के बाद कान की नमी को सुखायें व कानों को सूखा करें।

(iv) कान को साफ करने के लिए काटन बड्स का प्रयोग कम से कम करें। कान के मैल को बड्स से न हटायें, यह मैल को और अन्दर धकेल सकता है।

(v) नियमित रूप से कानों का चैक-अप करवायें।

(5) गुदा की शुद्धि :

आजकल लगभग 80 प्रतिशत मनुष्यों को कब्ज या पूर्णतया मल त्याग न होने की शिकायत रहती है। मल द्वार साधारणतः अन्दर से साफ नहीं होता है केवल बाहर से ही साफ होता है। इससे अनेक प्रकार की पेट की बीमारियाँ जन्म लेती हैं। इसके कारण दिनचर्या,

जाप, ध्यान, सन्ध्या व मन की एकाग्रता में भी विभिन्न प्रकार की बाधाएं आती हैं। अतः सप्ताह में एक बार मल द्वार अच्छे साबुन से साफ करना चाहिए। स्नान करते समय सीधे हाथ पर साबुन लगाकर मल द्वार पर लगायें। अब मध्यमा अंगुली को मलद्वार में डालकर धीरे-धीरे घुमायें व साफ करें। फिर पानी से मलद्वार धो लें। अपना हाथ भी साबुन से धो लें। ऐसा करने से मलद्वार सदैव स्वच्छ बना रहता है। ध्यान रहे कि मध्यमा उंगली के नाखून बढ़े न हों।

(6) गुप्तांगों की शुद्धि

(क) हर दिन गुप्तांगों को अच्छे साबुन व पानी से साफ करें, कठोर साबुन और शेम्पू का प्रयोग न करें।

(ख) स्नान के बाद मुलायम तौलिये या कपड़े से गुप्तांगों को सूखा करें (नमी को दूर करने के लिए)

(ग) गुप्तांगों को साफ करते हुए अथवा सूखा करते हुए जोर से न रगड़ें।

उपरोक्त क्रियायें करते समय ओ३म् या गायत्री मंत्र का चिंतन करते रहें ताकि शिश्न, योनि आदि की उत्तेजना पर नियन्त्रण रखा जा सके।

(घ) प्रतिदिन स्वच्छ व साफ बनियान व अण्डरवियर पहनें।

(ङ) सदैव सूती बनियान और सूती अण्डरवियर का ही प्रयोग करें।

कब्ज को दूर करने के प्राकृतिक उपाय

(1) भोजन में सलाद की मात्रा अधिक और अन्न दाल की मात्रा कम करें।

(2) भोजन करने से पहले कम से कम एक प्लेट सलाद

अवश्य खायें और खाने में तेल, घी का प्रयोग कम करें।

(3) दिन में एक बार, किसी भी फल का, जो सस्ता हो, उसका अच्छी मात्रा में सेवन अवश्य करें।

(4) फलों को तुरन्त भोजन से पहले या बाद में न खायें।

(5) प्रातःकाल का नाश्ता, दोपहर व रात्री का खाना केवल तभी खायें जब खूब भूख लगी हो, अन्यथा न खायें अर्थात् समयानुसार भोजन न करें।

(6) भोजन करने के आधा घण्टा पहले पानी पी लें, यदि प्यास है। भोजन के तुरन्त बाद पानी या चाय न पियें। भोजन के 40 मिनट बाद पानी व चाय पीना मान्य है।

(7) रात्रि का भोजन रात्रि 7 बजे से पहले अवश्य कर लें, ताकि 12 घण्टे का आंतरायिक उपवास (Intermitant fasting) करके पाचन क्रिया व लीवर को आराम मिल सके।

(8) बाजार के पेय पदार्थों व फास्ट फूड का सेवन न करें।

(9) गेहूँ का आटा, दाल व दूध से बनी चीजों का कम से कम प्रयोग करें।

(10) जितनी भूख हो, उसका तीन चौथाई ही दोपहर व रात्रि के भोजन में खाना चाहिए और

(11) खाना खूब चबा-चबाकर मौन की स्थिति में खायें और भोजन के समय टी0वी0, फोन आदि का प्रयोग न करें।

(12) प्रातःकाल शौच जाने से पहले एक गिलास गुनगुना पानी वज्र आसन में बैठकर धीरे-धीरे अवश्य पियें। यदि ताँबे के बर्तन में रखा पानी है तो अधिक लाभ मिलता है।

(13) प्रातः स्नान करने से पहले (सप्ताह में 1 या 2 बार) गुदा

में सीधे हाथ की मध्यमा अंगुली से सरसों का तेल या तिल का तेल लगाना भी लाभदायक है। तेल लगाने के बाद साबुन से हाथ धो लें। योग में गुदा में तेल देने की क्रिया को गणेश क्रिया कहा जाता है। इस क्रिया को करते समय हाथ के नाखून बढ़े हुए नहीं होने चाहिए। तेल गुदा की सूखती चर्म-टयूबों (मांस-पेशियों) को लचीला और चिकना रखती है। मल आसानी से बाहर निकलता रहता है। बवासीर की शिकायत नहीं होती है। पेट सदैव हलका रहता है। पेट साफ होने से एसीडिटी व गैस नहीं बनती है। दिनचर्या ठीक रहती है। सन्ध्या, जाप व ध्यान में पूर्ण रूप से मन लगता है।

(14) नाभि में तेल/घी लगाने के अनेक शारीरिक लाभ हैं। सप्ताह में कम से कम 2 बार, रात को सोने से पहले, नाभि में 2-3 बूंद सरसों का तेल, तिल का तेल या गाय का घी अवश्य डालें और अंगुली से हिला दें।

(15) सप्ताह या 15 दिन में एक बार 12 से 14 घंटों का उपवास अवश्य रखना चाहिए। यह शरीर को डिटोक्स करने, पाचन तन्त्र को स्वस्थ रखने और आत्म नियन्त्रण एवं आत्म अनुशासन को दृढ़ करता है। उपवास समाप्त होने पर सात्विक भोजन ही ग्रहण करना चाहिए।

कब्ज में लाभदायक प्राकृतिक एनीमा

सप्ताह या 15 दिन में एक बार प्राकृतिक एनीमा घर पर ही ले सकते हैं लेकिन इसकी आदत न बनायें। इससे बिना किसी

कठिनाई के मल त्याग हो जाता है। इसकी विधि किसी भी प्राकृतिक उपचार केन्द्र में जाकर सीखी जा सकती है और एनीमा सेट भी वहाँ से मिल जाता है। इस विधि के अनुसार प्लास्टिक के पाइप की सहायता से गुदा के द्वारा रेक्टम तक पानी पहुँचाया जाता है, पानी को रेक्टम में ऊपर श्वास लेकर 1-2 मिनट के लिए रोका जाता है। पानी न गर्म हो और न ही ठंडा हो। फिर पानी के साथ जमा हुआ मल मुलायम होकर आसानी से बाहर आ जाता है। पेट हल्का हो जाता है। मल त्याग के बाद श्वास-प्रश्वास भी उत्तम ढंग से लिया जाता है। साधारणतय: सीमित मात्रा और उचित समय अन्तराल में लिया गया प्राकृतिक एनीमा हानिरहित है।

नोट :- (i) जिन साधकों को खूनी बवासीर है अथवा पाइल्स है या अल्सर आदि किसी प्रकार की पेट की कोई अन्य बीमारी है, वे प्राकृतिक एनीमा प्रारम्भ में किसी प्राकृतिक चिकित्सक की देखभाल व परामर्श से ही लें अन्यथा नहीं।

(ii) सर्दियों में केवल गर्म (गुनगुना) पानी से ही एनीमा लें।

वर्तमान में प्रार्थना का प्रचलित स्वरूप

मेरे विचार में, आजकल समाज में 3 प्रकार की निम्न प्रार्थनाएं प्रचलित हैं :

(1) **भिखारी की प्रार्थना :** इसमें व्यक्ति अपने आप को बहुत असहाय महसूस करता है। थोड़ी सी विपरीत परिस्थिति में, दु:ख में या गरीबी की स्थिति में ईश्वर या किसी देवता से कुछ न कुछ मांगता रहता है। वह विश्वास करता है कि ईश्वर या देवता की

आराधना करने से उसकी विपत्ति या दु:ख समाप्त हो जायेगा। ईश्वर/देवता में विश्वास करना, श्रद्धा रखना अच्छी बात है लेकिन इस प्रार्थना में पुरुषार्थ करने की इच्छा-शक्ति नहीं दिखाई देती। ऐसी प्रार्थना फलदायक नहीं होती है लेकिन ऐसे मनुष्य व महिलाओं की, भारत में बहुत बड़ी संख्या है, विशेषकर हिन्दु समाज में। ऐसे व्यक्तियों का, कुछ चतुर पंडित, ज्योतिषी व तांत्रिक आजकल भी भरपूर आर्थिक शोषण कर रहे हैं। इसका मूल कारण है अन्ध विश्वास, अज्ञानता, वैदिक सत्संग में भाग न लेना और आर्ष ग्रन्थों का स्वाध्याय न करना। रोग, बीमारी या विपरीत परिस्थितियों में विशेषज्ञ की सलाह न लेना, वैदिक ज्ञान और विज्ञान के बारे में अनभिज्ञ होना।

(2) **अमीर की प्रार्थना :** इसमें व्यक्ति सदैव प्रसन्न बना रहता है, परिश्रम करता है। जो सुख-सुविधायें, धन आदि उसके पास है, उसके लिए वह परमात्मा को या अपने किसी अन्य इष्ट देवता को हृदय से धन्यवाद देता है। उसके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता है। ईश्वर के साथ-साथ अन्य देवी-देवता की भी उपासना करके धन की कामना करता है लेकिन दु:ख या विपरीत परिस्थिति आने पर वह ईश्वर व अन्य देवताओं से इस दु:ख को दूर करने के लिए भी प्रार्थना करता है। दु:ख को न्यून करने के लिए ज्योतिष, पंडित आदि के पास जाता है। उनके द्वारा बताये गये विभिन्न ज्योतिष उपायों को भी करता है।

(3) **वैदिक प्रार्थना :** इसमें व्यक्ति पहले पूर्ण पुरुषार्थ करता है। तत्पश्चात् अपने उत्तम कर्म की सिद्धि के लिए केवल परमात्मा

से प्रार्थना करता है। ऐसे व्यक्ति में ईश्वर के प्रति पूर्ण श्रद्धा होती है। वह अभिमान नहीं करता। उसमें विनम्रता का भाव होता है। वह कर्मफल व्यवस्था में विश्वास रखता है और केवल निराकार ईश्वर की ही उपासना करता है। सफलता मिलने पर वह पुनः ईश्वर को धन्यवाद देता है। असफलता की स्थिति में निराश नहीं होता। पुनः प्रयास करने का प्रयत्न करता है, लेकिन निराशा की अवस्था में पंडितों, ज्योतिषियों, मन्दिरों व तांत्रिकों के पास उपायों के लिए या आशीर्वाद लेने के लिए नहीं जाता है।

उपरोक्त तीनों प्रार्थनाओं में से कौन सी प्रार्थना श्रेष्ठ है, इसका निर्णय आप स्वयं कर सकते हैं।

भाग-5

मंत्र जप विज्ञान

जिस प्रकार अपने भविष्य के बारे में जानने के लिए लोग अक्सर ज्योतिषीय अंधविश्वास के शिकार हो जाते हैं। ज्योतिषियों और पण्डितों के पास जाकर अपना समय और पैसा नष्ट करते हैं। उसी प्रकार जीवन में तन, मन के विभिन्न विकारों और अस्थायी/स्थायी विपरीत परिस्थितियों का उचित निदान न होने पर लोग पण्डितों, ज्योतिषियों के चक्कर लगाते हैं। समस्या के निवारण के लिए ज्योतिषियों से मंत्र पूछते हैं। अपना बहुमूल्य समय व धन टोने-टोटकों व मंत्र जप अनुष्ठान आदि में लुटाते रहते हैं। कारण! वैदिक ज्ञान का अभाव।

वैदिक कर्म फल व्यवस्था की अज्ञानता, उचित विशेषज्ञ से परामर्श का न मिलना और चिकित्सा सुविधाओं का अभाव-इन तीन कारणों से चालक व अज्ञानी ज्योतिषियों, पण्डितों और मौलाना-फकीरों का धंधा आज भी टेलीविजन और समाचार पत्रों के माध्यम से,भारत के सभी शहरों व गाँवों में खूब पनप रहा है। इस कुप्रथा के शिकार न केवल अनपढ़ लोग हो रहे हैं बल्कि शिक्षित, धनी और आधुनिक लोग भी इस अन्धविश्वास में बुरी तरह फंसे हुये हैं और बड़े दु:ख के साथ कहना पड़ रहा है कि यह ''मत्र से रोग निवारण/ समस्या निवारण'' की कुप्रथा हिन्दू समाज में ही सबसे अधिक प्रचलित है क्योंकि धनी व शिक्षित लोग भी न तो वेदों का स्वाध्याय करते हैं और न ही मंत्र उपाय बताने वाले तथाकथित व्यक्तियों की योग्यता का निरीक्षण करते हैं।

मंत्र जप एक अध्यात्मिक विज्ञान है। किसी मन्त्र या शब्द, उसके अर्थ की भावना के साथ, बार-बार उच्चारण करने को जप

कहते हैं। निरन्तर किसी मंत्र का विधिपूर्वक जप करने से साधक की प्रवृत्ति में बदलाव आता है, ईश्वर के धारणीय गुण-न्यायकारी, दयालु, पवित्र आदि उसके अन्तःकरण में स्थापित होना प्रारम्भ हो जाते हैं। यम-नियम के पालन में दृढ़ता आने लगती है, मानसकि तनाव कम होने लगता है, अध्यात्म में प्रगति का अनुभव होता है। उस स्थिति को मंत्र की सिद्धि कहा जाता है।

कोई मंत्र कब सिद्ध होता है, उसका जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है, साधक को मंत्र जप से किस प्रकार का लाभ होता है-ऐसे प्रश्न प्रत्येक साधक के मन में उठना स्वभाविक हैं। इन्ही प्रश्नों के निवारण का प्रयत्न यहाँ पर किया गया है।

किसी भी मंत्र का जप चार प्रकार से किया जा सकता है:-

(1) **वाचिक जप :** जब हम किसी मंत्र या शब्द का उच्चारण बार-बार ऊँचे व दीर्घ स्वर में करते हैं तो उसे वाचिक जप कहते हैं।

(2) **ऊँपाशु जप :** जब हम किसी मंत्र या शब्द का उच्चारण बार-बार बिना ध्वनि के (केवल होठ हिलाकर) दीर्घ स्वर में करते हैं तो उसे उपांशु जप कहते हैं।

(3) **मानसिक जप :** जब हम किसी मंत्र या शब्द का उच्चारण केवल मन से, मानसिक रूप से (बिना होंठ हिलाये) करते हैं तो उसे मानसिक जप कहते हैं।

(4) **अजपा जप:-** मंत्र के अर्थ की भावना के अनुकूल पर्याप्त अभ्यास के बाद जब मानसिक जप व्यवहार काल में भी स्वयं होने लगता है तो ऐसी स्थिति को अजपा जप कहते हैं।

मंत्र जप में सफलता हेतु ध्यान रखने योग्य बातें

(1) संकल्प

संकल्प किसी विषय पर दृढ़ निश्चय लेने को कहते हैं, अर्थात् कार्य को पूर्ण करने की वह इच्छा जो मन में उत्पन्न हो। जप, ध्यान, भक्ति, ईश्वर स्तुति, प्रार्थना, उपासना आरम्भ करने से पहले एक दृढ़ निश्चय या विचार प्रकट करने और उसका व्यवहार काल में पालन करना–एक बहुत ही लाभकारी क्रिया है। संकल्पों द्वारा मन को शुभ कर्म करने का अभ्यास कराना होता है। मन की ईश्वर के प्रति श्रद्धा व रुचि जागृत करनी होती है। इससे साधक को अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कठिन परिश्रम करने की प्रेरणा मिलती है और मन में सदैव सकारात्मक विचार ही आते हैं। इससे हमारे अन्तःकरण (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार) पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। फलस्वरूप, मनुष्य की आध्यात्मिक उन्नति तीव्र गति से बढ़ती है।

संकल्प में बहुत बड़ी प्रेरणा व शक्ति है। प्रतिदिन प्रातःकाल में संकल्प बोलना और सायंकाल आसन लगाने के बाद और ध्यान से पहले, अपना आत्मनिरीक्षण करना कि मेरा व्यवहारकाल संकल्पों के अनुकूल है–एक अति उत्तम प्रक्रिया है। यह प्रतिदिन करनी चाहिए। मनुष्य पाप कर्मों से बचता है। मन नियन्त्रण में रहता है। शुभ कर्म करने की प्रेरणा मिलती है। हमारे ऊपर प्रभु की कृपा होती है। प्रभु भक्ति में मन लगता है।

(2) मंत्र व मंत्र का सही उच्चारण:– मंत्र वैदिक होना चाहिए। यदि जप करने वाला मंत्र वैदिक नहीं है तो यह ईश्वरीय कर्म फल व्यवस्था और वेदों में दी गई आज्ञायों/निर्देशों के अनुकूल होना

चाहिए। यदि मंत्र वैदिक नहीं है और ईश्वरीय कर्म फल व्यवस्था अथवा ईश्वरीय न्याय व्यवस्था का उल्लंघन भी करता है तो ऐसे मन्त्र जाप से कोई लाभ होने वाला नहीं है। इसके साथ-साथ (जितना संभव हो) वेद मन्त्र का उच्चारण भी ठीक होना चाहिए लेकिन, यदि मन्त्रोच्चारण ठीक प्रकार से करने में साधक असमर्थ है तो उसे आत्म ग्लानि नहीं होनी चाहिये क्योंकि ईश्वर साधक की भावना व आचरण का निरीक्षण करता रहता है, न कि केवल उसके मन्त्र के शाब्दिक उच्चारण का।

(3) मंत्र उच्चारण की गति एवं सही विधि :-

मंत्र उच्चारण 4 प्रकार से किया जा सकता है - (1) तीव्र गति से (2) मध्यम गति से (3) सामान्य गति से और (4) धीमी गति से। तीव्र गति व मध्यम गति द्वारा पर्याप्त अभ्यास के बाद सामान्य गति व धीमी गति से मंत्र उच्चारण करने में निपुणता लानी चाहिए। धीमी गति से उच्चारण करने से मन्त्र के अर्थ/भावार्थ का चिंतन ठीक प्रकार से हो पाता है। विस्तृत जानकारी के लिए पृष्ठ -88 पर देखें।

प्राण साधना के साथ मंत्र जप करने से शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक लाभ अधिक मिलता है। मंत्र जप करते समय प्राणायाम का सही प्रयोग (श्वास-प्रश्वास, भस्त्रिका, बाह्य कुम्भक, स्तम्भवृत्ति प्राणायाम आदि) करना भी अनिवार्य है। प्राणायाम की ये क्रियायें मन को संयम में रखने और चित्त की वृत्तियों को रोकने में सहायक होती हैं। प्राणायाम के उपयुक्त व ठीक प्रयोग के अभाव में न तो मन और शरीर की चंचलता पर विराम लगता है और न ही जप कर्ता को शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य का पूरा लाभ ही मिल पाता है।

(4) मंत्र के अर्थ अथवा भावार्थ का ज्ञान :-

जप कर्ता को मंत्र का अर्थ और भावार्थ कंठस्थ (याद) होना चाहिये। **मंत्र जप के बाद उसके अर्थ/भावार्थ का उच्चारण केवल एक बार ही करना आवश्यक है-मंत्र को बार-बार दोहराने के साथ नहीं।** पर्याप्त अभ्यास के बाद और व्यवहारकाल में उसके अनुसार दिनचर्या का पालन करने पर, मंत्र का अर्थ/भावार्थ साधक के अन्त:करण में स्थापित हो जाता है। अन्त:करण में मंत्र व भावार्थ स्थापित होने की प्रक्रिया मानसिक और अजपा जप में बहुत सहायक होती है। मानसिक/अजपा जप में मंत्र के अर्थ की भावना मंत्र उच्चारण के साथ-साथ चलती रहती है। मंत्र के अर्थ का उच्चारण अलग से करने की आवश्यकता नहीं होती है। मन पूर्णतय: एकाग्र हो जाता है। व्यवहार काल में भी इस अभ्यास का प्रभाव पड़ता है। व्यक्ति को शुभ कर्म करने के लिए प्रेरित करता है। इसके विपरीत यदि मंत्र का भावार्थ याद नहीं है, उसका पर्याप्त अभ्यास नहीं है, भावार्थानुसार आचरण करने की इच्छा नहीं है, तो ऐसी स्थिति में साधक को मंत्र के अनुसार कर्म करने की प्रेरणा नहीं मिलती है। फलस्वरूप वह मंत्र के फल एवं लाभ से वंचित रहता है।

नि:सदेह किसी दूसरे व्यक्ति या पण्डित के द्वारा मंत्र जप करवाना पूर्णत: अवैज्ञानिक है, गलत है, वेद विरुद्ध है। इससे साधक को किसी प्रकार का भी लाभ नहीं होता है। केवल जप कर्ता (पण्डित) को अनुचित आर्थिक लाभ होता है।

(5) मंत्र अर्थ एवं भावार्थ के अनुसार दिनचर्या :-

साधक जिस मंत्र का नित्य जप कर रहा है, उसके फल

प्राप्ति को सफल करने के लिए व्यवहार काल में मन्त्र के अनुसार प्रयत्न करना आवश्यक है और मन में भावना बनाये रखें कि जप से मुझे सुख, शान्ति, प्रसन्नता और आनन्द मिल रहा है।

अन्तः करण में स्थापित मंत्र के संस्कार साधक को वांछित कर्म करने के लिए बाध्य करते हैं। इसके बाद भी यदि जपकर्ता उचित प्रयत्न नहीं करता है अथवा मंत्र के भावार्थ व आदेश के विपरीत कार्य करता है या यम-नियम का पालन नहीं करता है तो ऐसे साधक को मंत्र जप का लाभ मिलना चाहिये अथवा नहीं-इसका निर्णय आप स्वयं कर सकते हैं।

(6) ईश्वरीय कर्मफल व्यवस्था का ज्ञान व उसमें पूर्ण विश्वास :-

मंत्र जपकर्ता को ईश्वरीय कर्मफल व्यवस्था/न्याय व्यवस्था का न केवल ज्ञान होना चाहिए बल्कि उसमें पूर्ण आस्था भी होनी चाहिये। **कर्मफल में पूर्ण विश्वास रखने वाला साधक, मंत्र जप के द्वारा, ईश्वर से कभी भी अनुचित कामना की पूर्ति का आग्रह नहीं करता है। बिना परिश्रम के ईश्वर से कोई कृपा नहीं मांगता है। दुःख आने पर दुःखी नहीं होता है। दुःख, कष्ट या समस्या के निवारण के लिए उचित प्रयत्न करता है। यदि दुःख स्थायी है तो ईश्वर से उस दुःख को सहने की सहनशक्ति मांगता है।**

आजकल अधिकतर लोग पण्डितों और ज्योतिषियों के परामर्श पर मंत्र जप का शाब्दिक अभ्यास संसारिक कामनाओं की पूर्ति (बिना परिश्रम) के लिए कर रहे हैं। इन पण्डितों, ज्योतिषियों और जप कर्ताओं को वैदिक सिद्धान्तों व कर्मफल

व्यवस्था का या तो ज्ञान नहीं है अथवा निजी हित में इनका उल्लंघन करने में ही पण्डितों, ज्योतिषियों व साधकों की रूचि होती है। ऐसे साधक मंत्र जप में केवल अपना समय नष्ट करते हैं।

(7) यम नियम का पालन :-

मंत्र जप साधना से ईश्वर उन्हीं साधकों पर कृपा करता है जो यम (अंहिसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह) और नियम (शुद्धि, सन्तोष, स्वाध्याय, तप, ईश्वर प्रणिधान) का जीवन में पालन करते हैं और मंत्र की भावना के अनुसार कर्म भी करते हैं। निःसदेह **God helps those who help themselves.**

अतः केवल मंत्र जप के नित्य अभ्यास से नाममात्र का शारीरिक व मानसिक (काल्पनिक) लाभ तो अवश्य मिल सकता है–आध्यात्मिक लाभ नहीं। ईश्वरीय कृपा तो कदापि नहीं।

(8) निरन्तर अभ्यासः-

मंत्र जप की संख्या कितनी होनी चाहिए। यह जपकर्ता के पास उपलब्ध समय और उसकी अन्य परिस्थितियों पर पूर्णतयः निर्भर करता है। महत्त्व है मन्त्र जप के साथ–साथ उसके अनुसार आचरण करने का, कर्म करने का। अतः मंत्र जप की संख्या - कम या अधिक–यह साधक की समय की उपलब्धता व मानसिक स्थिति पर निर्भर करता है।

(9) किस मंत्र का जप करना चाहिए

(क) जिस मंत्र या शब्द के भावार्थ से ईश्वर का शुद्ध स्वरूप या

उसके गुण, कर्म, स्वभाव या उसके उपदेश या शिक्षाएँ हमारे सामने उपस्थित होते हैं-उसी का जप करना चाहिए। वेदों में दिये गये सभी मन्त्र उपासनीय हैं, पूजनीय हैं। अपनी योग्यता व रुचि के अनुसार आप किसी भी मन्त्र का चयन कर सकते हैं। वैदिक मन्त्रों द्वारा अर्थ की भावना के साथ ईश्वर का गुणगान करने से हमारे हृदय में आनन्द की तरंगें उत्पन्न होने लगती हैं।

वैदिक मन्त्रों के उदाहरण-(1) ओ३म् का जप, (2) गायत्री मंत्र का जप, (3) प्राणायाम मंत्र का जप, (4) ओ३म् असतो मा सद्गमय का जप, (5) ओ३म् विश्वानि देव .... आदि, आदि।

(ख) ओ३म् जप एवं गायत्री जप ही श्रेष्ठ जप है। प्राणायाम और मंत्र के अर्थ की भावना के साथ इनके जप को करने से मन की चंचलता धीरे-धीरे कम होती जाती है। शरीर स्थिर होने लगता है इन दोनों जप से ध्यान की स्थिति भी शीघ्र बनने लगती है।

प्राणायाम द्वारा मंत्र उच्चारण के नियम

(1) मन/धारणा को आज्ञाचक्र, हृदय, नाभि, मूलाधार या मंत्र उच्चारण पर स्थिर करते हैं।

(2) ओ३म् और मन्त्र का उच्चारण दो अलग-अलग चरणों में किया जाता है। ओ३म् के उच्चारण के बाद बाह्य कुम्भक की स्थिति में भी मंत्र का उच्चारण (मानसिक) किया जा

सकता है)

(3) ओ३म् का उच्चारण श्वास को छोड़ते हुए दीर्घ स्वर में करते हैं। ओ३म का उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ समाप्त होना चाहिए। उच्चारण समाप्त होने पर सूक्ष्म बाह्य कुम्भक (5–10 सैकन्ड के लिए) लगाकर ईश्वर के किसी एक गुण का चिन्तन करते हैं। उसके बाद 3 सामान्य श्वास लेते हैं।

(4) मन्त्र का उच्चारण भी धीमी गति से श्वास को छोड़ते हुए करते हैं। मन्त्रोच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ समाप्त होना चाहिए। यदि मन्त्र लम्बा/बड़ा है तो बीच–बीच में सूक्ष्म श्वास ले सकते हैं। मन्त्र का उच्चारण समाप्त होने पर बाह्य कुम्भक की स्थिति में ईश्वर के गुणों का चिंतन करते हैं। इसके बाद 3 सामान्य श्वास लेते हैं।

(5) ओ३म् एवं मंत्र का उच्चारण सदैव 3 सामान्य श्वास व उसके बाद एक सूक्ष्म श्वास अन्दर लेकर–श्वास छोड़ते हुए करते हैं।

(6) प्रत्येक मन्त्र उच्चारण के बाद यथाशक्ति स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनाते हैं और इसमें मन्त्र के भावार्थ का चिंतन करते हैं।

(7) यदि भावार्थ कंठस्थ (याद) नहीं है तो स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में ईश्वर के किसी गुण,कर्म, स्वभाव का चिंतन कर सकते हैं।

(8) श्वास–प्रश्वास द्वारा मन्त्रोच्चारण के पर्याप्त अभ्यास के बाद सन्ध्या, ध्यान व प्रार्थना मन्त्रों में–वाचिक, उपांशु या

मानसिक उच्चारण करते समय केवल सामान्य श्वास, बाह्य कुम्भक और स्तम्भवृत्ति प्राणायाम का ही प्रयोग किया जाता है।

(9) बाह्य कुम्भक और स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की सहायता से सन्ध्या व ध्यान की अवधि को इच्छानुसार (यथाशक्ति) बढ़ाया जाता है।

(10) पर्याप्त अभ्यास के बाद मंत्र के मानसिक उच्चारण के साथ-साथ मन्त्र के अर्थ की भावना का चिंतन भी स्वत: होता रहता है। अत: अलग से अर्थ या भावार्थ का चिंतन नहीं करना पड़ता है।

(11) ध्यान रखने योग्य अन्य बातें :-

(i) जप के समय व स्थान का नियमित पालन करें।

(ii) जप करते समय शरीर, सिर, गर्दन, छाती, कमर सीधी रखें। शरीर सीधा परन्तु ढीला रखें। मन को प्रसन्न रखें।

(iii) आसन पर बैठने का गद्दा 1 से 1½ इंच मोटा होना चाहिये।

(iv) यदि सुखासन अथवा सिद्धासन में न बैठ सकें तो 8 इंच ऊँची चौकी का प्रयोग कर सकते हैं। यदि यह भी संभव न हो तो कुर्सी (Without Arms) का प्रयोग भी कर सकते हैं।

(v) जप के समय मोबाइल की घंटी व टेलीविजन बन्द कर दें।

(vi) जप करने से पहले सुनिश्चित कर लें कि जब तक (नियमित निर्धारित समय तक) जप करना है, उस समय किसी प्रकार की कोई न तो जल्दी है और न ही अन्य कोई कार्य तुरन्त करने के लिए आपकी प्रतीक्षा कर रहा है। यदि ऐसा है तो पहले उसको पूर्ण कर लीजिए।

(vii) जप करने से पहले स्नान करना उत्तम है लेकिन अनिवार्य नहीं। आप अपने स्वास्थ्य और सामाजिक परिस्थिति के अनुसार निर्णय ले सकते हैं।

(viii) जप के साधक को शुद्धि क्रियायें, श्वास-प्रश्वास, कुम्भक, ज्ञान मुद्रा का ज्ञान व अभ्यास होना चाहिए।

(ix) प्राणायाम / प्राणसाधना / श्वास-प्रश्वास के साथ जप करना अधिक लाभदायक है। प्राणायाम के समय बताई गई सावधानियों का पालन करें। अपने स्वास्थ्य को ध्यान में रखें।

(x) यदि जप खाना खाने के बाद अथवा अल्पाहार के बाद किया जा रहा है तो इसको वज्र आसन में बैठकर करें और प्राणायाम का प्रयोग न करें।

(xi) जप में प्राणायाम, श्वसन क्रियायें करते समय यदि सिर भारी हो जाये, चक्कर आने लगे या कोई अन्य शारीरिक परेशानी हो तो प्राणायाम की क्रियायों का प्रयोग जप में करने से पहले किसी निपुण योगाचार्य/वैद्य डॉक्टर की सलाह लें।

(xiii) जप करते समय/ध्यान करते समय मन को भावात्मक रूप से प्रसन्न रखें।

(xiii) जप व ध्यान करते समय व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध बनायें। ईश्वर के गुणों की प्रशंसा करके उसके प्रति अपनी श्रद्धा बढ़ायें।

(xiii) ईश्वर के एक या दो धारणीय गुणों को (न्यायकारी, दयालु आदि) को अपनाकर उनके अनुसार व्यवहार काल में

कर्म करें।

(xiv) जप करने वाले साधक के विचार सकारात्मक होनें चाहिए। समाचार पत्र, टीवी, फेसबुक, यू-टयूब पर समय का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए।

(xv) जप करते समय मंत्र के अर्थ की भावना बनाये रखनी चाहिए।

(xvi) श्वास-प्रश्वास की क्रियाओं का मंत्र उच्चारण के समय प्रयोग करना चाहिए।

(xvii) मंत्र जप के बाद कम से कम 2 विषयों पर 1-1 वैदिक भजन का वाचिक/ मानसिक उच्चारण करने से अन्तःकरण की पवित्रता बनी रहती है और ईश्वर भक्ति में मन लगने लगता है। वैदिक भजन इस पुस्तक में, साधकों की सुविधा हेतु, दिये गये हैं।

''वैदिक मन्त्रों'' के जप से लाभ

(1) समय का सदुपयोग होता है।

(2) अच्छे स्वास्थ्य और सुबुद्धि की प्राप्ति होती है। विचार प्रदूषण से मुक्ति मिलती है।

(2) मन एकाग्र होता है और ईश्वर-भक्ति में सफलता मिलती है।

(3) आत्मा शुद्धि के साथ-साथ इन्द्रियों पर नियन्त्रण रहता है।

(4) आत्मा को, ईश्वर के धारण करने योग्य गुण - न्यायकारी, दयालु, पवित्र आदि, प्रयत्न करने पर प्राप्त होते हैं।

(5) अच्छे संस्कार जाग्रत होते हैं। सतोगुण बढ़ता है।

(6) शुभ एवं निष्काम कर्म करने की प्रेरणा मिलती है। यज्ञ

(हवन) करने की प्रेरणा भी मिलती है।

(7) पाप कर्म से दूर रहने की प्रवृत्ति बनती है। यम नियम पालन करने की प्रेरणा मिलती है।

(8) मानसिक रोगों (काम, क्रोध, लोभ, मोह, द्वेष, अंहकार) से धीरे-धीरे छुटकारा मिलता है और शारीरिक व मानसिक दुखों को सहन करने की शक्ति प्राप्त होती है।

(9) धन दान, समय का दान, परोपकार, समाज सेवा करने की प्रवृत्ति का विकास होता है।

(10) सभी शुभ कार्यों में, ''ईश्वर की कृपा'' और ''परिश्रम से'' सफलता मिलती है। विपरीत परिस्थिति में भी मन की प्रसन्नता बनती रहती है।

मन्त्र जप सम्बन्धित कुछ मान्यताऐं और उनकी सत्यता

(1) मंत्र को गुरु द्वारा दीक्षा लेकर जपना अनिवार्य है – **नहीं**

(2) मंत्र जप किसी भी ग्रह के अशुभ प्रभाव को शान्त कर सकता है – **नहीं**। ग्रह अनिष्ट (अशुभ) नहीं होते हैं।

(3) मंत्र जप सिद्ध होने के बाद आज्ञाचक्र या मस्तिष्क में किसी प्रकार का नीला-लाल प्रकाश दिखाई देता है – **नहीं**

(4) मंत्र जप के लिए माला की अनिवार्यता है – **नहीं**।

(5) मन्दिर या धर्म स्थल पर किये गये जप का अनन्त गुना फल मिलता है – **नहीं**।

(6) मंत्र जप की गिनती करना सही है – **नहीं**।
गिनती जप में बाधक है। धारणा को विकृत करती है।

(7) मंत्र संख्या का मंत्र जप में कोई महत्त्व है – **नहीं**।

(8) मंत्र जप में तुलसी, रुद्राक्ष, चंदन या स्फटिक की 108 दानों की माला का उपयोग अनिवार्य है – **कदापि नहीं**।

(9) मंत्र जप से मनोकामनाएं पूर्ण हो जाती हैं – **नहीं**।

(10) मंत्र जप से संसारिक समस्याओं का निवारण हो जाता है – **नहीं**।

(11) पण्डित या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा (आपके लिए) किया गया जप आपको लाभ दे सकता है – **नहीं**!
यह एक प्रकार का आर्थिक शोषण है।

(12) मृत्युंजय मंत्र का जप (बिना परिश्रम व प्रयत्न के) मनुष्य को मृत्यु और बिमारी से बचाता है – **नहीं**।

(13) मंत्र जप में मंत्र का अर्थ/भावार्थ का चिन्तन करना आवश्यक है–हाँ! पूर्ण आध्यात्मिक लाभ के लिए।

(14) ओ३म् जप, गायत्री जप या अन्य वैदिक मंत्र जप से पूर्ण लाभ लेने के लिए वेदानुसार आचरण अनिवार्य है- **हाँ।**

प्राण साधना द्वारा मंत्र जप

प्राण साधना श्वास-प्रश्वास का एक मानसिक अभ्यास है। योग और ध्यान की एक महत्वपूर्ण तकनीक है। इसके द्वारा श्वास-प्रश्वास को नियन्त्रित करके प्राण ऊर्जा को संतुलित और सक्रिय किया जाता है। प्राण साधना से मन संयम में रहता है। इससे शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य में भी लाभ होता है। मन भटकता नहीं है। ध्यान में मन लगता जाता है।

प्राण को सर्वप्रथम बढ़ाना (आभ्यान्तर अथवा बाह्य प्राणायाम की स्थिति में) और अन्त में इसको स्तम्भवृत्ति प्राणायाम द्वारा अपने नियन्त्रण में रखने की कला को प्राण साधना कहते हैं। इसके अभ्यास से साधक का शरीर व मन ध्यान काल में पूर्णतः स्थिर हो जाता है। प्राण साधना को बलिष्ठ बनाने के लिए इसमें साधन के रूप में कुछ श्वास प्रश्वास की क्रियायें (हठ योग क्रियायें) का अभ्यास किया जाता है इससे शरीर स्वस्थ रहता है-दोनों नासिकायें साफ व निर्मल रहती हैं और फलस्वरूप प्राण साधना में सहायता मिलती है।

प्राण साधना द्वारा मंत्र जप करने में मुख्य रूप से तीन क्रियायों का प्रयोग होता है। इनका विवरण इस प्रकार है।

(1) **सूक्ष्म श्वसन :** इसमें श्वास की गति धीमी होती है- गहरी नहीं। सूक्ष्म श्वास लेने का तात्पर्य है श्वास को क्षण भर के लिए (थोड़ा सा) अन्दर लेना और फिर धीरे-धीरे मंत्र उच्चारण के साथ बाहर निकालना।

(2) **बाह्य प्राणायाम (कुम्भक):** इसमें मंत्र उच्चारण के साथ-साथ श्वास को भी धीरे-धीरे बाहर निकालते रहते हैं। मंत्र के पूर्ण उच्चारण के बाद श्वास को बाहर ही 5 से 7 सै. के लिए रोकते हैं। अधिक समय तक बाह्य कुम्भक नहीं लगाते हैं। इसे बाह्य सूक्ष्म कुम्भक भी कह सकते हैं।

(3) **स्तम्भवृत्ति प्राणायाम :** स्वाभाविक रूप से चलते हुए श्वास को ''जहाँ का तहाँ'' रोक देना स्तम्भवृत्ति प्राणायाम कहलाता है। इस स्थिति में मन्त्र का मानसिक उच्चारण अथवा मंत्र के अर्थ/भावना का चिंतन किया जाता है। इसकी अवधि साधक के स्वास्थ्य पर निर्भर करती है।

प्राण साधना द्वारा मंत्र जप के नियम :

(1)(क) उपरोक्त तीनों क्रियायें मन की वृत्तियों/चंचलता को उपासना काल में रोकने में सहायक होती हैं। मन की एकाग्रता को बढ़ाती हैं। इनका प्रतिदिन अभ्यास करना चाहिये।

(ख) प्रथम क्रिया में श्वास को धीरे-धीरे बाहर निकालने के साथ-साथ मंत्र का उच्चारण किया जाता है। दूसरी क्रिया में मंत्र उच्चारण के साथ-साथ श्वास को धीरे-धीरे बाहर निकाल कर बाह्य कुम्भक लगाते हैं। बाह्य सूक्ष्म कुम्भक से वापिस आने के बाद 2-3 सूक्ष्म श्वास अथवा सामान्य श्वास लेते हैं ताकि रक्तचाप ठीक रहे। शरीर में थकावट न हो।

(ग) तीसरी क्रिया में सूक्ष्म श्वास/ सामान्य श्वास के बाद स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनाई जाती है और इस स्थिति में ही मंत्र का वाचिक अथवा उपांशु अथवा मानसिक उच्चारण किया जाता है। यदि मंत्र लम्बा है तो मंत्र में प्रत्येक विराम पर 2-3 सूक्ष्म श्वास ले लेते हैं। इस स्थिति

में मानसिक उच्चारण अधिक प्रभावी होता है।

(घ) मंत्र के भावार्थ का उच्चारण भी स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में ही करते हैं।

(ङ) उच्च रक्तचाप एवं हृदय रोगी बाह्य कुम्भक एवं स्तम्भवृत्ति प्राणायाम का प्रयोग केवल डॉक्टर की सलाह से ही करें, अन्यथा नहीं

ऐसे साधक प्राण साधना विधि के प्रयोग के बजाय मंत्र जप श्वास प्रश्वास की धीमी गति के साथ कर सकते हैं। इससे भी पर्याप्त लाभ होता है।

(च) जो साधक प्रतिदिन योगाभ्यास एवं प्राणायाम नहीं करते हैं अथवा शारीरिक रूप से कमजोर हैं, वे बाह्य कुम्भक 5 सैकण्ड से अधिक न लगायें। स्तम्भ वृत्ति प्राणायाम की स्थिति में भी अधिक समय तक न रूकें।

(छ) जो साधक स्वस्थ हैं, प्रतिदिन योगाभ्यास व प्राणायाम करते हैं, जिनके फेफड़े स्वस्थ हैं, वे मंत्र जप उच्चारण एवं भावार्थ उच्चारण में बाह्य कुम्भक और स्तम्भवृत्ति प्राणायाम का प्रयोग स्वास्थ्य के अनुसार अधिक समय तक कर सकते हैं और करना भी चाहिए।

(2) प्राण साधना विधि द्वारा वैदिक मंत्र जप करने में ओ३म् और मंत्र–दोनों का उच्चारण दो अलग–अलग चरणों में अथवा एक साथ भी धीमी गति से किया जा सकता है।

(3) समाज या घर में सामूहिक उच्चारण में (1) ओ३म् और मंत्र का उच्चारण एक साथ करते हैं। (2) उच्चारण भी कुछ तीव्र गति से करते हैं।

(4) ओ३म् का उच्चारण पर/छोटे मंत्रो के उच्चारण पर

(उदाहरण: प्राणायाम मंत्र), लम्बे मंत्रों के उच्चारण पर-सभी पर ये प्राण साधना द्वारा जप के नियम लागू होते हैं।

(5) मंत्र या ओ३म् का उच्चारण प्रारम्भ करने से पहले सूक्ष्म श्वास अन्दर लेते हैं-दीर्घ गहरी श्वास अन्दर नहीं। सामान्य श्वास लेकर भी उच्चारण प्रारम्भ कर सकते हैं।

(6) मंत्र उच्चारण के साथ-साथ/ओ३म् के उच्चारण के साथ-साथ श्वास को धीरे-धीरे बाहर (स्वभाविक रूप से) छोड़ते जाते हैं।

(7) **प्रत्येक उच्चारण** समाप्त होने पर केवल 5 सैकण्ड के लिए बाह्य प्राणायाम (कुम्भक) का प्रयोग करते हैं, अर्थात् श्वास को बाहर ही कुछ सैकण्ड के लिए रोकते हैं।

(8) प्रत्येक बाह्य कुम्भक के बाद सामान्य श्वास की स्थिति बनाते हैं, अर्थात् सामान्य श्वास लेते हैं, इससे शरीर की थकान दूर होती है। रक्त का संचालन ठीक रहता है।

(9) सामान्य श्वास के बाद स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनाते हैं।

(10) (क) स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में पूर्ण मंत्र उच्चारण के बाद 2-3 सामान्य श्वास लेते हैं।

(ख) अब सामान्य श्वास के बाद पुन: स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में ही मंत्र के भावार्थ का उच्चारण (वाचिक/ उपांशु/ मानसिक) करते हैं।

(ग) पर्याप्त अभ्यास के बाद मंत्र जप के साथ मंत्र के अर्थ की भावना का चिंतन भी साथ-साथ चलता रहता है।

उपरोक्त नियमों का पालन प्रत्येक मंत्र के उच्चारण में

करते हैं। भावार्थ के उच्चारण में भी करते हैं।

जप व ध्यान में प्राण साधना का क्रियान्वयन (अभ्यास)

(1) सामान्य श्वास-प्रश्वास द्वारा

(क) उपयुक्त आसन में बैठकर, इसमें सामान्य श्वास को धीरे-धीरे अन्दर लेते हैं। फिर उसको धीरे-धीरे बाहर निकालते हैं। उसके बाद 1-2 सामान्य श्वास लेकर स्तम्भ वृत्ति प्राणायाम की स्थिति में आते हैं, अर्थात् श्वास को ''जहाँ का तहाँ'' रोकते हैं। इस स्थिति में पूर्ण मंत्र का मानसिक उच्चारण करते हैं। मानसिक उच्चारण के साथ-साथ मंत्र के अर्थ की भावना का चिंतन भी चलता रहता है। मंत्र के अर्थ की अलग से उच्चारण करने की आवश्यकता नहीं होती है। ओ३म् और मंत्र का उच्चारण दो अलग-अलग चरणों में नहीं करते हैं।

(ख) इसी प्रकार पुनः सामान्य श्वास लेकर दोबारा स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनाते हैं और उसी मंत्र या आगामी मंत्र का मानसिक उच्चारण करते हैं। मानसिक उच्चारण के साथ-साथ अर्थ की भावना का चिंतन भी चलता रहता है।

(ग) सामान्य श्वास में 2-3 श्वास भी ले सकते हैं।

नोट :- उपरोक्त विधि से क्रमशः अन्य वैदिक मन्त्रों का जप, ईश्वरीय गुण, कर्म, स्वभाव व ईश्वर के उपकारों का चिन्तन और धन्यवाद किया जाता है।

(2) बाह्य कुम्भक द्वारा

प्रथम स्थिति :- इसमें उपयुक्त आसन में बैठकर

(क) लम्बा गहरा श्वास अन्दर लेते हैं (गति 20 किमी.)

(ख) फिर धीरे-धीरे श्वास बाहर निकालते हैं (श्वास गति 10 कि.मी.)

(ग) पूर्ण श्वास बाहर निकलने के बाद बाह्य कुम्भक लगाते हैं।

(घ) बाह्य कुम्भक की स्थिति में यथाशक्ति मंत्र जप/ईश्वर चिंतन मानसिक रूप से किया जाता है। ओ३म् और मंत्र का मानसिक उच्चारण एक साथ करते हैं।

(ङ) इसके बाद 2-3 सामान्य श्वास लेकर शरीर को साधारण अवस्था में लाते हैं।

उपरोक्त प्रक्रिया बार-बार दोहराते हुए मंत्र का जप/चिंतन बाह्य कुम्भक की स्थिति में चलता रहता है।

द्वितीय स्थिति :- उपयुक्त आसन में बैठकर -

(क) इसमें श्वास प्रश्वास की गति बहुत धीमी रखते हैं। (गति 5 कि.मी.)

(ख) लम्बा गहरा श्वास अन्दर नहीं लेते हैं।

(ग) थोड़ा सा श्वास अन्दर लेकर श्वास को धीरे-धीरे बाहर निकालते हैं।

(घ) पूर्ण श्वास बाहर निकलने के बाद बाह्य कुम्भक लगाते हैं।

(ङ) बाह्य कुम्भक की स्थिति में मंत्र जप/ईश्वर चिंतन मानसिक रूप से करते हैं। ओ३म् व मंत्र जप दो अलग-अलग चरणों में नहीं करते हैं।

(च) इसके बाद 2–3 सामान्य श्वास लेकर शरीर को साधारण अवस्था में लाते हैं।

उपरोक्त प्रक्रिया बार–बार दोहराते हुए मंत्र का जप/चिंतन बाह्य कुम्भक की स्थिति में चलता रहता है।

स्तम्भवृत्ति प्राणायाम द्वारा

(क) सर्वप्रथम 2–3 सामान्य श्वास लेते हैं।

(ख) इसके बाद श्वास को ''जहाँ का तहाँ'' कुछ समय के लिए यथाशक्ति रोक दिया जाता है और स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में ओ३म् और मंत्र का मानसिक उच्चारण एक साथ करते हैं। मन्त्र का भावार्थ अथवा इसकी भावना साथ–साथ चलती रहती है।

(ग) मंत्र उच्चारण की समाप्ति पर 2–3 सामान्य श्वास लेते हैं।

(घ) इसके बाद तुरन्त उसी मन्त्र का अथवा अगले मन्त्र का मानसिक उच्चारण भी स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में इसी प्रकार करते हैं। इस प्रकार ईश्वर चिंतन प्रक्रिया चलती रहती है।

(ङ) इसके बाद 1–2 सामान्य सूक्ष्म श्वास लेकर शरीर को साधारण अवस्था में लाते हैं।

नोट :-

(1) प्राण साधना की उपरोक्त तीनों अवस्थाओं का अभ्यास एक साथ न करें। प्रथम विधि का पर्याप्त अभ्यास के बाद दूसरी विधि का अभ्यास करें। तत्पश्चात् तीसरी विधि का।

(2) तीनों विधियों के पर्याप्त अभ्यास के बाद आप किसी भी विधि को – जिससे आपको ईश्वर भक्ति में अधिक मन लगता हो,

उसे अपना सकते हैं।

(3) प्रत्येक विधि का प्रभाव साधक की प्रकृति-सतोगुणी रजोगुणी या तमोगुणी के अनुसार कम या अधिक पड़ता है। पूर्ण लाभ के लिए अपनी प्रकृति को सतोगुणी बनायें।

(4) तृतीय विधि (स्तम्भवृत्ति प्राणायाम द्वारा) सबसे उत्तम है। इस विधि में स्तम्भवृत्ति प्राणायाम के काल को 1 से 2 मिनट व उससे अधिक भी बढ़ाया जा सकता है और इस काल में एक साथ कई मंत्रों, ईश्वर, प्रकृति, आत्मा सम्बन्धित विषयों का चिंतन करके ध्यान की अवधि को बढ़ाया जा सकता है।

जप व ध्यान में प्रयोग होने वाले मंत्र के अर्थ की भावना का मानसिक चिन्तन

अर्थ की भावना क्या है?

यह एक ऐसी मानसिक प्रक्रिया है जो हमें हृदय से ईश्वर के साथ जोड़ती है। यह मस्तिष्क में मन्त्र के अर्थ के साथ उत्पन्न होती है और हमारे ध्यान को/धारणा को किसी विशिष्ट वस्तु या विषय की ओर निर्देशित करती है। उस वस्तु के रूप, गुण व आकार को संकेत करती है। **इस प्रकार गुण सम्बन्धित विचारों की शृंखला प्रारम्भ होती है। इस क्रिया में जब हम ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव वाले शब्दों के अर्थों की भावना का चिंतन करते हैं तो ईश्वर का सत्य स्वरूप (ईश्वरीय प्रेरणायें व ज्ञान) हमारे अन्तःकरण में स्थापित हो जाता है।**

शब्द, उनके अर्थ व अर्थ की भावना वाले कुछ दृष्टान्त

	शब्द का अर्थ	शब्द/अर्थ की भावना
(1)	किताब=पुस्तक	पुस्तक का रूप/आकार/गुण

(2)	सर्वव्यापक- हर तरफ फैला हुआ	ईश्वर के गुण की ओर संकेत करता है जो सभी पदार्थों में विद्यमान है।
(3)	सर्वेश्वर- सबका स्वामी	ईश्वर के गुण की ओर संकेत करता है जो सृष्टि का स्वामी है।
(4)	सर्वशक्तिमान= सबसे अधिक बलवान, सर्व-शक्तिशाली	ईश्वर के सर्वशक्तिशाली गुण को दर्शाता है। ईश्वर अपने सभी कार्य स्वयं कर लेता है-सृष्टि बनाना, चलाना, प्रलय करना, जीवों को वेद ज्ञानदेना, कर्मफल प्रदान करना
(5)	सर्वरक्षक= वह जो सबकी रक्षा करता है	ईश्वर जल, वायु, अग्नि, प्रकाश, खाद्य पदार्थ व औषधियाँ आदि देकर हमारी रक्षा कर रहा है।
(6)	ओ३म्-ईश्वर-	ईश्वर के सभी गुण, कर्म, स्वभाव का प्रतीक

ध्यान व जप करने वाले साधकों की तीन श्रेणियाँ

जप व ध्यान करने वाले साधकों की तीन श्रेणियाँ/अवस्थायें होती हैं। ईश्वर, प्रकृति व आत्मा के बारे में हमारा जैसा ज्ञान होता है, उसके अनुसार ही हमारे विचार होते हैं। विचारों पर ही हमारा दृष्टिकोण और हमारी आध्यात्मिक उन्नति निर्भर करती है। आइये! जानते हैं हम किस श्रेणी में आते हैं।

(1) **सांसारिक :** इसके अन्तर्गत वे साधक आते हैं जो तोते की तरह मन्त्र या मन्त्रों का उच्चारण करते हैं। उनके लिए मंत्र वैदिक हैं या अवैदिक-इससे उनको कोई मतलब (Concern) नहीं है। इनको मंत्र का अर्थ / भावना से भी कोई विशेष लगाव नहीं होता है। उनको यम नियम के पालन में भी अधिक रुचि नहीं होती है। ये प्रेय मार्ग के अनुयायी होते हैं और अपने स्वार्थ की सिद्धि हेतु ईश्वर उपासना करते हैं।

ये राजसिक भोजन और आधुनिक सुविधायें अधिक पसन्द करते हैं। इनकी मान्यता है कि आज के युग में यम, नियम का पालन करना कठिन है। पुनर्जन्म की विचारधारा में भी इनकी विशेष रुचि नहीं होती है।

(2) **बौद्धिक :** इसके अन्तर्गत वे साधक आते हैं जिनको ईश्वर, प्रकृति व आत्मा का सामान्य ज्ञान होता है। मंत्रों के अर्थ का भी ज्ञान होता है। मंत्र उच्चारण भी ठीक करते हैं। स्वाध्याय करते हैं, सत्संग में भाग लेते हैं, तर्क शक्ति भी रखते हैं। लेकिन वे यम-नियम का पालन या तो आंशिक रूप से करते हैं अन्यथा नहीं करते हैं। इनका व्यवहार पूर्ण रूप से वेदानुकूल नहीं होता है। वे वेदानुकूल आचरण और श्रेय मार्ग पालन करने का दिखावा अधिक

करते हैं। अपने आपको उच्च श्रेणी का साधक मानते हैं। ये सात्विक और राजसिक–दोनों प्रकार का आहार पसन्द करते हैं।

(3) **आत्मिक :** इसके अन्तर्गत वे साधक आते हैं जिनको ईश्वर, प्रकृति व आत्मा के ज्ञान के साथ–साथ मन्त्रों के अर्थ व उनके भावार्थ का ज्ञान भी होता है। वे यम नियम और श्रेय मार्ग का पालन करने का प्रयत्न अधिक से अधिक करते हैं। दिन में 2 बार, सीमित मात्रा में, सात्विक भोजन करते हैं। ईश्वर अनुभूति की तीव्र इच्छा उनके हृदय में विद्यमान रहती है। वे नियम से प्रातः सायं ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना–उपासना करते हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, अहंकार पर सदैव संयम रखने का प्रयत्न करते हैं। अपना आचरण वेदानुसार करते हैं। ऐसे साधकों का वैदिक ज्ञान व अभ्यास सुरक्षित होकर मृत्यु के बाद उनकी आत्मा के साथ, संस्कार रूप, में जाता है।

भाग–6

जप, ध्यान व सन्ध्या की तैयारी

1. स्थान शान्त, एकान्त, स्वच्छ व हवादार होना चाहिए। नगरों में आजकल बहुमंजिली इमारतें बनती जा रही हैं जो कि शुद्ध वायु का सेवन करने में अड़चन पैदा करती हैं। ऐसी परिस्थिति में मौसम/ऋतु का ध्यान रखते हुए यदि मकान की छत पर जाकर या बालकनी में बैठकर जप, सन्ध्या व ध्यान किया जाय तो अधिक लाभ होता है।
2. शौच, मंजन, व्यायाम व स्नान आदि के बाद स्वच्छ व ऋतु के अनुसार ढीले वस्त्र, जप व ध्यान के समय पहनने चाहिएं।
3. शौच, मंजन हाथ मुँह धोने के बाद भी (स्नान से पहले)

जप, सन्ध्या, ध्यान किया जा सकता है।

4. जप, सन्ध्या व ध्यान में सुगमता से मन लगने के लिए प्रतिदिन श्वसन क्रियायें व हठयोग की क्रियायें व योगदर्शन में बताये गये आसन और प्रथम तीन प्राणायाम (देखें पृष्ठ 86-87 और 128-143) का अभ्यास करना अनिवार्य है। इसके साथ-साथ व्यवहार काल में यम, नियम व ईश्वर प्रणिधान का पालन करना भी परम आवश्यक है। ईश्वर प्रणिधान का मतलब है कि ईश्वर के प्रति अटूट श्रद्धा रखते हुए अपने सभी कार्य ईश्वर की उपस्थिति मानकर, उसकी व्यापकता का अनुभव करके करना, व्यवहार काल में उसकी आज्ञाओं का पालन करना।

5. उपासना काल में टेलीफोन या दरवाजे की घंटी, रसोई की आवाज व घर के अन्य शोर से बचना चाहिए।

6. प्रात:काल सूर्योदय से कम से कम 1-2 घंटे पहले उठ जाना चाहिए। जप, ध्यान, सन्ध्या की प्रक्रिया सूर्योदय से पहले पूर्ण करना अधिक लाभदायक है। यदि यह संभव न हो तो यह प्रक्रिया प्रात:काल सूर्योदय के बाद भी कर सकते हैं।

7. (a) सात्विक आहार का पालन करें व रात्रि के समय भोजन कम से कम करें।

(b) सायं काल में जप व ध्यान में बैठने के 3 घंटा पूर्व भोजन कर लें। साधना में बैठने के 1 घंटा पहले चाय या दूध (कम मात्रा में) ले सकते हैं।

(c) यदि खाना खाने के बाद जप या ध्यान के लिए बैठना हो तो

श्वास-प्रश्वास, कुम्भक व प्राणायाम क्रियाओं का प्रयोग न करें और वज्र आसन में बैठने का प्रयास करें।

8. सभी मंत्रों का जप प्रक्रिया अथवा ध्यान प्रक्रिया प्रारम्भ करते समय ईश्वर भक्ति का भजन (पृष्ठ-314) का गायन, संकल्पों को बोलने से पहले करें।

उपासना में बैठने से पूर्व चिन्तन :-

9.(a) सभी सम्बन्धी, मित्र आदि स्वतंत्र आत्मायें हैं और अपने-अपने कर्मफल के अनुसार इस संसार में उन्होंने जन्म लिया है। वास्तव में मेरे परिवार में या रिश्तेदारी में आई आत्माओं का मेरे साथ कोई सम्बन्ध नहीं है।

(b) प्रभु! आप सृष्टि के स्वामी हैं। सृष्टि में सभी धन आपका है, सम्पत्ति आपकी है, ज्ञान आपका है, बल आपका है, ऐश्वर्य आपका है।

(c) यह सब सुविधायें आपने मुझे त्यागपूर्वक भोग करने के लिए दी हैं। मोक्ष प्राप्त करने के लिए दी हैं। प्रभु मुझे प्रेरणा दीजिए मैं इनका उपयोग राग, द्वेष से रहित होकर करूँ।

10.(i) उपासना में में(xiii) जप करते समय/ध्यान करते समय मन को भावात्मक रूप से प्रसन्न रखें। बैठते समय शरीर, आत्मा और ईश्वर के वास्तविक स्वरूप का चिन्तन करें। अनुभव करें कि ईश्वर मेरे हृदय प्रदेश में विद्यमान है और मैं उनके समीप बैठा हुआ हूँ।

(ii) प्रारम्भ में नये साधक मन को श्वास-प्रश्वास पर टिकायें अर्थात् मन को इस कार्य में व्यस्त रखें।

(iii) ईश्वर के प्रति व्याप्य-व्यापक का सम्बन्ध बनायें। आत्मा

व्याप्य है और परमात्मा व्यापक है अर्थात् परमात्मा आत्मा में भी व्याप्त है।

(iv) मन को भावनात्मक रूप से प्रसन्न रखें।

11. जप व ध्यान मुद्रायें :

हाथों को जप व ध्यान के समय घुटनों या गोद में तीन प्रकार से रख सकते हैं-

(क) द्रोण मुद्रा में - हाथ की उंगलियों को परस्पर मिलायें और हथेली के बीच गड्ढा सा बनायें। हथेली कटोरा सा दिखाई देगी। अब दोनों हथेलियों को भूमि की ओर मोड़कर दोनों घुटनों के ऊपर रखें। कोहनियां कुछ मुड़ी हुई हों। हाथों को थोड़ा ढीला छोड़ दें।

(ख) ज्ञान मुद्रा में - अंगूठे व तर्जनी उंगली के अग्र भाग को मिलायें। बाकी तीन अंगुलियों को मिलाकर सीधा रखें। मुद्रा बनाकर हथेलियों को आकाश में ओर करते हुए घुटनों के ऊपर रखें।

(ग) पद्म मुद्रा में - प्रत्येक हाथ की पाँचों उंगलियों को आपस में मिलाये। दायें हाथ की हथेली को बायें हाथ की हथेली के ऊपर रखें। इसके पश्चात् दोनों हथेलियों को नाभि के नीचे गोद में रखें।

(12) जप, सन्ध्या व ध्यान के लिए सुखासन, सिद्धासन, पद्मासन या स्वस्तिकासन का प्रयोग करें।

नोट - जो साधक किसी कारणवश उपरोक्त आसन में नहीं बैठ सकते, वे कुर्सी / चौकी / दीवार आदि का सहारा लेकर भी प्राणायाम व ध्यान का अभ्यास कर सकते हैं। यदि यह भी संभव न हो तो उनको किसी प्रकार की चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है। ऐसे साधक शवासन में पतले गद्दे पर लेटकर शरीर को

पूर्ण रूप से ढीला छोड़ दें व शरीर को स्थिर कर लें। तत्पश्चात् प्राणायाम, जप व ध्यान का अभ्यास शुरू कर दें। कुछ ही दिनों के अभ्यास के बाद उनको भी प्राणायाम, जप व ध्यान में सफलता मिलती चली जायेगी।

जप व ध्यान में प्रयोग होने वाले संकल्प

संकल्प 1 : हे परमेश्वर! आप मेरे आत्मा में विद्यमान हैं। आप मुझे देख रहे हैं, सुन रहे हैं, जान रहे हैं। प्रभु मैं प्रतिज्ञा करता हूँ। उपासना काल में अपना मन आपसे हटाकर इधर-उधर नहीं ले जाऊँगा। प्रतिदिन प्रातः सायं हृदय से आपकी उपासना करूँगा।

संकल्प 2 : हे प्रभु! मैं अपने जीवन में सदैव यम-नियम का पालन करूँगा। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह के साथ साथ शुद्धि, सन्तोष, स्वाध्याय, तप व ईश्वर प्रणिधान को अपने जीवन का आवश्यक अंग बनाऊँगा। अपने सभी कार्य धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य का विचार करके करूँगा।

संकल्प 3 : प्रभो! मैं संकल्प लेता हूँ-मन से, वचन से, कर्म से-कभी भी किसी भी प्राणी को हानि नहीं पहुँचाऊँगा। अविद्या (अज्ञानता), अस्मिता (अहंकार), राग (आसक्ति, प्रेम), द्वेष (घृणा), अभिनिवेश (मृत्यु के भय से होने वाला कष्ट) को समाप्त करूँगा। काम पर, क्रोध पर, लोभ पर, मोह पर, राग पर, द्वेष पर, अहंकार पर संयम रखूँगा।

संकल्प 4 : हे प्रभु! मैं संकल्प लेता हूँ-नित्य प्रतिदिन समय का सदुपयोग करूँगा। अपना कर्तव्य ईमानदारी से निभाते हुए आध्यात्मिक उन्नति की ओर प्रेरित होऊँगा। अपनी सामर्थ्य के अनुसार समाज सेवा व दान करूँगा।

संकल्प 5 : हे प्रभो ! मेरे प्राणाधार ! मुझे विदित है कि मैं एक आत्मा हूँ। अपने कर्मों के फलानुसार और आपकी कृपा से मुझे यह मानव शरीर प्राप्त हुआ है। इस शरीर को चलाने के लिए आपने मुझे प्राण दिये हैं।

प्रभु मैं संकल्प लेता हूँ कि प्राण, अपान, समान, व्यान और उदान को बलिष्ठ बनाने के लिए मैं प्रतिदिन प्रातःकाल प्राणायाम करूँगा। अपनी सभी इन्द्रियों को पवित्र व बलिष्ठ बनाऊँगा।

संकल्प 6 : हे प्रभु ! मैं संकल्प लेता हूँ-

(1) सदा प्रसन्न रहूँगा। सुख-दुःख में सम रहूँगा। किसी भी परिस्थिति-अनुकूल अथवा प्रतिकूल- में अपना मानसिक सन्तुलन नहीं खोऊँगा।

(2) सदैव सकारात्मक विचार रखूँगा, नकारात्मक विचार-या तो आने नहीं दूंगा अथवा आने पर उनको तुरन्त रोकूंगा।

संकल्प 7 :

(1) हे प्रभु ! मैं अपने स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दूँगा।

(2) मैं सदा सात्त्विक आहार का ही सेवन करूंगा।

(3) सात्विक आहार भी भूख लगने पर और उचित मात्रा में ही लूँगा।

संकल्प विधि

(क) किसी भी उपयुक्त आसन में बैठकर आँखों को कोमलता से बन्द करें।

(ख) मन में अनुभूति करें कि प्रभु आप सर्वव्यापक हैं; सर्वान्तर्यामी हैं। मेरी आत्मा में विद्यमान हैं। मेरे चारों ओर सभी जड़ व चेतन पदार्थों में भी विद्यमान हैं। मैं आपके सान्निध्य में बैठा हुआ हूँ।

(i) अब एक धीमा लम्बा श्वास अन्दर लें।

(ii) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है-इस भावना के साथ) करें।

ओ..............................३..................................म्

(iii) तत्पश्चात् सूक्ष्म/सामान्य श्वास लेकर प्रथम संकल्प का उच्चारण करें।

संकल्प 1 : हे परमेश्वर! आप मेरे आत्मा में विद्यमान हैं। आप मुझे देख रहे हैं, सुन रहे हैं, जान रहे हैं। प्रभु मैं प्रतिज्ञा करता हूँ। उपासना काल में अपना मन आपसे हटाकर इधर-उधर नहीं ले जाऊँगा। प्रतिदिन प्रातः सायं हृदय से आपकी उपासना करूँगा।

उपरोक्त निर्देश (i), (ii), (iii) के अनुसार शेष 6 संकल्पों का उच्चारण करें।

नोट :- संकल्प में बहुत बड़ी प्रेरणा व शक्ति होती है। प्रतिदिन प्रातः-सायं संकल्प दोहराने व उसके अनुसार अपने आचरण में सुधार करने से हमारा अन्तःकरण पवित्र होता जाता है, हमारे ऊपर प्रभु की कृपा होती है। सभी शुभ कार्य सफल होते हैं। प्रभु भक्ति में मन लगता है।

इसके विपरीत जो साधक संकल्पों के अनुसार अपनी दिनचर्या में सुधार नहीं लाते, उनको जप व ध्यान में सफलता कितनी मिलेगी-इसका निर्णय आप स्वयं कर सकते हैं।

वैदिक मन्त्रों द्वारा भक्ति

ईश्वर भक्ति, जप व ध्यान के लिए अनेक शब्द, मन्त्र व वाक्यों के प्रयोग का वर्णन वेदों व अन्य शास्त्रों में मिलता है। वेदों में वर्णित सभी शब्द, मन्त्र आदि पूजनीय हैं, हमें ईश्वर से जुड़ने की विशेष प्रेरणा देते हैं। हमारी आध्यात्मिक उन्नति का श्रोत हैं।
यदि ये शब्द, मन्त्र और वाक्य वेदानुसार हों, उनके अनुसार व्यवहार काल में आचरण हो और उनका अभ्यास प्राणायाम/प्राण साधना के साथ किया जाय तो हमारे अन्तःकरण, शरीर व आत्मा पर इसका विशेष प्रभाव पड़ता है। प्राणायाम के साथ किया गया जप व ध्यान हमारे मन व शरीर पर विशेष प्रभाव डालता है। हमारे मन की चंचलता को धीरे-धीरे समाप्त करता है। सभी प्रकार के मानसिक तनाव, चिंता और नकारात्मक विचारों से हमारी रक्षा करता है। हमारे अन्दर सात्विक गुण विकसित होते हैं और हम उस अदृश्य शक्ति परमपिता परमेश्वर के साथ धीरे-धीरे जुड़ते जाते हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में वैदिक मन्त्रों का जप, ओ३म् जप, गायत्री मंत्र जप व ध्यान आदि प्राणायाम व प्राण साधना के साथ किया गया है। जप व ध्यान में प्रयोग हुई सभी निम्नलिखित विधियों का ज्ञान व अनुभूति मुझे ईश्वर की प्रेरणा से हुई हैं। अतः इनको समाज हित में लिख दिया गया है। सभी विधियाँ अत्यन्त प्रभावकारी हैं। इनका प्रभाव प्रत्येक साधक पर, अलग-अलग कम या अधिक हो सकता है। इसका कारण है साधक की सतोगुण, रजोगुण या तमोगुण प्रकृति, ईश्वर के प्रति श्रद्धा, वैदिक ज्ञान का स्तर और जप/ध्यान विधि का निरन्तर अभ्यास। सभी विधियों के पर्याप्त अभ्यास के बाद साधक स्वयं निर्णय ले सकता है कि उसको कौन सी विधि अपनानी है।

ओ३म् का जप, गायत्री मंत्र का जप अथवा किसी अन्य वैदिक मंत्र का जप (अर्थ या भावार्थ सहित) ही करना श्रेष्ठ है। धीमा, गहरा, लम्बा श्वास–प्रश्वास (प्राणायाम) के साथ जप करने से मन पर नियन्त्रण रहता है और आत्म विश्वास का विकास होता है। इससे शारीरिक एवं मानसिक रोगों में भी अत्यन्त लाभ होता है।

प्राणायाम के साथ ओ३म का जप करने से शारीरिक अस्थिरता और मन की चंचलता कम होती जाती है। मन निराकार परमात्मा में लगने लगता है। ध्यान की स्थिति धीरे–धीरे, अभ्यास करने पर, आने लगती है। वास्तव में यह दो मंत्र – ओ३म् एवं गायत्री मंत्र जप द्वारा ईश्वर का चिंतन और यम नियम का जीवन में दृढ़ता से पालन करना मनुष्य के लिए विशेष कल्याणकारी है।

ओ३म् जप
(श्वास-प्रश्वास द्वारा)

निर्देश :

1. (क) प्रात:काल स्नान आदि करके अथवा मुँह हाथ धोकर सुख आसन/सिद्ध आसन में बैठें।

(ख) सिर, गर्दन, कमर को सीधा रखें।

2. अंगूठों और तर्जनी उंगली से ज्ञान मुद्रा बनाकर घुटनों पर रखें।

3. धारणा को (मन को) आज्ञाचक्र/हृदय प्रदेश/ मंत्र उच्चारण पर अपनी मानसिक स्थिति के अनुसार रखें और आँखें कोमलता के साथ बन्द कर लें।

4. अब पुस्तक में दिये गये 7 संकल्पों का वाचिक उच्चारण करें। (पृष्ठ : 179-181 देखें)

चरण 1 :-

(क) अब धीरे-धीरे लम्बा, गहरा, श्वास नासिकाओं से अन्दर लें। (पूरक क्रिया)

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए एवं ईश्वर को सम्बोधित करते हुए ओ३म् का उच्चारण दीर्घ स्वर में करें। (रेचक)
ओ....................३ ....म् .... (धीमी लय के साथ)

नोट :- ओ३म का उच्चारण व श्वास बाहर निकलने की प्रक्रिया एक साथ पूर्ण अथवा समाप्त होनी चाहिए।

(ग) श्वास पूर्ण रूप से बाहर निकलने के बाद दो या तीन सामान्य श्वास लें।

चरण 2 :-

सामान्य श्वास के बाद निम्न वाचिक उच्चारण (अर्थ की भावना के साथ) करें।

प्रभो! आप सर्वरक्षक हैं। आप सबकी रक्षा कर रहे हैं। मेरी रक्षा भी कर रहे हैं। मैं हृदय से आपको धन्यवाद देता हूँ।

यह एक चक्र पूरा हुआ। **ऐसे 5 या 11 बार ओ३म् का जप करें।**

नोट :- (1) पहले चक्र के बाद उपरोक्त वाचिक उच्चारण नहीं करते हैं। ओ३म् शब्द के अर्थ की भावना (देखें पृष्ठ-173) का मानसिक चिंतन जप के साथ चलता रहता है।

(2) इसके बाद "ओ३म् महिमा" का गान करें। (पृष्ठ-189) इस प्रकार ओ३म् जप की प्रथम विधि सम्पन्न हुई।

ओ३म् जप-प्राण साधना द्वारा (स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में)

चरण 1 :-

ओ३म् जप विधि - 1 में दिये गये निर्देश 1, 2, 3, 4 का पालन करें।

चरण 2 :-

(क) एक या दो बार सूक्ष्म श्वास अन्दर लें (पूरक)

(ख) अब धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए एवं ईश्वर को सम्बोधित करते हुए, ओ३म् का उच्चारण भी धीमी गति व लम्बे स्वर से करें।

ओ .... ३ ....म्

नोट :- ओ३म् का उच्चारण व श्वास निकलने की क्रिया एक साथ समाप्त होनी चाहिए। ओ३म् का उच्चारण समाप्त होते समय धीरे-धीरे मुख बन्द होता चला जायेगा और अन्तिम अक्षर 'म' का उच्चारण नाक से तब तक करते रहें तब तक पूरा श्वास बाहर न चला जाये।

(ग) अब 5 या 7 सैकण्ड के लिए बाह्य कुम्भक लगायें। इसके बाद 2-3 सामान्य श्वास लें।

(घ) अब सामान्य श्वास लेने के बाद स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनायें (श्वास जहाँ का तहाँ रोकें) और निम्न मानसिक उच्चारण करें।

हे प्रभु! आप सर्वरक्षक हैं। सबकी रक्षा कर रहे हैं, मेरी रक्षा भी कर रहे हैं। मैं हृदय से आपको धन्यवाद देता हूँ।

उपरोक्त मानसिक उच्चारण के बाद 2–3 सामान्य श्वास लें। यह एक चक्र पूर्ण हुआ।

चरण 3 :

अब चरण 2 के अनुसार ओ३म् शब्द का जाप 5, 11, 21, 31 बार समय की उपलब्धता के अनुसार करें। पहले चक्र के बाद अर्थ के उच्चारण को नहीं करना है।

(2) स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में ओ३म् शब्द के अर्थ की भावना (सर्वरक्षक प्रभु) का मानसिक चिंतन करते रहें। (देखें पृष्ठ–173)

(3) इसके बाद ओ३म् महिमा का गायन करें। (पृष्ठ–182)

ओ३म् जप के साथ-साथ ईश्वर के -गुण, कर्म, स्वभाव का चिंतन (व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध दृढ़ करने के लिए)

ईश्वर के निम्न गुण, कर्म स्वभाव वाले शब्दों के अर्थों को कंठस्थ कर लें।

ईश्वर

1. सत् है–ईश्वर की सत्ता है, उसका अस्तित्व है। **2. चित्त है** – ईश्वर चेतन है, उसका सम्पूर्ण ज्ञान स्वाभाविक और पूर्ण है। **3. आनन्द स्वरूप है** – ईश्वरीय आनन्द पूर्ण तृप्ति देता है, शुद्ध है, दुःख रहित है। **4. सर्वव्यापक है**– कभी भी शरीर धारण नहीं करता है, स्थूल और सूक्ष्म–सभी पदार्थों में विद्यमान है। जीवात्मा में भी व्यापक है। **5. सर्वज्ञ है**–सब कुछ जानता है। सबसे बड़ा ज्ञानी है। **6. सर्वशक्तिमान है**–अपने कार्यों को अपनी सामर्थ्य से पूर्ण कर लेता है, अर्थात् संसार की उत्पत्ति करने, पालन करने, वेदों का ज्ञान देने, प्रलय करने, सभी जीवों को उनके कर्मों का फल देने में किसी

की सहायता नहीं लेता है। **7. सर्वाधार है** – सबको धारण करने वाला है। पृथ्वी, सूर्य आदि सब पदार्थों का आधार है। **8. सर्वेश्वर है**–सबका स्वामी है अर्थात् प्रकृति, सृष्टि, जीव तथा सब सत्य विद्याओं और शक्तियों का स्वामी है। **9. सर्वरक्षक है**–ईश्वर जल, वायु, प्रकाश, अग्नि, खाद्य पदार्थ व औषधियाँ आदि देकर पूर्ण सृष्टि की रक्षा करता है। **10. सर्वान्तर्यामी है**–सबके अन्दर विद्यमान रहकर सबका नियन्त्रण करता है। **11. सृष्टिकर्ता है**–इस सृष्टि की रचना करता है। **12. अजन्मा है** – ईश्वर का जीव के समान जन्म नहीं होता, वह सदा से है और सदा रहेगा। **13. अनादि है**–उसकी उत्पत्ति नहीं होती है। **14. अनन्त है** – उसकी कोई सीमा नहीं है। वह ब्रह्माण्ड से भी बड़ा है, **15. अनुपम है** – उसके समान व उससे उत्तम कोई पदार्थ नहीं है। **16. अमर है**–कभी भी मरता नहीं है। **17. अजर है**–कभी बूढ़ा नहीं होता अर्थात् उसकी शक्ति कभी कम नहीं होती है। **18. अभय है** – कभी भी किसी से नहीं डरता है। **19. न्यायकारी है**–सदा न्याय ही करता है, अन्याय नहीं। जीव को अच्छे बुरे कर्मों का फल सुख और दु:ख के रूप में देता है। **20. निराकार है :** इसका कोई आकार नहीं है। कोई आकृति, रूप रंग या मूर्ति नहीं है। **21. निर्विकार है**–विकारों (परिवर्तन) से रहित है, कभी भी सुखी या दु:खी नहीं होता है। **22. नित्य है** –सदा रहता है, न उसकी उत्पत्ति होती है न विनाश। **23. दयालु है** – उसने सभी को, बिना भेद भाव के, सुख के सब साधन प्रदान किये हैं और वह हमको दु:खों से बचाना चाहता है। **24. पवित्र है** – सदा शुद्ध ही रहता है, कभी अपवित्र नहीं होता है। अविद्या आदि पांच क्लेशों और शुभाशुभ

कर्मों से रहित है। **25. ओ३म्**- यह ईश्वर का निज और सर्वप्रिय नाम है। उसी की उपासना करने योग्य है।

नोट :- (1) सत्, चित्, निराकार, अजन्मा, अनादि, अजर, अमर, नित्य, पवित्र-यह गुण जीवात्मा में स्वयं सिद्ध हैं। (2) आनन्द, न्याय, दया, निर्विकारता, अभय-यह गुण जीवात्मा प्रयत्न करके प्राप्त कर सकता है, बढ़ा सकता है। (3) सर्वशक्तिमत्ता, अनन्तता, सर्वाधार, सर्वेश्वर, अनुपमता, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सृष्टिकर्ता-यह गुण जीवात्मा कभी भी प्राप्त नहीं कर सकता है।

(4) उपरोक्त गुणों का चिंतन दर्शाता है कि सृष्टि में जन्म लेने वाले सभी महापुरुष/योग पुरुष/ऋषि मुनि सम्माननीय व अनुकरणीय हैं। लेकिन क्या वे ईश्वर का अवतार ले सकते हैं या ईश्वर के स्थान पर अथवा ईश्वर के समान पूजनीय हो सकते हैं, इसका निर्णय आप स्वयं ले सकते हैं।

ओ३म् महिमा

ओ३म् है जीवन हमारा, ओ३म् प्राणाधार है।
ओ३म् है कर्त्ता विधाता, ओ३म् पालनहार है।।
ओ३म् है दु:ख का विनाशक, ओ३म् सर्वानन्द है।
ओ३म् है बल तेजधारी, ओ३म् करुणाकन्द है।।
ओ३म् सबका पूज्य है, हम ओ३म् का पूजन करें।
ओ३म् के ही ध्यान से, हम शुद्ध अपना मन करें।।
ओ३म् के गुरु-मंत्र जपने, से रहेगा शुद्ध मन।
बुद्धि दिन-प्रतिदिन बढ़ेगी, धर्म में होगी लगन।।
ओ३म् के जप से हमारा, ज्ञान बढ़ता जायेगा।
अन्त में प्रिय ओ३म् हमको, मोक्षपद पहुँचायेगा।।

ओ३म् जप के साथ ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव का चिंतन (सामान्य श्वास-प्रश्वास द्वारा)

प्रथम विधि (वाचिक उच्चारण)

नोट :- ओ३म् जप के साथ ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव वाले शब्दों का चिंतन परमात्मा के साथ व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध को दृढ़ करने के लिए किया जाता है।

चरण 1 :- ओ३म् जप विधि 1 में दिये गये निर्देश 1, 2, 3 व 4 का पालन करें।

चरण 2 :-

(क) एक धीमा गहरा श्वास अन्दर लें। फिर धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए एवं ईश्वर को सम्बोधित करते हुए ''ओ३म्'' का उच्चारण करें (रेचक क्रिया)

ओ .... ३................................म्

(ख) अब 1-2 सामान्य श्वास लेने के बाद ओ३म् शब्द के अर्थ का उच्चारण करें -

हे प्रभु! आप सर्वरक्षक हैं। सबकी रक्षा कर रहे हैं। मेरी भी रक्षा कर रहे हैं। मैं हृदय से आपको धन्यवाद देता हूँ।

चरण 3 :-

(क) धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है-इस भावना के साथ) करें।

ओ ....३..म्

(ग) तत्पश्चात् 2-3 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लेकर निम्नलिखित

उच्चारण करें–

हे प्रभो! आप सृष्टि की उत्पत्तिकर्ता हैं, पालक हैं, धारक हैं, प्रलयकर्ता हैं।

प्रभो! यह सृष्टि बनाने के लिए, मुझे मानव योनि देने के लिए, अच्छा स्वास्थ्य देने के लिए, दीर्घ आयु देने के लिए, जीवन यापन की पर्याप्त सुविधायें देने के लिए, मैं आपको हृदय से नमन करता हूँ। प्रणाम करता हूँ। धन्यवाद देता हूँ।

हे प्रभु! आप सर्वान्तर्यामी हैं। सबके अन्दर विद्यमान रहकर सबका नियन्त्रण कर रहे हैं। मैं हृदय से आपको नमन करता हूँ।

चरण - 4

ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव का अनुभव कराने वाले नामों का ओ३म् के साथ उच्चारण/चिंतन/मनन।

1.(क) धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे–धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३..............................म्

(ग) तत्पश्चात् 1–2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

स........र्वा.......न्त...........र्या.........................मी

2. (क) अब पुनः धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे–धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३..................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

स.................र्वा..........................धा................र

(स्वर को लम्बा करते हुये)

3.(क) अब पुनः धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३..................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

स.............र्वे.............श्.........व.......................र

4. (क) अब पुनः धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३..................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

सृ...........ष्टि..................................क...............र्ता

5. (क) अब पुनः धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३..................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को

लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

स...............................र्व...............................ज्ञ

6. (क) अब पुनः धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

अ......................ज..................न्..................मा

7.(क) अब पुनः धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

अ.................................ना..............................दि

8. (क) धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३................................म्

((ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

अ.........................न..................न्..............तः

9. (क) अब पुनः धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

अ.........................नु.................प.................म

10. (क) अब पुनः धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

अ..................................म..............................र

11. (क) अब पुनः धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

अ..................................ज...........................र

12. (क) अब पुनः धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

अ..................................भ.................................य

13. (क) अब पुनः धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३.................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

न्..............या............य...............का................री

14. (क) अब पुनः धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३.................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

नि..................रा........................का................र

15. (क) अब पुनः धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३.................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

नि..................र्वि.....................का................र

16. (क) अब पुनः धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३.................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

नि............................त्.................................य

17. (क) अब पुनः धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३.................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

द............................या.................................लु

18. (क) अब पुनः धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है - इस भावना के साथ) करें।

ओ .... ३.................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लें और स्वर को लम्बा करते हुए, ईश्वर के निम्न गुण का उच्चारण करें -

प............................वि.................................त्र

चरण 5 : इसके बाद ओ३म् की महिमा का गायन करें।

नोट :- (1) इस विधि में ओ३म् शब्द के वाचिक उच्चारण में धीमा, गहरा, लम्बा श्वास प्रश्वास का प्रयोग करने से अनेक

शारीरिक एवं मानसिक रोगों में लाभ मिलता है। ईश्वर के गुणों का उच्चारण करने से मन भटकता नहीं है। मन एकाग्र होता जाता है। उपासना में सफलता मिलती जाती है। स्वस्थ एवं दीर्घ जीवन प्राप्त होता है। **इसे हंस विद्या भी कहते हैं।**

(2) यह वाचिक उच्चारण 2–3 महीने तक करना चाहिए।

(3) तत्पश्चात् उपरोक्त अभ्यास 3 मास तक मानसिक रूप से करना चाहिए।

(4) छः महीने के उपरोक्त अभ्यास के बाद ओ३म् के मानसिक उच्चारण के साथ–साथ ईश्वर के सभी गुण, कर्म, स्वभाव दर्शाने वाले शब्द व उनके अर्थ का चिंतन स्वतः (अपने आप) चलता रहता है। मन लौकिक विषयों में नहीं भटकता है। इसको ध्यान की स्थिति भी कह सकते हैं।

ओ३म् जप व ईश्वर के किसी एक गुण, कर्म, स्वभाव का मानसिक उच्चारण (द्वितीय विधि)

(स्तम्भवृत्ति प्राणायाम द्वारा)

चरण 1 : ओ३म् जप विधि नं0 1 में दिये गये निर्देश 1, 2, 3, 4 का पालन करें।

चरण 2 :

(क) एक धीमा लम्बा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे–धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का मानसिक उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है – इस भावना के साथ करें।

ओ ....३......................................म्

(ग) इसके बाद 1 या 2 सामान्य श्वास लेकर स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनायें अर्थात् श्वास को ''जहाँ का तहाँ'' रोकें।

(घ) अब स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में मानसिक रूप से निम्न उच्चारण करें।

हे प्रभो! आप सृष्टि की उत्पत्तिकर्ता हैं, पालक हैं, धारक हैं, प्रलयकर्ता हैं।

प्रभो! यह सृष्टि बनाने के लिए, मुझे मानव योनि देने के लिए, अच्छा स्वास्थ्य देने के लिए, दीर्घ आयु देने के लिए, जीवन यापन की पर्याप्त सुविधायें देने के लिए, मैं आपको हृदय से नमन करता हूँ। प्रणाम करता हूँ। धन्यवाद देता हूँ।

चरण 3 :-

1 (क) एक धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है- इस भावना के साथ मानसिक रूप में करें।

ओ ....३......................................म्

(ग) तत्पश्चात् 1-2 सूक्ष्म व सामान्य श्वास लेकर स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनायें।

(घ) अब ईश्वर के निम्न एक गुण का मानसिक उच्चारण (दीर्घ स्वर में) करें। ईश्वर के गुण के अर्थ का चिंतन भी साथ-साथ चलता रहता है।

स............र्वा.............न्त..............र्या.............मी

नोट :- चरण 3 के अनुसार ईश्वर के अन्य गुण, कर्म,

स्वभाव वाले शब्दों का अर्थ सहित चिंतन अथवा अर्थ की भावना के साथ स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में करते हैं।

चरण 4 :-

इसके बाद ''ओ३म् की महिमा'' का गुणगान करें।

नोटः- (1) इस विधि में भी ओ३म् और ईश्वरीय गुण का मानसिक उच्चारण दो अलग-अलग चरणों में होता है।

(2) यदि समय का अभाव है तो ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव दर्शाने वाले शब्दों को चार श्रेणियों में बाँट सकते हैं -

(1) स से शुरू होने वाले गुण, कर्म, स्वभाव- सृष्टिकर्ता आदि

(2) अ से शुरू होने वाले गुण, कर्म, स्वभाव- अनादि आदि

(3) न से शुरू होने वाले गुण, कर्म, स्वभाव - न्यायकारी आदि

(4) द व प से शुरू होने वाले गुण, कर्म, स्वभाव - दयालु आदि

(3) अब आप प्रतिदिन/प्रातः सायं अपनी सुविधानुसार 1-2 श्रेणी में वर्णित शब्दों /ईश्वर के गुण/स्वभाव का चिंतन प्रातः कर सकते हैं और शेष दो श्रेणी के नामों का चिंतन सायंकाल कर सकते हैं।

तीसरी विधि (स्तम्भवृत्ति प्राणायाम द्वारा)

चरण 1 :- ओ३म् जप विधि प्रथम में दिये गये निर्देश 1, 2, 3, 4 का पालन करें।

चरण 2 (क) 1-2 सामान्य श्वास लेकर एकदम (direct) स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनायें अर्थात् श्वास को ''जहाँ

का तहाँ'' रोकें।

(ख) अब ओ३म् व ईश्वर के एक गुण का मानसिक उच्चारण लम्बे स्वर में एक साथ करें।

ओ ....३...........................म्

स............र्वा.............न्त...............र्या.............मी

(ग) मानसिक उच्चारण के साथ-साथ ईश्वरीय गुण वाले शब्द के अर्थ/भावार्थ/भावना का चिंतन भी चलता रहता है।

(घ) इसके बाद 2-3 सामान्य श्वास लेकर पुनः अगले गुण का चिंतन स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में करें।

(ङ) इस विधि में ओ३म् और ईश्वरीय गुण का अलग-अलग मानसिक उच्चारण/चिंतन नहीं करते हैं। एक साथ करते हैं।

(ङ) यदि साधक की स्तम्भवृत्ति प्राणायाम में अधिक समय तक ठहरने की योग्यता है तो स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की एक ही अवस्था में ईश्वर के 4-5 गुणों, स्वभावों का मानसिक चिंतन एक साथ ओ३म् शब्द के साथ किया जा सकता है।

(च) पर्याप्त अभ्यास के बाद ओ३म् (ईश्वर) के गुण के चिंतन के साथ-साथ गुण की भावना का चिंतन भी चलता रहता है।

चरण 3 :-

अब 2-3 सामान्य श्वास लेते हैं।

उपरोक्त विधि के अनुसार ईश्वर के अन्य गुण कर्म, स्वभाव वाले शब्दों का अर्थ अथवा अर्थ की भावना के साथ चिंतन किया जाता है।

चरण 4 :-

अब ओ३म् महिमा का गुणगान करें।

इसके बाद 1–2 वैदिक भजनों का वाचिक/मानसिक उच्चारण करें।

चौथी विधि (बाह्य कुम्भक की स्थिति में)

चरण 1 :

ओ३म् जप विधि नं0 1 में दिये गये निर्देश 1, 2, 3 व 4 का पालन करें।

चरण 2 :

(क) एक सूक्ष्म श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे–धीरे बाहर छोड़ते हुए (रेचक क्रिया द्वारा) ओ३म् का मानसिक उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है – इस भावना के साथ) करें।

ओ........................३.....................................म्

(ग) तत्पश्चात् बाह्य कुम्भक लगायें और बाह्य कुम्भक की स्थिति में ही ईश्वर के एक गुण का मानसिक चिंतन करें।

स..............र्वा................न्त.........र्या..............मी

(घ) इसके बाद 1–2 सामान्य श्वास लेते हैं।

नोट :– (1) इस विधि में ओ३म् का मानसिक उच्चारण श्वास छोड़ते हुए करते हैं और उच्चारण के समाप्त होने के तुरन्त बाद बाह्य कुम्भक की स्थिति में ईश्वर के एक गुण का मानसिक चिंतन करते हैं।

(2) ईश्वर के गुण के अर्थ की भावना की अनुभूति ईश्वरीय गुण के चिंतन के साथ–साथ स्वतः होती जाती है।

चरण 3 :- चरण-2 के अनुसार ईश्वर के अन्य गुण, कर्म, स्वभाव वाले शब्दों का मानसिक उच्चारण (समय की उपलब्धता के अनुसार) बाह्य कुम्भक की स्थिति में करते हैं।

चरण 4 : इसके बाद "ओ३म् की महिमा" व 1-2 वैदिक मन्त्रों का गायन करें।

पांचवी विधि (आन्तरिक कुम्भक की स्थिति में)

चरण 1:- ओ३म् जप विधि में दिये गये निर्देश 1, 2, 3 व 4 का पालन करें)

चरण 2:- (क) श्वास को धीरे-धीरे, ओ३म् के मानसिक उच्चारण के साथ अन्दर लें (पूरक क्रिया द्वारा)

(ख) अब श्वास को यथाशक्ति अन्दर रोककर ईश्वर के एक गुण का मानसिक चिंतन करें।

स................र्वा.............न्.........त........र्या..........मी

(ग) मानसिक चिंतन के साथ-साथ ईश्वरीय गुण वाले शब्द के अर्थ/भावार्थ का चिंतन भी चलता रहता है।

(घ) ईश्वरीय गुण के चिंतन के बाद, श्वास को बाहर की ओर छोड़ दें।

चरण 3 :- अब 2-3 सामान्य श्वास लेते हैं।

उपरोक्त विधि के अनुसार ईश्वर के अन्य गुणों का चिंतन (समय के उपलब्धता के अनुसार) किया जाता है।

चरण 4 :- इसके बाद ओ३म् की महिमा व 1-2 वैदिक भजनों का वाचिक/मानसिक उच्चारण करें।

नोट :-

(1) उपरोक्त पांचों विधियों के पर्याप्त अभ्यास और यम-नियम का पालन करने के बाद ईश्वरीय गुणों के भावार्थ/अर्थ की भावना साधक के अन्तःकरण में पूर्णतया स्थापित हो जाते हैं और उनका चिंतन उपासना काल व व्यवहार काल-दोनों में स्वतः चलता रहता है।

(2) हमारा ईश्वर के साथ व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध दृढ़ होता जाता है।

(3) व्यवहार काल में हमें ईश्वर की आज्ञाओं का पालन करने की प्रेरणा मिलती है।

गायत्री मन्त्र जप

गायत्री मंत्र को चार चरण में बाँटा गया है -

(1)	भूर्भवः स्वः	-	पहला चरण
(2)	तत सवितुर्वरेण्यम	-	दूसरा चरण
(3)	भर्गो देवस्य धीमहि	-	तीसरा चरण
(4)	धियो यो न प्रचोदयात्	-	चौथा चरण

गायत्री मंत्र का सरल अर्थ

प्रभु ! आप प्राण स्वरूप, दु:ख विनाशक, सुख स्वरूप, शान्ति स्वरूप, श्रेष्ठ, तपस्वी, पापनाशक और देव स्वरूप हैं। मैं आपके इस स्वरूप को अपने अन्त:करण (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार) में धारण करता हूँ। मेरी बुद्धि को सन्मार्ग पर प्रेरित करें। मुझे उत्तम गुण प्राप्त करने की प्रेरणा दें।

कविता भावार्थ :-

तूने हमें उत्पन्न किया, पालन कर रहा है तू।
तुझ से ही पाते प्राण हम, दुखियों के कष्ट हरता है तू।
तेरा महान तेज है, छाया हुआ सभी स्थान।
सृष्टि की वस्तु वस्तु में, तू हो रहा है विद्यमान।।
तेरा ही धरते ध्यान हम, मांगते तेरी दया।
ईश्वर हमारी बुद्धि को श्रेष्ठ मार्ग पर चला।।

गायत्री मन्त्र के अर्थ की भावना

प्रभु ! आप प्रकाश स्वरूप हैं, सर्वव्यापक हैं, हमारा पालन करते हैं, दु:ख दूर करते हैं। सुख प्रदान करते हैं। हमारी बुद्धि को सन्मार्ग पर ले जाने के लिए प्रेरित करें।

गायत्री मंत्र जप विधि नं0 - 1

(श्वास-प्रश्वास द्वारा)

ओ३म् जप विधि में दिये गये निर्देश 1, 2, 3 व 4 का पालन करें

(1) धीरे-धीरे लम्बा गहरा श्वास नासिका से अन्दर लें। (पूरक)

(2) श्वास छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण ईश्वर सर्वरक्षक है, इस भावना के साथ करें।

ओ.......................... ३ .... म्

(दीर्घ स्वर एवं धीमी लय में)

मंत्र का उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिए।

(3) तत्पश्चात् एक दो सामान्य श्वास लें अब पहले चरण का उच्चारण करें। -

भूर्भुवः स्वः (श्वास को धीरे-धीरे बाहर निकालते/छोड़ते हुये)

(4) अब पुनः दो सामान्य श्वास लें और

(5) श्वास छोड़ते हुए दूसरे चरण का उच्चारण करें।

तत सवितुर्वरेण्यम् (श्वास को धीरे-धीरे बाहर निकालते / छोड़ते हुये)

(6) उपरोक्त विधि (4), (5) के अनुसार ही तीसरे एवं चौथे चरण का उच्चारण करें।

तत्पश्चात् पूर्ण गायत्री मंत्र का जप निम्न प्रकार से करें -

7 (क) एक लम्बा गहरा श्वास नासिका अन्दर से लें (पूरक)

(ख) अब श्वास छोड़ते हुए (दीर्घ स्वर एवं धीमी लय में) ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है-इस भावना के साथ) करें।

ओ..............................३..............................म्

मंत्र का उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिए।

(ग) अब 2-3 सामान्य श्वास लें।

(घ) तत्पश्चात् पूर्ण गायत्री मंत्र का उच्चारण करें।

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्।।

मंत्र का उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिए।

(ङ) यह एक चक्र पूर्ण हुआ। अब 7 (क), (ख), (ग), (घ) के अनुसार ऐसे 5, 7 या 11 चक्र करें।

(8) अब गायत्री मंत्र का सरल अर्थ बोलें। कविता अर्थ या उसका भावार्थ बोलें - यह गायत्री जप के बाद केवल अन्त में बोलना है।

नोट - (1) पहले तीन मास में वाचिक उच्चारण करें।
(2) उसके बाद 2-3 मास मानसिक उच्चारण (अर्थ की भावना के साथ) स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में करें। इसमें अर्थ की भावना का चिंतन साथ-साथ स्वतः ही होता जाता है। अलग से उच्चारण नहीं करते हैं।

गायत्री मंत्र जप
(विधि नं0 2)

(1) ओ३म् जप विधि में दिय0 गये निर्देश 1 से 4 का पालन करें।

(2) (क) एक सूक्ष्म/सामान्य श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण करें।
ओ .... ३ ....म्
(ईश्वर सर्वरक्षक है-इस भावना के साथ)
नोट :- ओ३म् का उच्चारण व श्वास बाहर निकालने की प्रक्रिया (ओ३म् के उच्चारण में) एक साथ पूर्ण होती है।

(ग) ओ३म् का उच्चारण पूर्ण होने पर 5-7 से0 के लिए बाह्य कुम्भक लगायें।

(घ) अब 2-3 सामान्य श्वास लेकर शेष गायत्री मंत्र का धीमी गति से उच्चारण करें।

(ङ) यह एक चक्र पूरा हुआ। ऐसे 5, 7, 11 बार जप अपनी क्षमता व समय के अनुसार करें।
नोट :- गायत्री मंत्र का उच्चारण बाह्य कुम्भक की स्थिति में भी किया जा सकता है। अर्थात् ओ३म् के उच्चारण समाप्त होने के तुरन्त बाद बाह्य कुम्भक की स्थिति में पूर्ण गायत्री मंत्र का मानसिक उच्चारण करते हैं (देखे - ओ३म् विधि नं0 4, पृष्ठ-201)

(3) (क) अब सामान्य श्वास लेने के बाद मंत्र के निम्न भावार्थ का उच्चारण करें-
प्रभु आप प्राण स्वरूप, दु:खविनाशक, सुख स्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी व देव स्वरूप हैं।

मैं आपके इस स्वरूप को अपने अन्तःकरण (मन, बुद्धि, चित्त, अंहकार) में धारण करता हूँ। आप मेरी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करें।

(4) उपरोक्त उच्चारण समाप्त होने पर 3 सामान्य श्वास लेकर मंत्र का कविता भावार्थ बोल सकते हैं-

तूने हमें उत्पन्न किया............

(5) अब निम्न संकल्प लें

प्रभु! मैं आर्ष ग्रन्थों का स्वाध्याय करूँगा। अपनी बुद्धि को सन्मार्ग पर लगाऊँगा।

गायत्री मन्त्र के साथ ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव का चिंतन (ईश्वर के साथ व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध दृढ़ करने के लिए)

विधि नं0 3

(स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में)

चरण 1: ओ३म् जप विधि में दिये गये निर्देश 1 से 4 का अनुसरण करें।

चरण 2 : (क) विधि नं0 2 के अनुसार तीन बार गायत्री मन्त्र का वाचिक उच्चारण करें।

(ख) अब 2-3 सामान्य श्वास लेने के बाद ईश्वर के निम्न गुणों का वाचिक उच्चारण (स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में) करें।

प्रभु! आप सृष्टिकर्ता है, सर्वशक्तिमान हैं, सर्वव्यापाक हैं, सर्वेश्वर है, सर्वाधार हैं।

चरण 3: (क) पुनः विधि नं0 2 के अनुसार 3 बार गायत्री मन्त्र का वाचिक उच्चारण करें।

(ख) अब 2-3 सामान्य श्वास लेने के बाद ईश्वर के निम्न गुणों का उच्चारण (स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में) करें।

प्रभो! आप अमर हैं, अजर हैं, अभय हैं, अनुपम हैं, अनन्त हैं, अनादि हैं, अजन्मा हैं।

चरण 4 : अब उपरोक्त क, ख के अनुसार (गायत्री मन्त्र के वाचिक उच्चारण के बाद) प्रभु के निम्न गुणों का उच्चारण करें

प्रभो! आप न्यायकारी है, निराकार हैं, निर्विकार हैं, नित्य हैं।

चरण 5 : अब पुनः चरण 3 के अनुसार गायत्री मन्त्र के वाचिक उच्चारण के बाद प्रभु के शेष गुणों का उच्चारण करें।

प्रभो! आप दयालु हैं, पवित्र हैं, मोक्षदाता हैं।

चरण 6: अब पुनः 2-3 सामान्य श्वास लें और गायत्री मंत्र के कविता भावार्थ का उच्चारण करें।

1. तूने हमें उत्पन्न किया, पालन कर रहा है तू।
   तुझसे ही पाते प्राण हम, दुखियों के कष्ट हरता है तू।।
2. तेरा महान तेज है, छाया हुआ सभी स्थान।
   सृष्टि की वस्तु वस्तु में, तू हो रहा है विद्यमान।।
3. तेरा ही धरते ध्यान हम, मांगते तेरी दया।
   ईश्वर हमारी बुद्धि को, श्रेष्ठ मार्ग पर चला।।
4. दाता हमारी बुद्धि को, वेद मार्ग पर चला।

चरण 7 : अब गायत्री मन्त्र के अर्थ की भावना (पृष्ठ-204) का उच्चारण करें।

नोट :- (1) पहले तीन मास में वाचिक उच्चारण करें।

(2) उसके बाद 2-3 मास मानसिक उच्चारण (अर्थ की भावना के साथ) करें।

इसमें अर्थ की भावना का चिंतन/उच्चारण साथ-साथ स्वतः ही होता जाता है। अलग से उच्चारण नहीं करते हैं।

प्रभु के धारणीय गुणों का चिंतन व जप

''ओ३म्'' के जप के अतिरिक्त प्रभु के अनेक गुण ग्रहण करने योग्य हैं। कुछ का वर्णन (भावार्थ सहित) यहाँ पर दिया जा रहा है। इनके पहले ओ३म् शब्द लगाकर (प्राण साधना का उपयोग करते हुए) उच्चारण/ चिंतन किया जाता है। इन गुणों/नामों के जप के द्वारा भी ईश्वर की उपासना की जाती है। इस जप के प्रभाव से भी मन की चंचलता समाप्त होती जाती है। ईश्वर भक्ति में मन लगता है। ईश्वर के यह गुण, यम नियम का पालन करने पर, साधक में भी धीरे-धीरे आने शुरू हो जाते हैं। आत्मा पाप कर्म का त्याग करने लगती है। प्रसन्न होती है। ईश्वरीय आनन्द का अनुभव करती है।

सर्वप्रथम 7 संकल्पों का उच्चारण करें (पृष्ठ-179-181)। इसके बाद किसी 1 गुण का या अधिक गुणों का उच्चारण समय की उपलब्धता के अनुसार करें।

(1) ओ३म् आनन्दमः

भावार्थः प्रभु आप आनन्द स्वरूप हैं। सभी को उनके कर्मों के अनुसार आनन्द दे रहे हैं। मुझे भी आनन्द दीजिए।

(2) ओ३म् न्यायकारी :

भावार्थः हे प्रभु! आप न्यायकारी हैं। सभी जीवों को उनके कर्मों के अनुसार फल दे रहे हैं। मुझे भी न्यायकारी बनाइये।

(3) ओ३म् दयालु :

भावार्थः हे प्रभु! आप दयालु हैं। आप सभी जीवात्माओं को, बिना किसी भेद भाव के, प्रकाश, जल, वायु, अग्नि आदि का सुख प्रदान कर रहे हैं। मुझे भी प्रेरणा दीजिए, मैं भी परोपकारी बनूँ।

(4) ओ३म् पवित्रम् :

भावार्थः हे प्रभु! आप पवित्र हैं। पाप कर्म से परे हैं। अविद्या से परे हैं। मुझे भी प्रेरणा दीजिए, मैं भी श्रेय मार्ग पर चलूँ। पाप कर्म से दूर रहूँ।

नोट :- सर्वशक्तिमान, निराकार प्रभु की स्तुति, प्रार्थना, उपासना, प्राणायाम/प्राण साधना के साथ करने से शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य अच्छा होता जाता है। मन में सकारात्मक विचार उत्पन्न होते हैं, आत्मा प्रसन्न होती है, आध्यात्मिक उन्नति होती है।

"ओ३म् न्यायकारी जप"

(ईश्वर के एक धारणीय गुण के जप की विधि)

चरण 1 : ओ३म् जप विधि में दिये गये निर्देश 1 से 4 का अनुसरण करें।

चरण 2 : (क) एक या दो सूक्ष्म श्वास अन्दर लें (पूरक)

(ख) धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए धीमी गति से ओ३म् का वाचिक उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है-इस भावना के साथ करें-

ओ...............................३...................................म्

ओ३म् का उच्चारण व श्वास बाहर निकलने की क्रिया एक साथ समाप्त होनी चाहिए।

(ग) अब 5-10 सैकण्ड के लिए बाह्य कुम्भक लगायें और उसके बाद 2-3 सामान्य श्वास लें।

(घ) अब "न्यायकारी" शब्द का वाचिक उच्चारण धीमी व दीर्घ गति से करें।

न्............या.............य...............का............री ।

(ङ) अब 2-3 सामान्य श्वास लेकर बोलें -

हे प्रभु! आप न्यायकारी हैं। सभी जीवों को उनके कर्मों के अनुसार फल दे रहे हैं। मुझे भी न्यायकारी बनाइये।

चरण 3: अब चरण 2 (क)(ख)(ग)(घ) और (ङ) के अनुसार "ओ३म् न्यायकारी" मन्त्र का जप 5, 11, 21, 31 बार - समय की उपलब्धता के अनुसार करें। प्रत्येक जप के साथ अर्थ की भावना का चिंतन स्वत: होता रहता है।

नोट : (1) 2 से 3 मास के अभ्यास के बाद ओ३म् का मानसिक

उच्चारण श्वास-प्रश्वास के साथ करते हैं। इसके बाद तुरन्त बाह्य कुम्भक की स्थिति में ईश्वर के गुण का मानसिक उच्चारण करते हैं।

(3) 3 माह के अभ्यास के बाद ओ३म् और ईश्वर के एक गुण का चिंतन (भावार्थ सहित) एक साथ स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में 5,11 या 21 बार करते हैं।

नोटः अब भावार्थ का उच्चारण अलग से नहीं करना है। बल्कि अर्थ की भावना को मन में उच्चारण के समय बनाये रखना है।

इस प्रकार ''ओ३म् न्यायकारी'' मंत्र से ईश्वर की उपासना पूर्ण हुई। साधक इसी प्रकार ईश्वर के अन्य धारणीय गुणों का चिंतन/उच्चारण (वाचिक, उपांशु, मानसिक) करके जप कर सकते हैं। ईश्वरीय आनन्द की अनुभूति प्राप्त कर सकते हैं।

प्राणायाम मंत्र

ओ३म् भूः ओ३म् भुवः, ओ३म् स्वः, ओ३म् महाः ओ३म् जनः ओ३म् तपः ओ३म् सत्यम्

प्राणायाम मन्त्र जप विधि

(श्वास-प्रश्वास के साथ-बिना भावार्थ के)

चरण 1 :- (क) ओ३म् जप विधि में दिये गये निर्देश 1, 2, 3, 4 का पालन करें।

चरण 2 :- प्राणायाम मंत्र का वाचिक उच्चारण

(क) धीरे-धीरे लम्बा, गहरा श्वास अन्दर लें (पूरक)

(ख) धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए मंत्र के पहले चरण का वाचिक

उच्चारण धीमी और दीर्घ गति से करें -

(i) ओ .... ३................म...........भूः

(ग) मन्त्र का उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिए।

श्वास पूर्ण बाहर निकलने के पश्चात् (अर्थात् रेचक के बाद) तीन सामान्य श्वास लें।

(घ) मन/धारणा को किसे एक चयन किये गये स्थान पर बनाये रखें या मन को मन्त्र उच्चारण पर ही केन्द्रित करें।

(ङ) इस प्रकार प्राणायाम मन्त्र के पहले चरण का वाचिक उच्चारण, चिन्तन पूर्ण हुआ।

इसी प्रकार उपरोक्त विधि से प्राणायाम मन्त्र के अन्यछः चरणों का वाचिक उच्चारण, चिंतन, अभ्यास करें।

(ii) ओ .... ३................म...........भुवः

(ii) ओ .... ३................म...........स्वः

(iii) ओ .... ३................म...........महः

(iv) ओ .... ३................म...........जनः

(v) ओ .... ३................म...........तपः

(vi) ओ .... ३................म...........सत्यम्

इसके पश्चात् दीर्घ श्वास लेकर पूर्ण मन्त्र का वाचिक उच्चारण एक साथ उपरोक्त विधि से पुनः करें।

ओ३म् भूः ओ३म् भुवः ओ३म् स्वः ओ३म् महाः ओ३म् जनः, ओ३म् तपः ओ३म् सत्यम्।

नोट :-(1) प्रथम 2 मास में केवल प्राणायाम मन्त्र का वाचिक उच्चारण करें।

प्राणायाम मन्त्र के सात पदों का उच्चारण व चिन्तन

भावार्थ के साथ (स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में)

चरण-1 (i) पहला पदः- ओ३म् भूः

(क) एक सूक्ष्म/सामान्य श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे बाहर छोड़ते हुए ओ३म् के साथ प्राणायाम मंत्र के प्रथम पद का वाचिक उच्चारण धीमी गति से करें :

ओ .... ३ ....म्............ भूः

(ग) मंत्र का उच्चारण पूर्ण होने पर 5 सैकण्ड का बाह्य कुम्भक लगायें।

(घ) अब 2-3 सामान्य श्वास लेने के बाद स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनायें और इस स्थिति में प्राणायाम मंत्र (प्रथम पद के भावार्थ) का वाचिक उच्चारण करें।

हे प्रभु! आप भूः स्वरूप हैं। प्राण दाता हैं। सभी के प्राणों की अन्न से, जल से, अग्नि से, वायु से रक्षा करते हैं। हे प्रभु! मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं भी यथाशक्ति दूसरों के प्राणों की रक्षा कर सकूँ। शाकाहारी बनूँ। अहिंसा के मार्ग पर चलूँ।

(ङ) भावार्थ का उच्चारण पूर्ण होने पर 2-3 सामान्य श्वास लें (शरीर को सामान्य करने के लिए) और फिर एक सामान्य श्वास लेकर अगले पद का उच्चारण करें।

चरण 1- (ii) दूसरा पद : ओ३म् भुवः

(अ) अब चरण (1) क, ख, ग के अनुसार दूसरे पद का उच्चारण करें:

ओ .... ३ ....म्........... भुवः

(ब) अब 2-3 सामान्य श्वास लेने के बाद स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनायें और इस स्थिति में प्राणायाम मंत्र के दूसरे पद के भावार्थ का वाचिक उच्चारण करें।

हे प्रभु! आप भुवः स्वरूप हैं। दुःख विनाशक हैं। सभी के दुःखों को न्यायपूर्वक दूर करते हैं।

प्रभु! मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं भी यथाशक्ति दूसरों के सांसारिक दुःखों को दूर कर सकूं। परोपकार कर सकूँ।

नोट :- (1) इसी प्रकार प्राणायाम मंत्र के अन्य पदों का उच्चारण करें-उनके भावार्थ का भी उच्चारण करें।

अन्य पांच पदों के सरल भावार्थ इस प्रकार हैं :-

चरण 1 (iii) तीसरा पद : ओ३म् स्वः

ओ .... ३ ....म्............. स्वः

भावार्थ -

हे प्रभु! आप स्वः स्वरूप हैं। सुखदायक हैं। सभी प्राणियों को उनके कर्मानुसार सुख प्रदान करते हैं।

प्रभु! मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं भी यथाशक्ति दूसरों को सुख प्रदान कर सकूँ। निर्मल, गरीब, दुःखी, रोगी की सहायता कर सकूँ।

चरण 1 (iv) चौथा पद - ओ३म् महाः

भावार्थ :-हे प्रभु! आप महाः स्वरूप हैं। महान हैं, श्रेष्ठ हैं।

प्रभु! मुझे प्रेरणा दीजिए। मैं भी शुभ कार्य करूँ। निष्काम कार्य करूँ। महानता के गुण अपने अन्दर लाऊँ।

चरण 1 (v) : पाँचवां पद - ओ३म् जनः

ओ .... ३ ....म् ....जनः

भावार्थ :- हे प्रभु! आप जनः स्वरूप हैं। सृष्टि के उत्पत्तिकर्ता हैं, पालक हैं, धारक हैं, प्रलयकर्ता हैं। मैं आपको बारम्बार हृदय से नमन करता हूँ।

चरण 1 (vi) : छठा पद – ओ३म् तपः

ओ .... ३ ....म् ....तपः

भावार्थ :- हे प्रभु! आप तपः स्वरूप हैं। सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र, पृथ्वी आदि-सभी आपके अनुसार नियम से कार्य कर रहे हैं।

प्रभु! मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं भी अपना जीवन तपस्वी बना सकूँ। नियमित जीवन निर्वाह कर सकूँ।

चरण 1 (vii) : सातवाँ पद – ओ३म् सत्यम्

ओ .... ३ ....म् ....सत्यम्।

भावार्थ :- हे प्रभु! आप सत्य स्वरूप हैं।

प्रभु! मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं सत्य का पालन करूँ। छल, कपट और झूठ का त्याग करूँ।

नोट :- उपरोक्त सातों पदों का वाचिक उच्चारण 1 से 2 मास तक करें ताकि सभी पदों के अर्थ कंठस्थ हो जायें।

चरण 2 : अब 2-3 सामान्य श्वास लें और पूर्ण प्राणायाम मंत्र का वाचिक उच्चारण धीमी गति से (दीर्घ स्वर में) निम्न प्रकार करें-

(i) प्रत्येक पद को धीमी गति से दीर्घ स्वर में बोलना है।

(ii) भावार्थ का उच्चारण नहीं करना है। प्रत्येक पद के उच्चारण के साथ अर्थ की भावना बनाये रखना है।

(iii) प्रत्येक पद के उच्चारण के बाद दो सामान्य श्वास लेने हैं-पहला श्वास शरीर को सामान्य करने के लिए और दूसरा श्वास अगले पद का उच्चारण प्रारम्भ करने के लिए।

(iv) प्रत्येक पद के उच्चारण के बाद बाह्य कुम्भक का प्रयोग नहीं करना है।

(v) इस प्रकार प्राणायाम मंत्र के सातों पदों का उच्चारण करते हैं।

यह प्राणायाम मंत्र जप का एक चक्र पूरा हुआ। एक चक्र में 3 मिनट का समय लगता है।

नोट : 1. अब चरण 2 के अनुसार पूर्ण प्राणायाम मंत्र का जप 5, 7, 11, 21 बार समय की उपलब्धतानुसार करें। इस प्रकार प्राणायाम मंत्र से ईश्वर उपासना पूर्ण हुई।

नोट :- 2. प्राणायाम मंत्र के सातों पदों के अर्थ कंठस्थ होने के बाद पूर्ण व पर्याप्त वाचिक उच्चारण के अभ्यास के बाद, प्राणायाम मंत्र का जप (अर्थ की भावना के साथ) मानसिक रूप से (स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में) प्रतिदिन प्रातः सायं किया जाता है। यह लाभदायक भी अधिक है।

वेद मन्त्रों द्वारा ईश्वर भक्ति (प्रार्थना) क्यों करें?

वेद ईश्वर की वाणी है, ईश्वर द्वारा दिया गया ज्ञान है। ईश्वर ने इसको 4 ऋषियों के हृदय में (योग व ध्यान के अवस्था से) मानव कल्याण के लिए दिया। वेद किसी पुरुष के द्वारा बनाये हुए नहीं हैं। हमारे ऋषियों ने गहन तप व साधना के बाद वैदिक मन्त्रों का साक्षात्कार किया अर्थात् वैदिक ज्ञान की अनुभूति की और यह ऋषि-शिष्य परम्परा के द्वारा मौखिक रूप से, पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ता रहा। कई शताब्दियों के बाद इसे लिखित रूप दिया गया। ये मन्त्र अपने अन्दर दिव्य और आध्यात्मिक ऊर्जा समेटे हुए सम्पूर्ण संसार के कल्याण के लिए हैं। निम्न कारणों से, वेद मंत्रों द्वारा ही ईश्वर की उपासना करना उत्तम है।

1. ईश्वर के उपकारों का धन्यवाद देने के लिए।
2. आत्म शुद्धि एवं मन इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखने के लिए।
3. बुरे संस्कार नष्ट करने के लिए और अच्छे संस्कार बढ़ाने के लिए।
4. अपनी जीवन दिनचर्या व आचरण को उत्तम बनाने के लिए और ईश्वर के साथ जुड़ने के लिए।
5. शुभ व निष्काम कर्म करने की प्रेरणा लेने के लिए।
6. प्राप्त करने योग्य ईश्वरीय गुणों की प्राप्ति के लिए।
7. ईश्वरीय आनन्द की प्राप्ति के लिए।
8. सभी प्राणियों से प्रेम की भावना बनाये रखने के लिए।
9. वेद की आज्ञाओं का पालन करने के लिए।
10. जीवन का लक्ष्य ''मोक्ष'' पाने के लिए।

वैदिक विधि से ईश्वर भक्ति-प्रार्थना न करने से हानियाँ

1. कृतज्ञता का अभाव होना। वेद की आज्ञाओं की अवहेलना (अनादर) करना।
2. यम-नियम का पालन न कर पाना।
3. अपने व्यवहार से अन्यों को दु:खी करना।
4. इन्द्रियों और मन का दास होना।
5. वैदिक व धार्मिक विषयों को पूर्ण रूप से समझने में असमर्थ होना।
6. पण्डितों व ज्योतिषियों द्वारा शोषण का शिकार होना।
7. विपरीत परिस्थितियों और दु:ख को सहन न कर पाना।
8. काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार पर संयम न रख पाना।
9. उपासना से प्राप्त होने वाले ईश्वरीय गुण-विशेष ज्ञान, बल, आनन्द, निर्भयता, स्वतन्त्रता आदि से वंचित रहना।
10. पंच महायज्ञ का अनुष्ठान न कर पाना।

वैदिक प्रार्थना करने के लाभ

1. सुबुद्धि की प्राप्ति अर्थात् बुद्धि का विकास।
2. आत्म शुद्धि एवं इन्द्रियों व मन पर नियन्त्रण होना।

3. ईश्वर, प्रकृति व आत्मा का सही ज्ञान होना।
4. अच्छे संस्कारों की जाग्रति एवं निष्काम कर्म करने की प्रेरणा मिलना।
5. पाप कर्म से दूर रहने की प्रकृति बनना।
6. ईश्वर के प्रति श्रद्धा, विश्वास का बढ़ना व ईश्वर आनन्द की प्राप्ति।
7. धन दान एवं समय दान करने की प्रवृति का विकास।
8. वेदानुसार शुभ आचरण करने की प्रेरणा मिलना।
9. जीवन में सदैव, विपरीत परिस्थितियों में भी, प्रसन्नता बनाये रहना।
10. ईश्वर की सत्ता के साथ जुड़ना और उसकी उपासना में मन लगना।
11. समाज में प्रचलित अनेक भ्रान्तियों और अन्धविश्वास से मुक्ति।
12. मूर्ति पूजा से अगली कक्षा (निराकार–उपासना) में प्रवेश।

वैदिक मन्त्रों द्वारा ईश्वर भक्ति

समाज में प्रार्थना–उपासना के स्वरूप को लेकर आजकल विभिन्न प्रकार की अवैदिक विचार, धारायें प्रचलित हैं। लेकिन ऋषि पतंजलि ने, सांसारिक मनुष्यों के लिए, योग दर्शन में उपासना व ध्यान के लिए केवल अष्टांग योग का मार्ग ही दर्शाया है। निराकार परमात्मा की भक्ति ही बतायी है जिसके लिए केवल ओ३म् (परमात्मा का निज नाम), गायत्री मंत्र और वैदिक मंत्रों के जप व चिंतन को ही स्थान दिया है–किसी अन्य देवता, भगवान या मंत्र को नहीं। वेद व उपनिषदों में भी केवल व केवल निराकार ईश्वर की उपासना का ही वर्णन है **और निराकार ईश्वर की**

उपासना करना ईश्वर का आदेश है।

जो साधक, युवक, युवतियाँ वैदिक सन्ध्या के मंत्र नहीं जानते अथवा उनका उच्चारण नहीं कर सकते, वे कुछ सरल मंत्रों का नियमित रूप से प्रातः सायं ध्यानपूर्वक पाठ करने से ईश्वर प्रार्थना-उपासना कर सकते हैं, ईश्वर की अनुभूति कर सकते हैं। **इसमें कोई संदेह नहीं है।**

ईश्वर भक्ति - प्रार्थना-उपासना की तैयारी

1. प्रार्थना-उपासना में प्रयोग होने वाले सभी मंत्रों को दिये गये क्रम में याद कर लें। यदि कोई मंत्र याद करने में (प्रारम्भ में) कठिनाई आती है तो उसको छोड़ सकते हैं। धीरे-धीरे बाद में वे मंत्र भी याद कर लें।
2. सुख आसन/सिद्ध आसन में बैठकर प्रारम्भ में 2-3 महीने तक केवल मंत्रों का उच्चारण करें।
3. मंत्र कंठस्थ व उनके उच्चारण के पर्याप्त अभ्यास के बाद मंत्रों के भावार्थ याद कर लें। यदि कोई भावार्थ कठिन है, तो प्रारम्भ में छोड़ सकते हैं।
4. इसके बाद प्रत्येक मंत्र उच्चारण के बाद उसके भावार्थ का भी उच्चारण करें।

सरल वेद मन्त्रों द्वारा ईश्वर भक्ति

ईश्वर भक्ति-प्रार्थना उपासना में प्रयोग होने वाले 13 मंत्र - इनको कंठस्थ कर लें।

मन्त्र सं. 1.- गायत्री महामन्त्र

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।।

सरल पाठ

ओ३म् भूर् भुवः स्वः। तत् सवितुर वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।।

सरल भावार्थ

प्रभु! आप प्राण स्वरूप हैं, आप दु:ख विनाशक हैं, आप सुखदायक हैं, आप श्रेष्ठ हैं, आप तेजस्वी हैं, आप पापनाशक हैं, आप देवस्वरूप हैं।

प्रभु! मैं आपके इस स्वरूप को अपने अन्त:करण (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार) में धारण करता हूँ। आप मेरी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करें।

कविता भावार्थ

तूने हमें उत्पन्न किया, पालन कर रहा है तू।
तुझसे ही पाते प्राण हम, दु:खियों के कष्ट हरता है तू।।
तेरा महान तेज है, छाया हुआ सभी स्थान।
सृष्टि की वस्तु वस्तु में, तू हो रहा है विद्यमान।।
तेरा ही धरते ध्यान हम, मांगते तेरी दया।
ईश्वर हमारी बुद्धि को, श्रेष्ठ मार्ग पर चला।।
दाता हमारी बुद्धि को, वेद मार्ग पर चला।

नोट :- मन में संकल्प लें कि उपरोक्त भावार्थ के अनुसार मैं आर्ष ग्रन्थों का स्वाध्याय करके अपनी बुद्धि को सन्मार्ग पर लगाऊंगा।

मन्त्र सं0 – 2. प्राणायाम मन्त्रः

ओ३म् भूः ओ३म् भुवः ओ३म् स्वः ओ३म् महाः ओ३म् जनः ओ३म् तपः ओ३म् सत्यम्।

सरल भावार्थ

पहला चरण : ओ३म् भूः

हे प्रभु! आप भूः स्वरूप हैं। प्राणदाता हैं। सभी के प्राणों की अन्न, जल, अग्नि, वायु द्वारा रक्षा करते हैं।

मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं भी यथाशक्ति दूसरों के प्राणों की रक्षा कर सकूं। अहिंसा के मार्ग पर चलूँ।

दूसरा चरण : ओ३म् भुवः

हे प्रभु! आप भुवः स्वरूप हैं, दुःख विनाशक हैं। सभी के दुःखों को न्यायपूर्वक दूर करते हैं।

मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं भी यथाशक्ति दूसरों के सांसारिक दुःखों को दूर कर सकूँ।

तीसरा चरण : ओ३म् स्वः

हे सर्वरक्षक प्रभु! आप स्वः स्वरूप हैं। सुखदायक हैं। सभी प्राणियों को उनके कर्मानुसार सुख प्रदान करते हैं।

मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं भी यथाशक्ति दूसरों को सुख प्रदान कर सकूँ। निर्बल, गरीब, दुःखी व रोगियों की सहायता कर सकूँ।

चौथा चरण : ओ३म् महाः

हे प्रभु! आप महाः स्वरूप हैं। महान हैं, श्रेष्ठ हैं।

मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं भी सुकर्म व निष्काम कार्य करूँ। महानता के गुण अपने अन्दर ला सकूँ।

पाँचवाँ चरण : ओ३म् जनः

हे प्रभु! आप जनः स्वरूप हैं। सृष्टि के उत्पत्ति कर्ता हैं, पालक

हैं, धारक हैं, प्रलयकर्ता हैं। मैं आपको बार-बार नमन करता हूँ।

छटा चरण : ओ३म् तपः

हे प्रभु! आप तपः स्वरूप हैं। सृष्टि में सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र, पृथ्वी आदि सभी आपके अनुसार नियम से कार्य कर रहे हैं।

मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं भी अपना जीवन तपस्वी बनाऊँ। नियमित जीवन निर्वाह करूँ।

सातवाँ चरण : ओ३म् सत्यम्

हे प्रभु! आप सत्य स्वरूप हैं। सत्यवादी हैं।

मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं भी सत्य के रास्ते पर चलूँ।

मन्त्र सं. - 3. ओ३म् असतो मा सद्गमय

ओ३म् असतो मा सद्गमयो

ओ३म् तमसो मा ज्योतिर्गमय

ओ३म् मृर्त्यो मा अमृत गमय

पहला चरण : ओ३म् असतो मा सद्गमय

भावार्थ - हे प्रभु! मुझे असत्य से सत्य की ओर ले जाइये।

मुझे प्रेरणा दीजिए। मैं सत्य का पालन करूँ। छल, कपट व असत्य का त्याग करूँ।

दूसरा चरण : ओ३म् तमसो मा ज्योतिर्गमय

भावार्थ - हे प्रभु! मुझे अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाइये। अविद्या से विद्या की ओर ले जाइये। अज्ञान से ज्ञान की ओर प्रेरित कीजिए।

मुझे प्रेरणा दीजिए। मैं वेद और आर्ष ग्रन्थों का चिन्तन करूँ। अष्टांग योग का पालन करूँ। उसके अनुसार अपना जीवन चलाऊँ।

तीसरा चरण : ओ३म् मृर्त्योमा अमृतंगमय

भावार्थ - हे प्रभु! मुझे मृत्यु रूपी दु:ख से छुड़ाकर मोक्ष रूपी आनन्द प्राप्त कराइये।

मुझे प्रेरणा दीजिए। मैं सुकर्म व निष्काम कार्य करूँ। योगाभ्यासी बनूँ। आवागमन के चक्र से मुक्ति पाऊँ। आपका सच्चा पुत्र कहलाने का अधिकारी बनूँ।

मन्त्र सं. - 4 त्वमेव माता च पिता त्वमेव

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देव देव।। (दो बार)
त्वमेव सर्वं मम देव देव।।

सरल भावार्थ

हे ईश्वर! तुम ही मेरी माता हो, तुम ही पिता हो, तुम ही बन्धु हो, तुम ही सखा हो, तुम ही गुरु हो, तुम ही आचार्य हो, तुम ही उपास्य हो।

प्रभु! मुझे प्रेरणा दीजिए। मेरा यह सम्बन्ध आपके साथ सदा बना रहे। मैं अपने सारे कार्य आपकी उपस्थिति मान कर करूँ। मेरा मार्गदर्शन कीजिए।

मन्त्र सं. - 5. विश्वानि देव मन्त्र

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद् भद्रं तन्न आ सुव।। (यजु0 30/3)

सरल पाठ

ओ३म् विश्वानि देव सवि तरदुरि तानि परासुव।
यद भद्रं तन्न आसुव।।

सरल भावार्थ

हे संसार के उत्पादक देव, आप हमारे सभी दुर्गुणों को दूर कीजिए और जो कल्याणकारी गुण हों, उन्हें हमें दीजिए।

कविता भावार्थ

तू सर्वेश सकल सुखदाता, शुद्ध स्वरूप विधाता है।
उसके कष्ट नष्ट हो जाते, शरण तेरी जो आता है।।
सारे दुर्गुण दुर्व्यसनों से, हमको नाथ बचा लीजे।
मङ्गलमय गुण–कर्म–पदारथ, प्रेम–सिन्धु हमको दीजे।।

GIST (IN ENGLISH)

Aum, O God Almighty, the Creator of the Universe and Dispenser of all happiness! We pray Thee to dispel (wipe off) all our bad habits, bad deeds and calamities and bestow upon us what is blessed, good, auspicious and beneficial.

मन्त्र सं. - 6. ओ३म् अग्ने नय सुपथा मन्त्र

ओ३म् अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वेयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भुयिष्ठान्ते नमऽउक्तिं विद्येम।।

(यजु0 40/16)

सरल पाठ

ओ३म् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।

युयो ध्यस्म् ज्जूहु राण मेनो भुयिष् ठान्ते नमः उक्तिं विधेम।।

सरल भावार्थ

ओ३म्! हे अग्निदेव (ईश्वर) आप स्वप्रकाश स्वरूप एवं ज्ञानमय हैं। आप हमें ज्ञान मय, धर्ममय, सच्चे रास्ते पर ले चलिए ताकि हमसे कुटिलता युक्त पाप रूप कर्म दूर हों।

इस कारण हम आपकी बहुत प्रकार की स्तुति और प्रशंसा सदा करते रहें और सर्वदा आनन्द में रहें।

कविता भावार्थ

तू है स्वयं प्रकाश रूप प्रभु, सबका सिरजन हार तू ही।
रसना निशि-दिन रटें तुम्हीं को, मन में वसता सदा तू ही।।
कुटिल पाप से हमें बचाते, रहना हरदम दया निधान।
अपने भक्तजनों को भगवन्! दीजे यही विशद वरदान।।

GIST (IN ENGLISH)

Aum, O God! You are the self-illuminating, You are Agnidev, the personification of knowledge. Kindly lead us on the path followed by the wise. We pray to Thee to keep us off from crooked and vicitous ways so that we may meditate upon You and enjoy prominent bliss.

मन्त्र सं. - 7

ओ३म् यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेध्याऽग्ने मेधाविन कुरु स्वाहा।।

(यजु0 32/14)

सरल पाठ

ओ३म् यां मेधां देवगणाः पितर श्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविन कुरु स्वाहा।।

सरल भावार्थ

ओ३म्! हे प्रकाशस्वरूप, ज्ञानस्वरूप प्रभो! जिस मेधा बुद्धि को विद्वान और पितर लोग प्राप्त करते हैं और उपयोग करते हैं, वही धारणावती बुद्धि मुझे प्रदान कर मेधावी बनाइये। यह मेरी आपसे हार्दिक प्रार्थना है।

GIST (IN ENGLISH)

Aum. I call upon you, O Agni, Grant me that superior discrimnating intellect which enlightened ancestors possessed. This is my heartfelt prayer to Thee.

मन्त्र सं. - 8

ओ३म् तच्चक्षुर्देवहितं पुरुस्ताच्छुक्रमुच्चरत्।
पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत्
श्रृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः
स्याम शरदः शत भूयश्च शरदः शतात्।।

(यजु0 36/24)

सरल पाठ

ओ३म् तच् चक्षुर देव हितं, पुरूस्ताच्छक्रमु उच्चरत्।
पश्येम शरदः शतं, जीवेम शरदः शतं, श्रृणुयाम शरदः शतं, अदीना श्याम शरदः शतं भू यश्च शरदः शतात्।।

सरल भावार्थ

ओ३म! हे प्रभो! आप सब के मार्ग दर्शक हैं, विद्वानों के परम हितकारक हैं, आप तेजोमय शक्ति हैं, हम सौ वर्ष तक आपको ज्ञान चक्षु से देखते रहें, सौ वर्ष तक आपके उपदेश को सुनते रहें और दूसरों को सुनाते रहें, सौ वर्ष तक, इससे भी अधिक समय तक आपकी कृपा से हम स्वस्थ जीवन बितायें और जन्म जन्मान्तर तक आपका यश देखते-सुनाते रहें।

Aum, O Thou, the seer of all, benefactor of righteous and learned, and the maker of the Universe, you were present ever before the creation of the universe. You are Aspicious and Supreme. May we see a hundred autumns (years). May we live, hear and speak a hundred autumns and even more than hundred years without being (burden) dependents on any one.

मन्त्र सं. - 9. मंगल कामना

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चित दुःख भागभवेत।।

भावार्थ :- हे ईश्वर! सभी सुखी हों, कोई दुःखी न हो। सब निरोग रहें, सब एक दूसरे को प्रेम भाव से देखें। सबका हर प्रकार से कल्याण हो।

मन्त्र सं. - 10. समर्पणम्

हे ईश्वर दयानिधे! भवत्कृपयाऽनेन जपोपासनादिकर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्न।।

सरल पाठ

हे ईश्वर दया निधे! भवत् कृपया अनेन जप् उपासनादि कर्मणा धर्म अर्थ काम मोक्षाणां सद्यः सिद्धिर भवेन्नः।।

सरल भावार्थ

हे करुणामय प्रभो! आपकी असीम कृपा से इस जप और उपासनादि कार्य से हमें धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति हो।

Aum, O, the compassionate God, the infinite Fount of mercy, by the grace whatever good deeds done by us and this performance of our devotional exercise of the recitation of the texts of the holy vedas. Thy adoration and other acts, we wholeheartably offer to Thee, may we with your blessings, attain Dharma, Artha, Kama and Moksha.

मन्त्र सं. - 11. नमस्कार मन्त्र

ओ३म् नमः शम्भवाय च मयो भवाय च नमः
शंकराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च
शिवतराय च।। (यजु0 16/41)

सरल पाठ

ओ३म् नमः शम भवाय च मयो भवाय च
नमः शङ्कराय च मयस्कराय च

नमः शिवाय च शिवतराय च।।

सरल भावार्थ

हे ईश्वर! आपको मेरा नमस्कार। आप सुख दाता हैं। हमारा कल्याण करने वाले हैं। मंगल स्वरूप हैं आनन्द स्वरूप हैं। आपको हमारा बारम्बार नमस्कार हो।

Aum, We bow to Thee and thank the compassionate God, the Giver of happiness, the blissful God, the Auspicious God. We pray and thank the Giver of perfect peace and tranquility.

12. संगठन-सूक्त (हिन्दी में)

(i) हे प्रभो! तुम शक्तिशाली, हो बनाते सृष्टि को।
वेद सब गाते तुम्हे हैं, कीजिए धन-वृष्टि को।।

(ii) प्रेम से मिलकर चलो, बोलो सभी ज्ञानी बनो।
पूर्वजों की भांति तुम, कर्तव्य के मानी बनो।।

(iii) हों विचार समान सबके, चित्त मन सब एक हों।
ज्ञान देता हूँ बराबर, भोग्य पा सब नेक हों।।

(iv) हों सभी के दिल तथा, संकल्प अविरोधी सदा।
मन भरे हों प्रेम से, जिससे बढ़े सुख सम्पदा।।

13. शान्ति पाठ

ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षँ शान्ति पृथिवी
शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्ति।
सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।।

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

सरल पाठ

ओ३म् द्यौः शान्तिर अन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिर्
आपः शान्तिर ओषधयः शान्तिः। वनस्पतयः
शान्तिर विश्वे देवाः शान्तिर् ब्रह्म शान्ति
सर्व शान्तिः शान्ति रेव शान्तिः सा मा
शान्ति रेधि।
ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

सरल भावार्थ

हे प्रभो! आपकी कृपा से द्युलोक, अन्तरिक्ष लोक, पृथ्वी लोक, जल, औषधियाँ, वनस्पतियाँ, यह विशाल विश्व, संसार का सब कुछ, उसका कोना-कोना शान्ति का ही स्वर अलापे।

प्रभो! मुझे सब जगह से शान्ति ही शान्ति प्राप्त हो जो निरन्तर बढ़ती ही रहे।

वैदिक मन्त्रों द्वारा प्रार्थना-उपासना विधि (समय 20 मि0)

1. सुख आसन या सिद्ध आसन में बैठकर सर्वप्रथम तीन बार दीर्घ श्वसन प्रक्रिया करें (भस्त्रिका प्राणायाम)
2. अब धीमा गहरा लम्बा श्वास अन्दर लें। फिर धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए ओ३म् का 3 बार वाचिक उच्चारण करें (रेचक क्रिया) ओ३म् का उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ समाप्त होना चाहिए।

पहला उच्चारण - ईश्वर को सम्बोधित करते हुए

दूसरा उच्चारण - व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध बनाते हुए
तीसरा उच्चारण - ईश्वर को समर्पण करते हुए

व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध क्या है

जिस वस्तु में कोई दूसरी वस्तु प्रवेश कर जाये तो पहली वाली वस्तु को व्याप्य वस्तु कहते हैं और दूसरी वस्तु जो पहली वस्तु में प्रवेश करती है उसे व्यापक वस्तु कहते हैं।

आत्मा और परमात्मा के सम्बन्ध में आत्मा व्याप्य है और परमात्मा व्यापक है। परमात्मा सर्वाधिक सूक्ष्म होने से आत्मा में प्रवेश कर जाता है और उसमें व्याप्त होता है। इसीलिए परमात्मा को सर्वव्यापक कहा गया है।

व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध का अर्थ है कि मन में भावना बनायें कि ईश्वर मेरी आत्मा के अन्दर व बाहर सब जगह विद्यमान है। ईश्वर ही सृष्टि को चला रहा है।

3. इसके बाद 2-3 सामान्य श्वास लें।

4.(क) अब पुनः एक गहरा श्वास लेकर गायत्री मंत्र का उच्चारण करें। मंत्र उच्चारण और श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिए।

(ख) अब गायत्री मंत्र के भावार्थ गद्य अथवा कविता अर्थ अथवा दोनों का उच्चारण करें।

5. इसी प्रकार **शेष मंत्रों का उच्चारण भी श्वास-श्वास क्रिया के साथ करते हैं।** (मंत्र जप विधि के लिए देखें-पृष्ठ 151-164)

मन्त्रोच्चारण का क्रम

प्राणायाम मन्त्र, ओ३म् असतो मा सद्गमय, त्वमेव माता च पिता त्वमेव, ओ३म् विश्वानि देव मन्त्र, ओ३म् अग्ने न्ये सुपथा मंत्र, ओ३म् या मेद्या देवगणा मन्त्र, ओ३म् तच्चक्षुर्देवहितं मन्त्र, मंगल कामना मन्त्र, समर्पण मन्त्र, नमस्कार मन्त्र, संगठन सूक्त, शान्ति पाठ।

नोट :-

1. प्रथम दो मास में केवल मंत्रों का वाचिक उच्चारण करें।
2. मंत्र संख्या 9, 10, 11, 13 को उच्चारण के लिए तीसरे मास में सम्मिलित करें। यदि ये मंत्र याद करने में कठिनाई हो तो इन्हें कुछ समय के लिए छोड़ भी सकते हैं।
3. चौथे मास से मंत्र उच्चारण के बाद उसके भावार्थ भी बोलें।

4. 6 मास के बाद मंत्र उच्चारण उपांशु/मानसिक विधि से करें।
5. एक वर्ष के अभ्यास के बाद, मन्त्र के मानसिक जप के साथ-साथ, मन्त्र के अर्थ की भावना का चिंतन स्वतः चलता रहता है। इस अवस्था में मन्त्र के अर्थ का अलग से उच्चारण की आवश्यकता नहीं होती है।

भाग-7

ध्यान का वैदिक स्वरूप

ध्यान एक आध्यात्मिक व मानसिक अभ्यास है। यह फल व पुण्य की इच्छा के बिना कर्तव्य समझकर किया जाता है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें साधक परमात्मा के गुण, कर्म, स्वभाव का निरन्तर चिन्तन, मनन करता है। ईश्वर के धारणीय गुणों को अपने जीवन में धारण करके आध्यात्मिक उन्नति करता है, उसकी आज्ञाओं का पालन करता है। अपने आचरण को श्रेष्ठ बनाता है। ईश्वर से वार्तालाप करता है, ईश्वर के उपकारों का धन्यवाद देना भी ध्यान के अन्तर्गत आता है।

अन्तःकरण शुद्ध होने पर, ध्यान में आत्मा को अपने स्वरूप का आभास होने लगता है और आत्मा को परमात्मा की अनुभूति होना भी आरम्भ हो जाती है। उसको ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव

का अनुभव होना शुरू हो जाता है। आत्मा ईश्वर के कुछ गुण, जैसे न्यायकारी, परोपकारी, दयालु, पवित्रता आदि को अपने आचरण में बढ़ाना शुरू कर देता है, अपना आत्मनिरीक्षण करना प्रारम्भ कर देता है ताकि इस पर कोई कुसंस्कार या अशुभ कर्म अंकित न हो पाये।

जब, आप प्राणायाम व प्राण साधना के साथ ध्यान में सर्वशक्तिमान प्रभु से सम्पर्क करते हैं, उसके उपकारों का धन्यवाद करते हैं और उसकी उपस्थिति को अपने हृदय में अनुभव करते हैं, उस समय प्रभु की शक्ति आपके शरीर में सक्रिय होने लगती है। आपका शरीर स्वस्थ, बलिष्ठ, पवित्र व दीर्घ आयु को प्राप्त करता है। मन की चंचलता समाप्त होती जाती है।

ध्यान से पहले किये गये प्राणायाम व श्वसन क्रियायें प्राण साधना को बलिष्ठ करती हैं। हमारे नकारात्मक विचारों को समाप्त करते हैं। मन की लौकिक वृत्तियों को रोकने में सहायक होती हैं। ध्यान–तनाव और चिंता, जोकि अनेक रोगों की जननी है, को भी कम करता है, अवसाद (Depression) को दूर करने में सहायक होता है।

आजकल अधिकतर मनुष्य जप व ध्यान का लाभ इसलिए नहीं ले पाते क्योंकि उन्होंने ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव और ईश्वरीय कर्मफल व्यवस्था को भली–भांति नहीं समझा है। जो ईश्वरीय गुण, प्रयत्न करके पा सकते हैं; उनको आत्मसात् नहीं किया है। उनको प्राण साधना, जप व ध्यान की ठीक–ठीक जानकारी नहीं होती है। इसके अतिरिक्त मन्त्र जप को अर्थ की भावना के

साथ करने की उच्च वैदिक विधि का भी पूर्ण ज्ञान उनको नहीं होता है। उनके अनुसार जप व ध्यान केवल एक साधारण क्रिया है जिसमें सर्वशक्तिमान ईश्वर के अतिरिक्त भी किसी अन्य देवता या महापुरुष का चिन्तन, मनन करके आध्यात्मिक लाभ लिया जा सकता है। उनके अनुसार इसका शरीर के स्वास्थ्य और पवित्रता से सम्बन्ध केवल नाममात्र है। यह विचार, यह धारणा पूर्णतया वेद में मान्य नहीं है। वास्तव में यम-नियम का पालन व प्राण साधना के साथ किया गया निराकार ईश्वर का जप व ध्यान हमें अविद्या, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि दोषों से मुक्ति दिलाता है। हमें अपनी व ईश्वर की अनुभूति कराता है। मानसिक व शारीरिक रोगों के निवारण हेतु सहायता प्रदान करने के साथ-साथ दीर्घ आयु भी प्राप्त कराता है।

ईश्वर निराकार है, सर्वव्यापक है, सर्वान्तर्यामी है। वह सभी जड़ व चेतन पदार्थों के अन्दर-बाहर विद्यमान है। वह हमारे हृदय में/आत्मा में रहकर हमारी सभी क्रियाओं का साक्षी रहता है। लेकिन उसकी अनुभूति स्वस्थ शरीर, शुद्ध वैदिक ज्ञान, शुद्ध उपासना, पवित्र अन्तःकरण व योग दर्शन में बताये गये उपायों से ही हो सकती है।

ईश्वर के मुख्य गुण, कर्म, स्वभाव-सर्वशक्तिमान, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अमर, अजर, नित्य, सृष्टिकर्ता, पवित्र-किसी महापुरुष में गठित हो ही नहीं सकते। इसलिए उसका स्वरूप साकार वाला नहीं है। वह इन्द्रियों का विषय नहीं है। वह अवतार

नहीं लेता है। वह समय काल से परे है, सृष्टि के बनने से पहले भी था, आज भी है और भविष्य में भी रहेगा। अतः ईश्वर को साकार रूप में मानकर उपासना व ध्यान करना अज्ञानता है। अपने आप को धोखा देना है। इसका कोई लाभ भी नहीं है।

यह धारणा पूर्णतः निराधार है कि ईश्वर को साकार (अवतार रूप में) मानकर ध्यान किया जा सकता है। चारों वेदों में, योग दर्शन में और उपनिषदों में ईश्वर को निराकार ही माना है–साकार नहीं। भारत में जन्म लेने वाले सभी ऋषि, महापुरुष, योगी व सन्त केवल निराकार ईश्वर की ही उपासना करते थे। अतः साकार रूप में ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना करना, ध्यान करना वेद की आज्ञाओं के विरुद्ध है।

ध्यान काल में चित्त की वृत्तियों (मन के लौकिक कार्य, व्यापार, संकल्प, विकल्प आदि) का निरोध एक विशेष विधि के साथ किया जाता है ताकि उपासना काल में परमात्मा के गुण, कर्म, स्वभाव व उसके उपकारों का चिन्तन निरन्तर व शाश्वत बना रहे। प्रातः सायं ध्यान के निरन्तर अभ्यास और यम, नियम के जीवन में पालन से मन व इन्द्रियों पर हमारा नियन्त्रण बनता चला जाता है। साधक धीरे–धीरे आत्म दर्शन और ईश्वर अनुभूति का अधिकारी बन जाता है।

सात्त्विक सीमित मात्रा में भोजन, नियमित यौगिक क्रियायें, प्राणायाम व प्राण साधना के साथ ध्यान की उचित विधि व निरन्तर अभ्यास से न केवल हम ईश्वर की अनुभूति करते हैं, बल्कि ध्यानावस्था में अमूल्य ईश्वरीय ज्ञान की प्राप्ति होती है। हमारा शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य भी ठीक रहता है। हम रोग मुक्त

होते चले जाते हैं। ध्यान मन की उलझन, भटकाव व असमंजस को दूर करने के साथ साथ हमें आत्मिक शक्ति व आनन्द की अनुभूति कराता है। हमारे जीवन को सरल बनाता है। हमारे नकारात्मक विचारों व विकारों को दूर करने में हमारी सहायता करता है। हमारे अन्दर सुविचार पैदा करता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, राग, द्वेष, अहंकार से मुक्ति दिलाने में सहायता करता है। एकाग्रता से कार्य करने की शक्ति प्रदान करता है। हमारी स्मृति और सुबुद्धि को बढ़ाता है।

जप व ध्यान का अभ्यास और सात्विक भोजन करने की आदत बचपन से ही शुरू कर देनी चाहिए। इससे बाल्यावस्था में ही आध्यात्मिक नींव पड़ती है। मनुष्य जीवन में पूर्णतय: स्वस्थ रहता है और पाप कर्मों से बचता है, अच्छे संस्कारों का स्वामी बनता है। वृद्धावस्था में ध्यान का अभ्यास प्रारम्भ करने वाले व्यक्ति के लिए शारीरिक कमजोरी व अन्य अनेक कारणों के कारण आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि में निपुणता प्राप्त करना कठिन हो जाता है। फलस्वरूप ऐसा वृद्ध व्यक्ति ईश्वरीय आनन्द से वंचित रहता है।

एक अनुसंधान के अनुसार आने वाले अगले 10 वर्षों में मानसिक बीमारी व तनाव के रोग बहुत अधिक मात्रा में, पूरे संसार में, बढ़ने वाले हैं। इससे बचने का एकमात्र उपाय है सात्विक भोजन, ईश्वर-उपासना, आध्यात्मिकता, योगासन और प्राणायाम को जीवन का अभिन्न अंग बनाना।

ध्यान की तैयारी

जप, ध्यान, सन्ध्या की तैयारी का पालन करें। (पृष्ठ :

175–181)

ध्यान में प्रयोग होने वाले शब्द व मन्त्र (भावार्थ सहित) याद कर लें।

(1) ईश्वर की 20 प्रमुख विशेषताएँ (नाम) (गुण, कर्म, स्वभाव) निम्नलिखित क्रम में (अर्थ व भावार्थ के साथ) याद कर लें।

''स'' से शुरू होने वाले नाम/गुण

(क) सच्चिदानन्दस्वरूप, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सृष्टिकर्ता

''अ'' से शुरू होने वाले नाम/गुण

(ख) अजन्मा, अनादि, अनन्त, अनुपम, अमर, अजर, अभय

''न'' से शुरू होने वाले नाम/गुण

(ग) निराकार, न्यायकारी, निर्विकार, नित्य

अन्य नाम/गुण

(घ) दयालु, पवित्र

निम्नलिखित मंत्र भी अर्थ के साथ याद कर लें।

(2) प्राणायाम मंत्र :

ओ३म् भूः ओ३म् भुवः ओ३म् स्वः ओ३म् महाः ओ३म् जनः, ओ३म् तपः ओ३म् सत्यम्।

अर्थ :

पहला चरण : ओ३म् भूः

प्रभु ! आप भूः स्वरूप हैं। प्राणदाता हैं। सभी के प्राणों की

अन्न, जल, अग्नि व वायु द्वारा रक्षा करते हैं। मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं भी यथाशक्ति दूसरों के प्राणों की रक्षा कर सकूं। अहिंसा के मार्ग पर चलूं।

दूसरा चरण : ओ३म् भुवः

प्रभु! आप भुवः स्वरूप हैं। दुःख विनाशक हैं। सभी के दुःखों को न्यायपूर्वक दूर करते हैं। मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं भी यथाशक्ति दूसरों के सांसारिक दुःखों को दूर कर सकूं।

तीसरा चरण : ओ३म् स्वः

हे सर्वरक्षक प्रभु! आप स्वः स्वरूप हैं। सुखदायक हैं। सभी प्राणियों को उनके कर्मानुसार सुख प्रदान करते हैं। मुझे भी प्रेरणा दीजिए-मैं भी यथाशक्ति दूसरों को सुख प्रदान कर सकूं। निर्मल, गरीब, दुःखी व रोगियों की सहायता कर सकूं।

चौथा चरण : ओ३म् महः

हे प्रभु! आप महः स्वरूप हैं। महान् हैं। श्रेष्ठ हैं। मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं भी सुकर्म व निष्काम कार्य करता हुआ महानता के गुण अपने अन्दर ला सकूं।

पांचवां चरण : ओ३म् जनः

हे प्रभु! आप जनः स्वरूप हैं। सृष्टि के उत्पत्ति कर्ता हैं, पालक हैं, धारक हैं, प्रलयकर्ता हैं। आपको बार-बार नमन करता हूँ।

छटा चरण : ओ३म् तपः

हे प्रभु! आप तपः स्वरूप हैं। सृष्टि में सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र, पृथ्वी आदि सभी ग्रह आपकी आज्ञा के अनुसार नियम से कार्य कर रहे हैं। मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं भी अपना जीवन तपस्वी

बनाऊं। नियमित जीवन निर्वाह करूं।

सातवां चरण : ओ३म् सत्यम्

हे प्रभु ! आप सत्य स्वरूप हैं। सत्यवादी हैं। मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं भी सत्य के रास्ते पर चलूं।

(3) ओ३म् असतो मा सद्गमय।
ओ३म् तमसो मा ज्योतिर्गमय।
ओ३म् मृत्योंमा अमृतगमय।

अर्थ –

पहला चरण – ओ३म् असतो मा सद्गमय

हे प्रभु! मुझे असत्य से सत्य की ओर ले जाइये। मुझे प्रेरणा दीजिए मैं सत्य का पालन करूं। छल, कपट व असत्य का त्याग करूं।

दूसरा चरण – ओ३म् तमसो मा ज्योतिर्गमय

हे प्रभु ! मुझे अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाइये। मुझे अविद्या से विद्या की ओर ले जाइये। अज्ञान से ज्ञान की ओर प्रेरित कीजिए। प्रेरणा दीजिए, मैं वेद और आर्ष ग्रन्थों का चिन्तन करूं। अष्टांग योग का पालन करूं। उनके अनुसार अपना जीवन व्यतीत करूँ।

तीसरा चरण : ओ३म् मृत्योंमा अमृतंगमय।

हे प्रभु ! मुझे मृत्यु रूपी दु:खों से छुड़ाकर मोक्ष रूपी आनन्द प्राप्त कराइये। मुझे प्रेरणा दीजिए, मैं सुकर्म व निष्काम कार्य करूं। योगाभ्यासी बनूं। आवागमन के चक्र से मुक्ति पाऊँ। आपका सच्चा पुत्र कहलाने का अधिकारी बनूं।

(4) गायत्री मंत्र :

गायत्री मंत्र व इसके अर्थ के लिए गायत्री मंत्र की जप विधि देखें। (पृष्ठ-204-209)

(5) सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चित् दुःख भागभवेत्।

अर्थ : हे ईश्वर ! सभी सुखी हों। कोई दुःखी न हो। सब नीरोग रहें। सब एक दूसरे को प्रेम भाव से देखें। सबका हर प्रकार से कल्याण हो।

(6) त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देव देव।।
त्वमेव सर्व मम देव देव।।

हे ईश्वर ! तुम ही मेरी माता हो, पिता हो, मित्र हो, सखा हो, गुरु हो, आचार्य हो, राजा हो, उपास्य हो।

प्रभु ! मुझे प्रेरणा दीजिए मेरा यह सम्बन्ध आपके साथ सदा बना रहे। मैं अपने सारे कार्य आपकी उपस्थिति मानकर करूँ। मेरा मार्गदर्शन कीजिए।

(7) हे ईश्वर दयानिधे! भवत्कृपयाऽनेन जपोपासनादि कर्मणा। धर्मार्थ काममोक्षणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्न।

सर्वशक्तिमान प्रभु ! मैं अपने तन को, मन को, धन को, सभी उत्तम कार्यों को आपको समर्पित करता हूँ। मुझे ज्ञान दीजिए, बुद्धि दीजिए, सामर्थ्य दीजिए ताकि मैं परिश्रम व आपकी कृपा से धर्म,अर्थ, काम मोक्ष को प्राप्त कर सकूँ।

(8) ओ३म् नमः शम्भवाय च, मयोभवाय च, नमः शंकराय।

च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च।।

हे प्रभु! परमेश्वर, आप मुझे आनन्द दे रहे हैं, आरोग्यता दे रहे हैं,शान्ति दे रहे हैं, सुख दे रहे हैं, शुद्धि दे रहे हैं, धैर्य दे रहे हैं, सहनशीलता दे रहे हैं, विनम्रता दे रहे हैं। प्रभु मैं आपको बारम्बार नमन करता हूँ। धन्यवाद देता हूँ।

(9) शान्ति पाठ

ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।

वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः।

सर्व ꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

हे ईश्वर! सूर्यादि, अन्तरिक्ष, पृथ्वी, जल, औषधियाँ, वनस्पतियाँ सभी शान्तिदायक हैं। हे प्रभु, अपनी कृपा से ऐसी शान्ति सभी को प्रदान कीजिए।

प्रथम ध्यान विधि

इस पुस्तक में बताई गई ध्यान विधि के अनुसार ध्यान में लगभग आधे घण्टे से एक घण्टा लगता है। इस समय को अपने स्वास्थ्य, लगन, रुचि व समय के अनुसार बढ़ाया जा सकता है।

ध्यान विधि में श्वास प्रश्वास क्रिया, बाह्य प्राणायाम (कुम्भक), स्तम्भवृत्ति प्राणायाम, ओ३म् का जाप तथा सरल वैदिक मंत्रों का प्रयोग किया गया है। इनका अभ्यास व श्वास-प्रश्वास क्रियाओं के साथ उच्चारण करने में पर्याप्त समय लगता है। लेकिन कोई भी साधारण साधक इनको कुछ ही महीनों में सफलतापूर्वक सीख सकता है। पूर्ण अभ्यास के बाद सफलता

भी अवश्य मिलती है।

साधकों व प्रभु भक्तों की सुविधा के लिए ध्यान प्रक्रिया को चार चरणों में बांटा गया है। प्रत्येक चरण - एक, दो, तीन और चार - का अभ्यास कम से कम तीन-तीन महीने करना चाहिए। साधक प्रथम चरण का अभ्यास तीन महीने करने के बाद ही दूसरे चरण में प्रवेश करें। इसी प्रकार दूसरे और तीसरे चरण का कम से कम तीन-तीन महीने अभ्यास होने पर चौथे चरण अर्थात् वास्तविक ध्यान में प्रवेश करें। इसके साथ-साथ प्रतिदिन व्यवहार काल में अपनी दिनचर्या को ठीक रखें। यम, नियम व आसन का पालन करें।

इस प्रकार ध्यान में सफलता के लिए कम से कम एक वर्ष लग जाता है।

ध्यान विधि के चार चरणों की निम्न विशेषताएं हैं :-

(1) **पहला चरण :** इस चरण में केवल शब्दों और मन्त्रों का उच्चारण किया जाता है। उच्चारण करते हुए दीर्घ श्वसन व सूक्ष्म श्वसन प्रक्रिया का अभ्यास किया गया है। इस प्रक्रिया से मन शान्त होता है। ईश्वर भक्ति में मन लगता है। मन्त्र व शब्द कंठस्थ हो जाते हैं। दीर्घ श्वसन के अभ्यास से स्वास्थ्य अच्छा बना रहता है।

(2) **दूसरा चरण :** इस चरण में मन्त्रों का उच्चारण पहले चरण की भांति दीर्घ श्वसन प्रक्रिया के साथ किया जाता है। मन्त्र उच्चारण के बाद मन्त्र के अर्थ का भी उच्चारण किया जाता है। इस प्रकार मन्त्रो के अर्थ कण्ठस्थ हो जाते हैं। इसके लाभ भी पहले चरण की तरह हैं। इसके अतिरिक्त हमारा चित्त भी शान्त होने

लगता है।

(3) तीसरा चरण : इस चरण में मन्त्रों का उपांशु विधि द्वारा उच्चारण करते हैं। दीर्घ श्वसन प्रक्रिया के बाद बाह्य प्राणायाम (बाहरी कुम्भक) एवं स्तम्भवृत्ति प्राणायाम का भी प्रयोग किया गया है और इस अवस्था में मन्त्र के अर्थ का चिंतन मानसिक रूप से करते हैं। इस चरण के अभ्यास के बाद शरीर में पूर्ण शिथिलता आ जाती है और मन पूर्ण रूप से ईश्वर के ध्यान में लग जाता है।

(4) चौथा चरण : इस चरण में सभी मन्त्रों का केवल मानसिक चिन्तन/उच्चारण ही किया जाता है। मंत्र के मानसिक उच्चारण के बाद बाह्य कुम्भक या स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में मन्त्र के अर्थ की भावना का चिंतन करते हैं। पर्याप्त अभ्यास के बाद मन्त्र उच्चारण के साथ-साथ मंत्र के अर्थ की भावना का चिंतन स्वत: चलता रहता है।

इस स्थिति में ध्यान की पूर्ण विधि सम्पन्न होती है। हम वास्तविक ध्यान में प्रवेश करते हैं।

नोट : साधकों व भक्तों से निवेदन है कि वे सीधा तीसरे या चौथे चरण में प्रवेश करने का प्रयत्न न करें। ध्यान करना एक तप है। इसमें सफलता हमारे शुद्ध आचरण, यम, नियम का पालन, आसन व विभिन्न क्रियाओं के निरन्तर अभ्यास, सुविचार और ईश्वर के प्रति श्रद्धा व उसकी कर्मफल व्यवस्था में पूर्ण विश्वास पर निर्भर करती है। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए लेखक ने ध्यान सीखने हेतु साधकों के लिए कम से कम एक वर्ष का अनुमान लगाया है। फलस्वरूप ध्यान प्रक्रिया को चार भागों में बांट दिया गया है ताकि प्रभु भक्त ध्यान प्रक्रिया को आसानी से

सीख सकें और चौथे चरण के अभ्यास के बाद ईश्वरीय आनन्द की अनुभूति कर सकें।

ध्यान विधि - पहले चरण का अभ्यास

1 (क) ध्यान की तैयारी (पृष्ठ : 175-181) से सम्बन्धित बातों का पालन करते हुए किसी भी आसन में सुखपूर्वक बैठ जायें।

(ख) यदि शब्द, मन्त्र कंठस्थ हैं तो आँखें बन्द कर लें अन्यथा आँखें खोल कर रखें व मन्त्र, शब्द पढ़कर उच्चारण करें।

(ग) शब्द / मन्त्र का उच्चारण करते हुए दीर्घ श्वसन विधि का प्रयोग बताया गया है। यदि दीर्घ व गहरा श्वास लेने से शरीर या मस्तिष्क में कुछ असुविधा प्रतीत हो तो बहुत गहरा श्वास अन्दर न लें। उच्च रक्तचाप से पीड़ित साधक भी प्रारम्भ में अधिक गहरा श्वास अन्दर न लें। ऐसी स्थिति में श्वास कम गहरा लें। लेकिन श्वास को लम्बा करते हुए धीरे-धीरे मन्त्र के उच्चारण के साथ छोड़ें ताकि मन्त्र का उच्चारण व पूर्ण श्वास एक साथ बाहर निकले।

2. (क) सर्वप्रथम तीन बार दीर्घ श्वसन प्रक्रिया से ओ३म् का उच्चारण करें।

पहला उच्चारण - ईश्वर को सम्बोधित करते हुए।

दूसरा उच्चारण - व्याप्य-व्यापक का संबंध बनाते हुए

तीसरी उच्चारण - ईश्वर को समर्पण करते हुए

(ख) तत्पश्चात् गहरी श्वास अन्दर लेकर, श्वास छोड़ते हुए एक बार पूर्ण गायत्री मंत्र का धीरे-धीरे उच्चारण करें।

3. तत्पश्चात् सात संकल्पों का उच्चारण (पृष्ठ 179-181 के अनुसार) निम्न प्रकार से करें -

(क) पहले धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें। फिर धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण करें। जब तक पूरा श्वास बाहर नहीं चला जाता, ओ३म् का उच्चारण चलता रहे।

(ख) इसके पश्चात् दो या तीन सामान्य श्वास लें।

(ग) तत्पश्चात् प्रथम संकल्प का उच्चारण करें।

(घ) इसी प्रकार अन्य 6 संकल्पों का उच्चारण करें।

ईश्वर स्तुति एवं व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध की पुष्टि

(4) (क) प्रभु के गुण, कर्म, स्वभाव का अनुभव कराने वाले शब्दों का अर्थ कंठस्थ है। यह सुनिश्चित कर लें।

(ख) अब उपरोक्त नामों का वाचिक उच्चारण करते हैं।

(ग) सर्वप्रथम एक लम्बा, गहरा श्वास धीरे-धीरे अन्दर लें (पूरक) फिर श्वास को धीरे-धीरे बाहर छोड़ते हुए लम्बे स्वर में वाचिक उच्चारण करें -

"ओ३म् सच्चिदानन्द स्वरूप परमेश्वराय नमो नमः"

(घ) वाक्य का उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिए।

(ङ) तत्पश्चात् तीन सूक्ष्म/सामान्य श्वास लें।

(च) मन/ धारणा को किसी एक दिये गये स्थान पर बनायें रखें या मन को मन्त्र की ध्वनि पर ही केन्द्रित करें।

इस प्रकार यह ईश्वर के एक गुण का वाचिक उच्चारण पूर्ण हुआ।

उपरोक्त विधि से ईश्वर के अन्य गुण, कर्म, स्वभाव वाले

शब्दों का वाचिक उच्चारण, चिन्तन, मनन/अभ्यास करें।

(2) ओ३म् सर्व शक्तिमान् परमेश्वराय नमो नमः
(3) ओ३म् सर्वव्यापक परमेश्वराय नमो नमः
(4) ओ३म् सर्वान्तर्यामी परमेश्वराय नमो नमः
(5) ओ३म् सर्वाधार परमेश्वर नमो नमः
(6) ओ३म् सवेश्वर परमेश्वराय नमो नमः
(7) ओ३म् सृष्टिकर्ता परमेश्वराय नमो नमः
(8) ओ३म् अजन्मा परमेश्वराय नमो नमः
(9) ओ३म् अनादि परमेश्वराय नमो नमः
(10) ओ३म् अनन्त परमेश्वराय नमो नमः
(11) ओ३म् अनुपम परमेश्वराय नमो नमः
(12) ओ३म् अमर परमेश्वराय नमो नमः
(13) ओ३म् अजर परमेश्वराय नमो नमः
(14) ओ३म् अभय परमेश्वराय नमो नमः
(15) ओ३म् निराकार परमेश्वराय नमो नमः
(16) ओ३म् न्यायकारी परमेश्वराय नमो नमः
(17) ओ३म् निर्विकार परमेश्वराय नमो नमः
(18) ओ३म् नित्य परमेश्वराय नमो नमः
(19) ओ३म् दयालु परमेश्वराय नमो नमः
(20) ओ३म् पवित्र परमेश्वराय नमो नमः

नोट :- ईश्वर स्तुति के लाभ के लिए ईश्वर के धारणीय गुणों को अपनी आत्मा में धारण करें और उनको अपने आचरण में पालन करें और ईश्वर के साथ व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध को उपासना काल एवं व्यवहार काल में बनाये रखें।

(5) प्राणायाम मंत्र का वाचिक उच्चारण व चिन्तन

(क) धीरे-धीरे लम्बा, गहरा श्वास अन्दर लें (पूरक)

(ख) धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए मंत्र के पहले चरण का उच्चारण करें -

(1) ओ .... ३.........................म्..............भूः

(ग) मन्त्र का उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिए।

श्वास पूर्ण बाहर निकलने के पश्चात् (अर्थात् रेचक के बाद) तीन सामान्य/सूक्ष्म श्वास लें।

(घ) मन/ धारणा किसी एक दिये गये स्थान पर बनाये रखें या मन को मन्त्र ध्वनि पर ही केन्द्रित करें।

इस प्रकार प्राणायाम मन्त्र के पहले चरण का वाचिक उच्चारण, चिन्तन हुआ।

इसी प्रकार उपरोक्त विधि से प्राणायाम मन्त्र के अन्य छः चरणों का वाचिक उच्चारण, चिन्तन, अभ्यास करें।

(2) ओ .... ३.........................म्..............भुवः

(3) ओ .... ३.........................म्..............स्वः

(4) ओ .... ३.........................म्..............महः

(5) ओ .... ३.........................म्..............जनः

(6) ओ .... ३.........................म्..............तपः

(7) ओ .... ३.........................म्.............सत्यम्

इसके पश्चात् दीर्घ श्वास लेकर, तत्पश्चात् धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए पूर्ण प्राणायाम मन्त्र का वाचिक उच्चारण धीमी गति से पुनः करें।

ओ३म् भूः ओ३म् भुवः ओ३म् स्वः ओ३म् महाः ओ३म् जनः, ओ३म् तपः ओ३म् सत्यम्।

ईश्वर प्रार्थना

(6) असतो मा सदगमय मन्त्र का वाचिक उच्चारण/चिन्तन

(क) धीमा, गहरा, लम्बा श्वास अन्दर लें (पूरक)

(ख) धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए पहले चरण का उच्चारण धीमी गति से करें।

(1) ओ ....३..................म् असतो मा सदगमय

(ग) मन्त्र का उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिये। श्वास पूर्ण बाहर निकलने के पश्चात् तीन सामान्य/सूक्ष्म श्वास लें।

(घ) मन/ धारणा को शरीर में किसी एक दिये गये स्थान पर बनाये रखें या मन को मन्त्र की ध्वनि पर ही केन्द्रित रखें।

(ङ) इस प्रकार इस मन्त्र का एक चरण पूर्ण हुआ।

इसी प्रकार मन्त्र के अन्य दो चरणों (उपरोक्त विधि से) का वाचिक उच्चारण/चिन्तन करें।

(2) ओ ....३..............म्-तमसो मा ज्योतिर्गमय

(3)ओ ....३...............म्-मृत्योमा अमृतंगमय

इसके बाद दीर्घ श्वास लेकर और उसके बाद धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए पूर्ण मन्त्र का एक साथ वाचिक उच्चारण धीमी गति से करें।

ओ३म् असतो मा सद्गमय।
तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योमा अमृतगमय।।

(7) गायत्री मन्त्र का उच्चारण /चिन्तन

गायत्री मन्त्र का उच्चारण गायत्री मन्त्र जप विधि से (पृष्ठ 204 से 210 पर) विस्तार से दिया गया है। वहाँ पर देख लें।

(8) तत्पश्चात् त्वमेव माता च पिता त्वमेव का उच्चारण सामान्य श्वास प्रक्रिया से करें।

नोट – प्रार्थना के साथ मंत्र की भावना के अनुसार उचित व श्रेष्ठ पुरुषार्थ करना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि गायत्री मंत्र द्वारा सुबुद्धि की प्रार्थना की गई है तो इसके लिए वेदों का स्वाध्याय या शास्त्रों का अध्ययन करना आवश्यक हैं इसके उपरान्त ही लाभ की आशा की जा सकती है। अर्थात् प्रार्थना के साथ धीरे-धीरे पुरुषार्थ के द्वारा सभी मंगल कामनाओं में सफलता मिलती जाती है।

(9) इसके पश्चात् निम्नलिखित मन्त्रों का उच्चारण, चिन्तन सामान्य श्वास-प्रश्वास के साथ एक-एक बार करें। अर्थात् दीर्घ श्वसन प्रक्रिया का प्रयोग न करें।

(1) सर्वे भवन्तु सुखिनः मन्त्र (सर्वमंगल कामना मन्त्र)

(2) हे ईश्वर दयानिधे (समर्पण मन्त्र)

(3) ओ३म् नमः शम्भवाय च (नमस्कार मन्त्र)

(4) शान्ति पाठ

इसके बाद पांच मिनट शव आसन में लेट जायें ताकि शरीर की स्थिति सामान्य हो जाये।

सायंकाल के संकल्प –

यह सायंकाल में ध्यान प्रक्रिया प्रारम्भ करने से पहले बोलना है।

सर्वप्रथम धीमा, गहरा, लम्बा, श्वास लेकर ओ३म् का

उच्चारण तीन बार करें। तत्पश्चात् बोलें -

हे प्रभु ! मैंने जो भी संकल्प प्रातः उपासना काल में किये थे उनको आज व्यवहार काल में पालन करने की कोशिश की है। प्रभु, मुझे प्रेरणा दीजिए मैं इसमें पूर्ण सफलता प्राप्त कर सकूं।

ध्यान विधि - दूसरे चरण का अभ्यास

दूसरे चरण में शब्दों व मन्त्रों का वाचिक उच्चारण दीर्घ श्वसन प्रक्रिया के साथ पहले चरण की तरह ही करते हैं। इसके साथ-साथ प्रत्येक मन्त्र के उच्चारण के बाद उसके अर्थ का भी वाचिक उच्चारण, चिन्तन, मनन किया जाता है।

दूसरे चरण की विधि निम्न प्रकार है।

1-3. पहले चरण में दिये गये निर्देश व संकल्प का पालन करें/अनुकरण करें / दोहरायें।

4. प्रभु के गुण, कर्म, स्वभाव का अनुभव कराने वाले नामों का अर्थ सहित वाचिक उच्चारण, चिन्तन-मनन

4 (क) एक लम्बा, गहरा, श्वास धीरे-धीरे अन्दर लें (पूरक करें)।

(ख) धीरे-धीरे श्वास बाहर छोड़ते हुए लम्बे स्वर में वाचिक उच्चारण करें -

(1) "ओ३म् सच्चिदानन्द स्वरूप परमेश्वराय नमो नमः"

(ग) मन्त्र का उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिए। पूर्ण श्वास निकलने के बाद 2-3 सामान्य सूक्ष्म श्वास लें।

(घ) इसके पश्चात् सामान्य श्वास लेते हुए अर्थ का उच्चारण करें।

प्रभु! आप सर्वदा रहने वाले हैं। चेतन हैं। ज्ञानयुक्त हैं। आनन्द स्वरूप हैं।

उपरोक्त विधि (4 क, ख, ग, घ के अनुसार) बाकी नामों का वाचिक उच्चारण के साथ-साथ अर्थ का भी उच्चारण करें -

(2) ''ओ३म् सर्वान्तर्यामी परमेश्वराय नमो नमः''

प्रभु! आप सभी जड़ और चेतन पदार्थों के अन्दर बाहर विद्यमान हैं।

(3) ओ३म् सर्वव्यापक परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु! आप सभी स्थान और तीनों लोकों में विद्यमान हैं।

(4) ओ३म् सर्वशक्तिमान परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु! आप सृष्टि के रचयिता व पालनकार हैं। प्रलय कर्ता हैं। जीवों को कर्मानुसार फल देते हैं। इन कार्यों में किसी की सहायता नहीं लेते हैं।

(5) ओ३म् सर्वाधार परमेश्वर नमो नमः

प्रभु! आप पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा, आकाश-गंगा, ग्रह, उपग्रह के निर्माणकर्ता हैं। आधार हैं।

(6) ओ३म् सृष्टिकर्ता परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु! आप सृष्टि के रचयिता हैं। पालन कर्ता हैं, प्रलयकर्ता हैं।

(7) ओ३म् सर्वेश्वर परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु! सृष्टि में सभी धन आपका है। सम्पत्ति आपकी है। ज्ञान आपका है। बल आपका है। ऐश्वर्य आपका है।

(8) ओ३म् अजन्मा परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु! आप जीवात्मा की तरह जन्म नहीं लेते हैं।

(9) ओ३म् अनादि परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु! आप उत्पत्ति शून्य हैं। सदा रहने वाले हैं।

(10) ओ३म् अनन्त परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु! आप विशाल हैं। आपकी विशालता की कोई सीमा नहीं है।

(11) ओ३म् अनुपम परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु! आपसे अच्छा कोई भी पदार्थ सृष्टि में नहीं है।

(12) ओ३म् अमर परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु! आप मृत्यु से परे हैं।

(13) ओ३म् अजर परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु! आप जीव की तरह रोग ग्रस्त नहीं होते हैं। बूढ़े नहीं होते हैं।

(14) ओ३म् अभय परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु! आप भय से रहित हैं।

(15) ओ३म् न्यायकारी परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु! आप जीवों को उनके कर्म के अनुसार फल देते हैं।

(16) ओ३म् निर्विकार परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु! आप जड़ पदार्थों के विकार से रहित हैं। दोषों से परे हैं।

(17) ओ३म् निराकार परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु! आपकी कोई आकृति नहीं है। मूर्ति नहीं है। रंग रूप नहीं है।

(18) ओ३म् नित्य परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु ! आप भूतकाल, वर्तमान काल व भविष्यकाल तीनों में विद्यमान हैं।

(19) ओ३म् दयालु परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु ! आप सभी जीवों को प्रकाश, जल, वायु, अग्नि आदि सुख प्रदान करते हैं।

(20) ओ३म् पवित्र परमेश्वराय नमो नमः

प्रभु ! आप पाप-कर्म से परे हैं। अविद्या से परे हैं।

5. प्राणायाम मन्त्र के सातों चरणों का अर्थ सहित वाचिक उच्चारण/चिन्तन/मनन -

(1) (क) धीरे-धीरे लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें (पूरक)

(ख) धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए पहले चरण का उच्चारण करें।

ओ..........................३......................म्..........भूः

(ग) मन्त्र का उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिए।

(घ) इसके पश्चात् ''ओ३म् भूः'' के अर्थ का सामान्य श्वास लेते हुए उच्चारण करें।

प्रभु! आप भूः स्वरूप हैं। प्राणदाता हैं। सभी के प्राणों की अन्न, जल व वायु द्वारा रक्षा करते हैं। मुझे भी प्रेरणा दीजिए। मैं भी यथाशक्ति दूसरों के प्राणों की रक्षा कर सकूं। अहिंसा के मार्ग पर चलूं।

(ङ) मन/धारणा को शरीर में दिये गये किसी एक स्थान पर बनाये रखें या मन को मन्त्र की ध्वनि पर केन्द्रित रखें।

इस प्रकार प्राणायाम मन्त्र के पहले चरण का उच्चारण अर्थ

सहित पूर्ण हुआ।

इसी प्रकार उपरोक्त विधि से प्राणायाम मन्त्र के अन्य छः चरणों का वाचिक उच्चारण/अभ्यास अर्थ सहित करें (पृष्ठ-214-218)

6. "असतो मा सदगमय" मन्त्र की तीनों चरणों का अर्थ सहित वाचिक उच्चारण / चिन्तन / मनन

(क) धीरे-धीरे लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें (पूरक)

(ख) धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए पहले चरण का वाचिक उच्चारण करें।

ओ ....३................म् असतो मा सदगमयः

(ग) मन्त्र का उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिए।

पूर्ण श्वास बाहर निकलने के बाद तीन सामान्य/सूक्ष्म श्वास लें।

(घ) मन/धारणा को शरीर में किसी एक दिये स्थान पर बनाये रखें या मन को मन्त्र की ध्वनि पर ही केन्द्रित रखें।

(ङ) इसके पश्चात् सामान्य श्वास लेते हुए मन्त्र के अर्थ का वाचिक उच्चारण करें।

हे प्रभु! मुझे असत्य से सत्य की ओर ले जाइये। प्रेरणा दीजिए। मैं सत्य का पालन करूं। छल, कपट व असत्य का त्याग करूं।

इसी प्रकार उपरोक्त विधि से इस मन्त्र के शेष दो चरणों का अर्थ सहित उच्चारण करें। (पृष्ठ-226)

इसके बाद दीर्घ श्वास लेकर पूर्ण मन्त्र का एक साथ

वाचिक उच्चारण करें।

7. गायत्री मन्त्र का अर्थ सहित उच्चारण

गायत्री मन्त्र का एक बार उच्चारण दीर्घ श्वसन विधि से करने के बाद उसके सरल अर्थ व कविता अर्थ का उच्चारण करें।

नोट : उच्चारण / अभ्यास के लिए ''गायत्री मंत्र जप विधि'' देखें। (पृष्ठ–204–210)

8. त्वमेव माता च पिता त्वमेव का उच्चारण अर्थ सहित सामान्य श्वास प्रक्रिया से करें।

9. इसके पश्चात् निम्नलिखित मन्त्रों का उच्चारण/चिन्तन सामान्य श्वास प्रक्रिया के साथ करें अर्थात् दीर्घ श्वसन प्रक्रिया का प्रयोग न करें।

(क) सर्वे भवन्तु सुखिनः मंत्र

(ख) हे ईश्वर दयानिधे (समर्पण मंत्र)

(ग) ओ३म् नमः शम्भवाय च। (नमस्कार मन्त्र)

(घ) शान्ति पाठ

इसके बाद पांच मिनट के लिए शव आसन में लेट जायें ताकि शरीर की स्थिति सामान्य हो जाये।

सायंकाल के संकल्प –

यह सायंकाल में ध्यान प्रक्रिया प्रारम्भ करने से पहले बोलना है।

सर्वप्रथम धीमा, गहरा, लम्बा, श्वास लेकर ओ३म् का उच्चारण तीन बार करें। तत्पश्चात् बोलें –

हे प्रभु! मैंने जो भी संकल्प प्रातः उपासना काल में किये थे उनको आज व्यवहार काल में पालन करने की कोशिश की है। प्रभु, मुझे प्रेरणा दीजिए, मैं इसमें पूर्ण सफलता प्राप्त कर सकूं।

प्रथम व द्वितीय चरण की समीक्षा

1. ध्यान विधि के प्रथम व द्वितीय चरण का तीन-तीन मास अभ्यास करने के बाद सभी मन्त्र साधक को कंठस्थ हो जाते हैं।
2. साधक को सभी मन्त्रों के अर्थ याद हो जाते हैं।
3. लम्बा, गहरा, धीमा श्वास लेने का पर्याप्त अभ्यास हो जाता है।
4. मन्त्र व उसके अर्थ का उच्चारण, चिन्तन, मनन उपांश व मानसिक विधि द्वारा करना आसान हो जाता है।
5. मन/धारणा, आज्ञाचक्र, हृदय प्रदेश, नाभि या मूलाधार पर आसानी से स्थिर बना रहता है।
6. इन 6 महीनों में, प्रयत्न करने पर, राजसिक व तामसिक भोजन पर संयम लग जाता है और प्राणायाम द्वारा स्वास्थ्य अच्छा होता चला जाता है।
7. तीसरे चरण में कुम्भक का प्रयोग करना आसान हो जाता है।
8. ध्यान में लगभग आधा घंटा एक ही आसन में बैठने का अभ्यास हो जाता है।

ध्यान विधि - तीसरे चरण का अभ्यास

1. इसमें संकल्प विधि के उच्चारण में कुछ भिन्नता है। प्रत्येक संकल्प लेने से पहले ओ३म् के उच्चारण के साथ पूर्ण श्वास बाहर निकलने पर बाह्य कुम्भक का प्रयोग किया जाता है। बाह्य कुम्भक की स्थिति में ही संकल्प बोला जाता है।

यदि बाह्य कुम्भक की स्थिति में संकल्प लेना संभव न हो तो स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनाकर संकल्प को बोलते हैं।

2. इसमें उपांशु विधि द्वारा मन्त्रों का जप किया जाता है अर्थात् मन्त्र या शब्द का उच्चारण बिना ध्वनि के (केवल होठ हिलाकर) दीर्घ स्वर में करते हैं। यदि उपांशु विधि से असुविधा हो तो वाचिक विधि से करते रहते हैं।

3. मन्त्र या शब्द का उच्चारण दीर्घ श्वास लेकर शुरू किया जाता है। उच्चारण करने के बाद यथाशक्ति बाह्य कुम्भक लगाते हैं।

4. बाह्य कुम्भक या स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में मन्त्र या शब्द के अर्थ का मानसिक उच्चारण करते हैं अथवा इसका चिन्तन मनन स्वत: ही होता रहता है।

5. बाह्य कुम्भक या स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में जितना अधिक समय तक रहकर प्रभु चिन्तन किया जाता है, उतना ही अधिक ध्यान में मन लगता है।

तीसरे चरण की प्रक्रिया विस्तृत रूप से निम्न प्रकार है–

1. **पहले चरण में दिये गये निर्देश के अनुसार ध्यान की तैयारी करें।**

2. **सर्वप्रथम दीर्घ श्वसन प्रक्रिया से तीन बार ओ३म् का उच्चारण करें। (देखें पृष्ठ : 234)**

3. **गायत्री मन्त्र के उच्चारण के साथ ध्यान विधि शुरू करें**

4. सात संकल्प निम्न प्रकार करें -

(क) दीर्घ श्वसन क्रिया के साथ ओ३म् का उच्चारण करें अर्थात् पहले धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें फिर धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण करें। जब तक पूरा श्वास बाहर नहीं चला जाता, ओ३म् का उच्चारण चलता रहे।

(ख) तत्पश्चात् बाह्य कुम्भक की स्थिति बनायें। यदि असुविधा हो तो 1-2 सूक्ष्म श्वास लेकर स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनायें।

(ग) तत्पश्चात् संकल्प लें।

संकल्प (1)

हे परमेश्वर! आप मेरे हृदय प्रदेश में विद्यमान हैं। आप मुझे देख रहे हैं। सुन रहे हैं। जान रहे हैं। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ। उपासना काल में अपना मन आपसे हटाकर इधर-उधर नहीं ले जाऊँगा। आपकी उपासना प्रतिदिन सुबह-शाम हृदय से करूँगा।

(घ) तत्पश्चात् 2 या 3 बार सामान्य/सूक्ष्म श्वास लें।

पुनः उपरोक्त बिन्दु (4) (क) और (ख) में ऊपर दिये गये निर्देश के अनुसार प्रत्येक संकल्प से पहले ओ३म् का उच्चारण करें व बाह्य कुम्भक या स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में शेष 6 संकल्प बोलें। (देखें पृष्ठ 179-181, 248)

5. प्रभु के गुण, कर्म, स्वभाव का अनुभव कराने वाले शब्दों का निम्न प्रकार उपांशु विधि से उच्चारण करें।

(क) लम्बा, गहरा श्वास धीरे-धीरे अन्दर लें (पूरक) फिर श्वास को धीरे-धीरे बाहर छोड़ते हुए लम्बे स्वर में (उपांशु विधि द्वारा) उच्चारण करें।

ओ......................३................म् (रेचक स्थिति में)

इसके तुरन्त बाद

सच्चिदानन्द स्वरूप परमेश्वराय नमो नमः (बाह्य कुम्भक की स्थिति में)

(ख) इसके बाद 2-3 सामान्य श्वास लेकर स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में अर्थ का उच्चारण करें।

(ग) इसके पश्चात् तीन सामान्य/सूक्ष्म श्वास लें।

(घ) मन/धारणा को शरीर के किसी एक स्थान पर बनाये रखें।

इस प्रकार यह ईश्वर के एक गुण का उपांशु विधि से (बाहरी कुम्भक एवं स्तम्भवृत्ति प्राणायाम स्थिति में) उच्चारण हुआ।

उपरोक्त विधि से ईश्वर के अन्य 19 गुण, कर्म, स्वभाव वाले शब्दों का चिन्तन, मनन, अभ्यास उपांशु विधि द्वारा करें।

(6) प्राणायाम मन्त्र का (उपांशु) उच्चारण / चिन्तन

(क) धीरे-धीरे लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें। (पूरक)

(ख) धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए मन्त्र के पहले चरण का (उपांशु विधि से) उच्चारण करें।

(ग) मन्त्र का उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिए।

(1) पूर्ण श्वास बाहर निकलने पर बाह्य कुम्भक करें।

(2) बाह्य कुम्भक की स्थिति में ओ३म् भूः मन्त्र के अर्थ का उच्चारण करें या 2-3 सामान्य श्वास लेकर स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में ओ३म् भूः के अर्थ का उच्चारण करें।

(3) इसके पश्चात् तीन सामान्य श्वास लें।

(घ) धारणा/मन को किसी भी एक स्थान (शरीर के अन्दर) पर बनाये रखें।

(ङ) इस प्रकार प्राणायाम मन्त्र के पहले चरण का उपांशु विधि द्वारा उच्चारण अर्थ सहित पूर्ण हुआ।

अब उपरोक्त विधि से प्राणायाम मन्त्र के अन्य छः चरणों का उपांशु जप अर्थ के साथ करें।

(2) **ओ...................३.........................म्............ भुवः**
ओ...................३.........................म्............ स्वः
ओ...................३.........................म्............ महः
ओ...................३.........................म्............ जनः
ओ...................३.........................म्............ तपः
ओ...................३.........................म्............ सत्यम्

इसके पश्चात् उपरोक्त पूर्ण मन्त्र का दीर्घ श्वास लेकर एक साथ उच्चारण करें (उपांशु विधि द्वारा)

(7) असतो मा सद्गमय मन्त्र का (उपांशु) उच्चारण

(क) धीमा, गहरा, लम्बा श्वास अन्दर लें। (पूरक)

(ख) धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए पहले चरण का (उपांशु) उच्चारण करें।

(1) ओ..............३...............म्.......असतो मा सद्गमय।

(ग) मन्त्र का उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिए।

(1) पूर्ण श्वास बाहर निकलने पर बाह्य कुम्भक करें।

(2) कुम्भक की स्थिति में या स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में उपरोक्त मन्त्र के अर्थ का मानसिक उच्चारण करें।

(3) इसके पश्चात् तीन सामान्य श्वास लें।

(घ) शरीर के अन्दर हृदय प्रदेश पर मन/धारणा को बनाये रखें।

(ङ) इस प्रकार इस मन्त्र के पहले चरण का उपांशु जप अर्थ सहित पूर्ण हुआ।

इस प्रकार अन्य दो चरणों का उच्चारण/जप करे।

ओ.........३............म्.........तमसो मा ज्योतिर्गमय।।

ओ.........३.................म्........मृत्योर्मा अमृतंगमय।।

इसके बाद दीर्घ श्वास लेकर पूर्ण मन्त्र का एक साथ (उपांशु जप) उच्चारण करें।

(8) गायत्री मन्त्र का एक बार उच्चारण

(क) धीमा, गहरा, लम्बा श्वास अन्दर लें। (पूरक)

(ख) धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण करें।

ओ.........................३..................................म्

(ग) ओ३म् का उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिए।

(घ) (1) इसके बाद 2-3 सामान्य श्वास लेकर स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनायें।

(2) अब स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में पूर्ण गायत्री मन्त्र का उपांशु विधि से उच्चारण करें।

(3) इसके पश्चात् तीन सामान्य श्वास लें।

(घ) शरीर के अन्दर मन/धारणा को हृदय प्रदेश पर बनाये रखें।

(ङ) इस प्रकार गायत्री मंत्र का उच्चारण पूर्ण हुआ।

(9)(क) (1) इसके पश्चात् आसन को (यदि इच्छा हो) बदल लें और स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनायें अर्थात् प्राणवायु/ श्वास को यथाशक्ति जहाँ का तहाँ रोक दें।

(2) इस अवस्था में निम्न वाक्यों का उच्चारण उपाशुं या मानसिक विधि से करें।

आनन्दमयी परमेश्वर, चैतन्यमयी परमेश्वर, सत्यमयी परमेश्वर।

(3) जब श्वास लेने की इच्छा हो तो सूक्ष्म श्वास लेकर, पुनः स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में आ जायें और उपरोक्त वाक्य से ईश्वर का मानसिक चिंतन 1, 2 या 3 मिनट तक करते रहें।

(4) इसके बाद निम्न मन्त्रों का सामान्य श्वास द्वारा 1-1 बार उपांशु विधि से उच्चारण करें।

(1) त्वमेव माता च पिता त्वमेव

(2) सर्वे भवन्तु सुखिनः

(3) हे ईश्वर दयानिधे

(4) ओ३म् नमः शम्भवाय च

इसके पश्चात् पांच मिनट शव आसन में लेट जायें ताकि

शरीर की स्थिति सामान्य हो जाये।

इसके बाद सुख आसन में बैठ कर शान्ति पाठ का उच्चारण करें।

नोट :- यम नियम का पालन करते हुए, सच्ची श्रद्धा तथा विश्वास सहित की गई उपासना से हृदय में शान्ति व आनन्द की लहर जाग्रत हो जाती है। हमारा हृदय कुछ ही क्षणों में ऐसा आनन्द का अनुभव करता है जो स्वादिष्ट से स्वादिष्ट भोजन से भी प्राप्त नहीं होता।

सायंकाल के संकल्प - यह सायंकाल में ध्यान प्रक्रिया प्रारम्भ करने से पहले बोलना है।

सर्वप्रथम धीमा, गहरा, लम्बा, श्वास लेकर ओ३म् का उच्चारण तीन बार करें। तत्पश्चात् बोलें-

हे प्रभु! मैंने जो भी संकल्प प्रातः उपासना काल में किये थे उनको आज व्यवहार काल में पालन करने की कोशिश की है। प्रभु! मुझे प्रेरणा दीजिए, मैं इसमें पूर्ण सफलता प्राप्त कर सकूं।

तीसरे चरण की समीक्षा

(1) तीसरे चरण में दी गई क्रियाओं का अभ्यास तीन महीने तक करने से उपांशु जप सिद्ध होने लगता है।

(2) उपासना काल में मन व चित्त पूर्णतया शान्त व शिथिल होने लगता है।

(4) आसन व प्राणायाम सिद्ध होने लगता है अर्थात् उपासना काल में शरीर का कोई भी अंग नहीं हिलता है। साधक का अपने शरीर और श्वास-प्रश्वास पर पूर्ण अधिकार हो जाता है।

(5) ध्यान में मन भटकता नहीं है और लगभग 45 मिनट तक एक ही आसन में बैठने का अभ्यास हो जाता है।

(6) ध्यान के चौथे चरण में प्रवेश के लिए पूर्ण तैयारी हो जाती है।

ध्यान विधि - चौथा व अन्तिम चरण

1. ध्यान के चौथे चरण में सभी संकल्पों व मन्त्रों का धीमी गति से मानसिक उच्चारण किया जाता है। शब्दों व मन्त्रों के उच्चारण में होठ नहीं हिलाये जाते हैं। ध्वनि की कोई आवाज नहीं होती है।

2. मन्त्रों का मानसिक उच्चारण पहले की तरह दीर्घ श्वास या किसी अन्य श्वास विधि के अनुसार किया जाता है। यह साधक के स्वास्थ्य पर निर्भर करता है।

3. मन्त्र का मानसिक उच्चारण व श्वास बाहर निकलने की प्रक्रिया पूर्ण होने के बाद बाहरी कुम्भक यथाशक्ति लगाते हैं और इस स्थिति में मन्त्र के अर्थ की भावना का चिन्तन करते हैं या मन्त्र के अर्थ का चिन्तन करते हैं। यदि बाहरी कुम्भक की स्थिति बनाना संभव न हो तो इस प्रक्रिया को स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में करते हैं।

4. मन्त्र या शब्द के अर्थ का या अर्थ की भावना का वाचिक या उपांशु उच्चारण नहीं करते हैं।

5. शरीर पूर्ण रूप से स्थिर व शान्त हो जाता है। शरीर का कोई भी अंग नहीं हिलता है।

6. ध्यान में लगभग 1 घंटे तक एक ही आसन में बैठने का

अभ्यास हो जाता है।

7. प्रत्येक मन्त्र के मानसिक जप / उच्चारण के बाद बाह्य कुम्भक या स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में मंत्र के अर्थ की भावना द्वारा ध्यान (ईश्वर का चिन्तन-मनन) किया जाता है।

8. यदि बैठे हुए आसन में असुविधा हो रही हो तो स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में आसन बदल लेते हैं अर्थात् पैरों की स्थिति बदल दी जाती है ताकि अधिक समय तक ध्यान में बैठा जा सके।

नोट :- यदि मानसिक उच्चारण के द्वारा ध्यान/जप करने में असुविधा हो रही हो तो तीसरे चरण में दी गई प्रक्रिया का अभ्यास तीन महीने और करें।

चौथे चरण की प्रक्रिया विस्तृत रूप में निम्नलिखित है :-

1. पहले चरण में दिये गये निर्देश के अनुसार ध्यान की तैयारी करें।

2. सर्वप्रथम तीन बार दीर्घ श्वास-प्रश्वास की प्रक्रिया से ओ३म् का उच्चारण करें। (देखें, पृष्ठ-248)

3. गहरा श्वास लेकर मानसिक विधि से गायत्री मन्त्र के उच्चारण के बाद ध्यान विधि शुरू करें।

4. तीसरे चरण के निर्देशानुसार गहरा श्वास लेते हुए ओ३म् के मानसिक उच्चारण के साथ सभी संकल्प करें। अर्थात् ओ३म् का उच्चारण व संकल्प मन ही मन में बोलें।

5. प्रभु के गुण, कर्म, स्वभाव का अनुभव कराने वाले शब्दों का मानसिक उच्चारण।

(क) लम्बा, गहरा धीमा श्वास अन्दर लें (पूरक) फिर श्वास

को धीरे-धीरे बाहर छोड़ते हुए लम्बे स्वर में तीसरे चरण के अनुसार मानसिक उच्चारण करें -

ओ.............................३.................................म्

सच्चिदानन्द स्वरूप परमेश्वराय नमो नमः

(ख) ईश्वर के गुण के अर्थ की भावना उच्चारण के साथ-साथ अनुभव होती रहती है।

(ग) इसके बाद तीन सामान्य श्वास ले।

(घ) मन/धारणा शरीर में किसी एक दिये गये / बताये गये स्थान पर बनाये रखें।

इस प्रकार यह ईश्वर के एक गुण का मानसिक उच्चारण चिन्तन अर्थ की भावना के साथ पूर्ण हुआ। इसी प्रकार अन्य 19 गुणों का चिन्तन मनन करें।

उपरोक्त पूरी प्रक्रिया स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में भी की जा सकती है।

6. प्राणायाम मन्त्र का मानसिक उच्चारण/चिन्तन

(क) धीमा, गहरा, लम्बा श्वास अन्दर लें (पूरक)

(ख) धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए मन्त्र के पहले चरण का मानसिक उच्चारण करें।

(i) ओ ....३...............................म्....भूः

(ग) मन्त्र का मानसिक उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिए।

(i) मन्त्र उच्चारण के साथ-साथ मन्त्र के अर्थ की भावना का चिंतन स्वतः होता रहता है।

(ii) पूर्ण श्वास बाहर निकलने पर बाह्य कुम्भक करें।

(iii) इसके पश्चात् तीन सामान्य सूक्ष्म श्वास लें।

(घ) मन/धारण किसी भी एक स्थान (शरीर के अन्दर) पर बनायें रखें।

(ङ) इस प्रकार प्राणायाम मंत्र के पहले चरण का मानसिक उच्चारण/चिन्तन अर्थ की भावना के साथ पूर्ण हुआ।

इसी प्रकार उपरोक्त विधि से प्राणायाम मंत्र के अन्य छः चरणों का (अर्थ की भावना सहित) मानसिक जप करें।

(ii) ओ......................३..................................म्..... भुवः
ओ......................३..................................म्..... स्वः
ओ......................३..................................म्..... महः
ओ......................३..................................म्..... जनः
ओ......................३..................................म्..... तपः
ओ......................३...............................म्..... सत्यम्

इसके पश्चात् उपरोक्त पूर्ण मन्त्र का दीर्घ श्वास लेकर एक साथ मानसिक उच्चारण करें। पूर्ण मन्त्र का मानसिक उच्चारण आप स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में भी कर सकते हैं।

(7) असतो मा सद्गमय का मानसिक उच्चारण/चिन्तन

(क) धीमा, गहरा, लम्बा श्वास अन्दर लें (पूरक)

(ख) धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए पहले चरण का मानसिक उच्चारण (जप) करें।

ओ................३......................म् असतो मा सद्गमय

(ग) मंत्र का मानसिक उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिए।

(घ) शरीर के अन्दर किसी भी एक स्थान पर मन की धारणा

बनाये रखें।

(i) मंत्र उच्चारण के साथ-साथ मंत्र के अर्थ की भावना स्वत: चलती रहती है।

(ii) पूर्ण श्वास बाहर निकलने पर बाह्य कुम्भक करें

(iii) इसके पश्चात् तीन सामान्य/सूक्ष्म श्वास लें।

(ङ) इस प्रकार इस मन्त्र के एक चरण का मानसिक उच्चारण अर्थ की भावना सहित पूर्ण हुआ।

इसी प्रकार मंत्र के अन्य दो चरणों का अर्थ की भावना सहित मानसिक उच्चारण / जप / चिन्तन करें।

(ii) ओ ....३..................म् तमसो मा ज्योतिर्गमय।

(iii) ओ ....३..................म् मृत्योमा अमृतगमय।।

अब दीर्घ श्वास लेकर पूर्ण मंत्र का मानसिक उच्चारण/चिन्तन करें। यह उच्चारण आप स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में भी कर सकते हैं।

8. गायत्री मंत्र का एक बार मानसिक उच्चारण करें।

इसके बाद निम्नलिखित मन्त्रों का सामान्य श्वास के साथ एक-एक बार मानसिक उच्चारण करें -

(9) त्वमेव माता च पिता त्वमेव

(10) सर्वे भवन्तु सुखिनः

(11) हे ईश्वर दयानिधे

(12) ओ३म् नमः शम्भवाय च

ध्यान विधि-समापन प्रक्रिया

(i) शव आसन में लेट जायें।

(ii) दोनों हाथों की अंगुलियों के अन्तिम सिरों को दोनों आँखों पर धीरे से रखकर (15-20 सैकण्ड के लिए) थोड़ा सा दबाएँ।

(iii) अब दोनों हथेलियों को आँखों से धीरे-धीरे हटायें लेकिन दोनों आँखें बन्द रखें।

(iv) इस अवस्था में निम्न वाक्यों का मानसिक उच्चारण करें -
प्रभु! आप मेरी आत्मा में सूक्ष्म रूप से विद्यमान हैं। आप मुझे -

आनन्द दे रहे हैं।
आरोग्यता दे रहे हैं।
स्वस्थ व दीर्घ आयु दे रहे हैं।
वेद ज्ञान दे रहे हैं।
प्रभु! इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

(v) अब ईश्वर के निम्न गुणों का मानसिक उच्चारण करें -

आनन्दमयी परमेश्वर	-	1-2 मिनट तक
चेतनमयी परमेश्वर	-	1-2 मिनट तक
सत्यमयी परमेश्वर	-	1-2 मिनट तक

(vi) अब ध्यान के बाद दोनों आँखों के ऊपर, दोनों हाथों की चुल्ली बनाकर रखें और इस अन्धकार में आँखें 4-5 बार खोलें व बन्द करें।

(vii) अब दोनों नेत्र खोलकर बायीं करवट लेते हुए शव आसन से सुखासन में बैठ जाये और 1 या 2 वैदिक भजन का गायन वाचिक अथवा मानसिक रूप में करें।

(viii) शान्ति पाठ का उच्चारण करें।

इस प्रकार यह ध्यान विधि पूर्ण हुई।

नोट :- 1) प्रात: सायं आपको ध्यान में बैठने के लिए इस उच्च विधि का प्रयोग ही करना है।

2) ध्यान-वैदिक सन्ध्या द्वारा भी किया जाता है जिसका वर्णन आगे किया जायेगा।

ध्यान विधि का सूक्ष्म में क्रम

साधकों व भक्तों की सुगमता के लिए पूर्ण ध्यान विधि का क्रम सूक्ष्म में पुन: नीचे दिया जा रहा है।

1. सर्वप्रथम दीर्घ श्वास-प्रश्वास की प्रक्रिया से तीन बार ओ३म् का उच्चारण करें।
2. सात संकल्प वाचिक/मानसिक उच्चारण की विधि से (प्राणायाम के साथ) करें।
3. प्रभु के गुण, कर्म, स्वभाव का अनुभव कराने वाले शब्दों, मन्त्रों का वाचिक / मानसिक उच्चारण श्वास प्रश्वास के साथ करें और अर्थ का भी चिन्तन करें।
4. प्राणायाम मंत्र के सातों चरणों का वाचिक/मानसिक उच्चारण प्राणायाम के साथ करें। उनके अर्थ का चिन्तन भी करें।
5. असतो मा सद्गमय मन्त्र के तीनों चरणों का उच्चारण वाचिक/मानसिक रूप में प्राणायाम के साथ करें। अर्थ का चिन्तन भी करें।
6. गायत्री मन्त्र का उच्चारण वाचिक/मानसिक विधि से करें।
7. इसके बाद निम्न मन्त्रों का वाचिक, उपांशु या मानसिक उच्चारण करें।

(क) त्वमेव माता च पिता त्वमेव

(ख) सर्वे भवन्तु सुखिनः

(ग) हे ईश्वर दयानिधे

(घ) ओ३म् नमः शम्भवाय च

8. ध्यान विधि की समापन प्रक्रिया करें।

द्वितीय ध्यान विधि

(1) ध्यान की तैयारी (पृष्ठ-175-181) से सम्बन्धित बातों का पालन करते हुए किसी भी आसन में सुखपूर्वक बैठ जायें।

(2) धीमा गहरा लम्बा सूक्ष्म श्वास अन्दर लेकर-फिर धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण 3 बार करें।

ओ .... ३ .... म्

तत्पश्चात् बोलें -

प्रभु! आप सर्वरक्षक हैं। सबकी रक्षा कर रहे हैं। मेरी भी रक्षा कर रहे हैं, मैं हृदय से आपको धन्यवाद देता हूँ।

(3) अब सात संकल्पों का उच्चारण करें।

संकल्प - 1

(क) धीमा गहरा लम्बा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण (ईश्वर सर्वरक्षक है-भावना के साथ करें।

ओ .... ३ .... म्

(ग) तत्पश्चात् 2-3 सामान्य श्वास लेकर प्रथम संकल्प बोलें-

संकल्प 1 : हे परमेश्वर! आप मेरे आत्मा में विद्यमान हैं। आप मुझे देख रहे हैं, सुन रहे हैं, जान रहे हैं। प्रभु मैं प्रतिज्ञा करता हूँ। उपासना काल में अपना मन आपसे हटाकर इधर-उधर नहीं ले जाऊँगा। प्रतिदिन प्रातः सायं हृदय से आपकी उपासना करूँगा।

संकल्प - 2, 3, 4, 5, 6, 7 का उच्चारण भी उपरोक्त विधि से करें।

संकल्प 2 : हे प्रभु! मैं अपने जीवन में सदैव यम-नियम का पालन करूँगा। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह के साथ साथ शुद्धि, सन्तोष, स्वाध्याय, तप व ईश्वर प्रणिधान को अपने जीवन का आवश्यक अंग बनाऊँगा। अपने सभी कार्य धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य का विचार करके करूँगा।

संकल्प 3 : प्रभो! मैं संकल्प लेता हूँ-मन से, वचन से, कर्म से-कभी भी किसी भी प्राणी को हानि नहीं पहुँचाऊँगा। अविद्या (अज्ञानता), अस्मिता (अहंकार), राग (आसक्ति, प्रेम), द्वेष (घृणा), अभिनिवेश (मृत्यु के भय से होने वाला कष्ट) को समाप्त करूँगा। काम पर, क्रोध पर, लोभ पर, मोह पर, राग पर, द्वेष पर, अहंकार पर संयम रखूँगा।

संकल्प 4 : हे प्रभु! मैं संकल्प लेता हूँ-नित्य प्रतिदिन समय का सदुपयोग करूँगा। अपना कर्तव्य ईमानदारी से निभाते हुए आध्यात्मिक उन्नति की ओर प्रेरित होऊँगा। अपनी सामर्थ्य के अनुसार समाज सेवा व दान करूँगा।

संकल्प 5 : हे प्रभो! मेरे प्राणाधार! मुझे विदित है कि मैं एक आत्मा हूँ। अपने कर्मों के फलानुसार और आपकी कृपा से मुझे यह मानव शरीर प्राप्त हुआ है। इस शरीर को चलाने के लिए आपने मुझे प्राण दिये हैं।

प्रभु मैं संकल्प लेता हूँ कि प्राण, अपान, समान, व्यान और उदान को बलिष्ठ बनाने के लिए मैं प्रतिदिन प्रातःकाल प्राणायाम करूँगा। अपनी सभी इन्द्रियों को पवित्र व बलिष्ठ बनाऊँगा।

संकल्प 6 : हे प्रभु! मैं संकल्प लेता हूँ-

(1) सदा प्रसन्न रहूँगा। सुख-दुःख में सम रहूँगा। किसी भी परिस्थिति-अनुकूल अथवा प्रतिकूल- में अपना मानसिक सन्तुलन नहीं खोऊँगा।

(2) सदैव सकारात्मक विचार रखूँगा, नकारात्मक विचार-या तो आने नहीं दूंगा अथवा आने पर उनको तुरन्त रोकूंगा।

संकल्प 7 :

(1) हे प्रभु! मैं अपने स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दूँगा।

(2) मैं सदा सात्त्विक आहार का ही सेवन करूंगा।

(3) सात्विक आहार भी भूख लगने पर और उचित मात्रा में ही लूँगा।

(4) (i) (क) धीमा, लम्बा, गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीमी गति से छोड़ते हुए तीन बार गायत्री मन्त्र का उच्चारण करें।

ओ३म् भूर्भवः स्वः तत् सुवितुर्वरेण्यम्।

भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो न प्रचोदयात्।।

(ii) अब 2-3 सामान्य श्वास लें। और इस स्थिति में गायत्री मन्त्र के भावार्थ का उच्चारण एक बार करें।

हे प्रभु! आप प्राण स्वरूप हैं, दुःख विनाशक हैं, सुख स्वरूप हैं, श्रेष्ठ हैं, तेजस्वी हैं, पाप नाशक हैं, देव स्वरूप हैं। प्रभु मैं आपके इस स्वरूप को अपने अन्तःकरण में धारण करता हूँ। मेरी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित कीजिए।

(iii) अब गायत्री मंत्र के कविता भावार्थ का उच्चारण (धीमी गति से) करें।

तूने हमें उत्पन्न किया, पालन कर रहा है तू,
तुझसे ही पाते प्राण हम, दुखियों के कष्ट हरता है तू।
तेरा महान तेज है, छाया हुआ सभी स्थान।
सृष्टि की वस्तु-वस्तु में, तू हो रहा है विद्यमान।।
तेरा ही धरते ध्यान हम, माँगते तेरी दया।
ईश्वर हमारी बुद्धि को, श्रेष्ठ मार्ग पर चला।।
दाता हमारी बुद्धि को, वेद मार्ग पर चला।।

5(i) (क) अब धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को बाहर छोड़ते हुए उच्चारण करें -

ओ .... ३ .... म्

असतो मा सद्गमय

(उपरोक्त विधि से पहले चरण का तीन बार उच्चारण करें)।

(ग) अब भावार्थ का उच्चारण करें। (एक बार)

हे प्रभु! मुझे असत्य से सत्य की और ले जाइये। मुझे

प्रेरणा दीजिए-मैं सत्य का पालन करूँ। छल, कपट और असत्य का त्याग करूँ।

(ii) निर्देश 5 (i), (क) (ख) पालन करते हुए उच्चारण करें-

ओ .... ३ .... म्

तमसो मा ज्योतिर्गमय

उपरोक्त विधि से दूसरे चरण का भी 3 बार उच्चारण करें।

(ग) अब भावार्थ का एक बार उच्चारण करें -

हे प्रभु! मुझे अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाइये, अविद्या से विद्या की ओर ले जाइये। अज्ञान से ज्ञान की ओर प्रेरित कीजिए।

प्रभु! मुझे प्रेरणा दीजिए। मैं वेद और आर्ष ग्रन्थों का चिन्तन करूँ। उनके अनुसार अपना जीवन चलाऊँ। अपनी अविद्या को दूर करूँ।

(iii) निर्देश 5 (क), (ख) का पालन करते हुए 3 बार उच्चारण करें-

ओ .... ३ .... म्

मृत्योर्मा अमृतं गमय

(ग) अब भावार्थ का एक बार उच्चारण करें।

हे प्रभु! मुझे मृत्यु रूपी दुःख से छुड़ाकर मोक्ष रूपी आनन्द प्राप्त कराइये।

मुझे प्रेरणा दीजिए, मैं सुकर्म और निष्काम कार्य करूँ। आवागमन के चक्र से मुक्ति पाऊँ। आपका सच्चा पुत्र कहलाने का अधिकारी बनूँ।

(6) अब धीमी गति से निम्न मन्त्र का उच्चारण करें।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देव देव।।

अब उपरोक्त मन्त्र के भावार्थ का उच्चारण करें।

हे ईश्वर! तुम ही मेरी माता हो, पिता हो, मित्र हो, सखा हो, गुरु हो, आचार्य हो, राजा हो, उपास्य हो।

प्रभु! मुझे प्रेरणा दीजिए-मेरा यह सम्बन्ध आपके साथ सदा बना रहे। मैं अपने सारे कार्य आपकी उपस्थिति मानकर करूँ। मेरा मार्गदर्शन भी कीजिए।

7 (i) अब धीमा गहरा लम्बा श्वास अन्दर लें।

श्वास को बाहर छोड़ते हुए दीर्घ स्वर में उच्चारण करें -

ओ................ ३ .... म्............आनन्दः

अथवा

ओ................ ३ .... म्..........आनन्दम्

(ख) अब भावार्थ का उच्चारण एक बार करें -

हे प्रभु! आप आनन्द स्वरूप हैं। मुझे भी आनन्द दे रहे हैं। मैं हृदय से आपको धन्यवाद देता हूँ।

इस उपरोक्त मन्त्र का उच्चारण 1 से 5 मिनट तक समय की उपलब्धता के अनुसार करें।

(8) समर्पण मन्त्र का एक बार उच्चारण करें -

हे ईश्वर दयानिधे! भवत्कृपयाऽनेन जपोपासनादि कर्मणा धर्म, अर्थ काममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन।।

अब समर्पण मन्त्र के भावार्थ का उच्चारण करें।

हे प्रभु! मैं अपने तन को, मन को, धन को-समस्त उत्तम कार्यों को-आपको समर्पित करता हूँ। मुझे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति कराइये।

(9) अब नमस्कार मन्त्र का उच्चारण करें।

ओ३म् नमः शम्भवाय च, मयोभवाय च,
नमः शङ्कराय च मयस्कराय च,
नमः शिवाय च, शिवतराय च।।

अब नमस्कार मन्त्र के भावार्थ का उच्चारण करें।

हे प्रभो! आप मुझे आनन्द दे रहे हैं, आरोग्यता दे रहे हैं, धैर्य दे रहे हैं, विनम्रता दे रहे हैं। शुद्धि दे रहे हैं, सन्तोष दे रहे हैं, शान्ति दे रहे हैं, सहनशीलता दे रहे हैं। प्रभो! मैं इसके लिए आपको हृदय से नमस्कार करता हूँ, धन्यवाद देता हूँ।

प्रभो! यह गुण सभी मनुष्यों को दीजिए। सभी मनुष्य केवल आपकी ही स्तुति-प्रार्थना-उपासना करें। एक आदर्श समाज का निर्माण करें।

(10) ओ .... ३ .... म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

(11) इसके बाद कम से कम 1 या 2 वैदिक भजनों का गायन - वाचिक/मानसिक रूप में करें।

नोट :- यदि किसी मन्त्र का उच्चारण करना संभव नहीं हैं तो उसके भावार्थ बोलने से भी ध्यान किया जा सकता है। उसके उपकारों का धन्यवाद करना। उसके गुण, कर्म, स्वभाव जो मनुष्य अपने जीवन में अपना सकता है, उनका अनुसरण करना, अपने जीवन में अनुभव करना। शारीरिक, मानसिक, आत्मिक उन्नति करते हुए प्राणीमात्र की सेवा करना, ईश्वर की अनुभूति करना।

प्राणायाम हमारी इन्द्रियां, मन और चित्त की मलीनता और अशुद्धि को दूर करता है। **प्राणायाम के साथ सन्ध्या के मन्त्रों का उच्चारण व चिंतन करने से मन एकाग्र होता है, शरीर स्थिर होने लगता है।**

वैदिक सन्ध्या

सन्ध्या का अर्थ है ईश्वर का ध्यान करना, ईश्वर के महत्वपूर्ण गुण-सृष्टिकर्ता, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सर्वेश्वर, सर्वाधार आदि का चिंतन करना, उसकी आज्ञाओं का पालन करना और उस अदृश्य शक्ति के आगे समर्पण करना। उसके उपकारों का धन्यवाद करना। उसके धारणीय गुणों को अपने जीवन में अनुभव करके अपने जीवन में सकारात्मक परिवर्तन लाना। इस प्रकार, शारीरिक, मानसिक व आत्मिक उन्नति करते हुए प्राणीमात्र की सेवा करना और दूसरों को भी श्रेयमार्ग पर चलने की प्रेरणा देना।

प्राण साधना के साथ सन्ध्या के मन्त्रों का वाचिक/मानसिक उच्चारण और मन्त्रों के अर्थ की भावना का चिंतन करने से मन एकाग्र होता है, शरीर स्थिर होने लगता है। सभी इन्द्रियाँ धीरे-धीरे संयम में होने लगती हैं।

प्रस्तुत ब्रह्मयज्ञ (वैदिक सन्ध्योपासना) महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रतिपादित है। मेरे विचार में, अधिकतर साधारण साधक सन्ध्या के बाहरी कृत्यों जैसे आचमन, अंग स्पर्श और बिना अर्थ जाने मन्त्रोच्चारण आदि पर ही ध्यान देते हैं। सृष्टि प्रक्रिया, ईश्वर व आत्मा का स्वरूप का ठीक-ठीक चिंतन नहीं

करते हैं। आत्म शुद्धि को पर्याप्त महत्व नहीं देते हैं। इसलिए यह शिकायत रहती है कि सन्ध्या में मन नहीं लगता। अतः प्रस्तुत सन्ध्या विधि में बाहरी औपचारिकताओं का सम्मान किया गया है लेकिन अधिक महत्व नहीं दिया गया है।

प्रस्तुत सन्ध्या विधि में कठिन वैदिक मन्त्र के बाद सरल उच्चारण विधि भी लिखी गई है ताकि वे साधक, जिन्हें संस्कृत का पर्याप्त ज्ञान नहीं है, मन्त्र को सरल ढंग से पढ़कर याद कर सकें। उच्चारण कर सकें। सभी पाठकों से निवेदन है कि सरल उच्चारण विधि के अनुसार लिखे मन्त्र को संस्कृत व्याकरण की दृष्टि से न देखा जाय। सामान्य व्यक्ति द्वारा मन्त्र को याद करने की भावना को मन में रखा जाये ताकि साधारण व्यक्ति के मन में सन्ध्या के मन्त्रों में रुचि व ईश्वर-भक्ति की लगन पैदा हो सके।

सन्ध्या करते हुए मन्त्रों के अर्थों/भावार्थ/भावना का चिन्तन करना अनिवार्य व लाभदायक है। चिन्तन के अनुसार व्यवहारकाल में आचरण करना और ईश्वर की आज्ञाओं का स्वयं पालन करना और दूसरों को भी ईश्वरीय आदेश का अनुसरण करने की प्रेरणा देना ही प्रभु की वास्तविक उपासना है। अर्थ या भावार्थ/भावना को बिना समझे तोते की तरह वेद मन्त्रों को रट लेने से कोई आध्यात्मिक लाभ नहीं है। अर्थ/भावार्थ सहित सन्ध्या करने से भी पूर्ण लाभ तभी मिलता है जब हम अपने जीवन में यम-नियम का पालन करते हैं।

प्रस्तुत विधि में, साधारण साधक की सहायता के लिए, मन्त्रों के भावार्थ को महत्व दिया गया है-शाब्दिक अर्थों और उनकी वैदिक व्याख्या को नहीं। मन्त्र उच्चारण के साथ-साथ धीमा, लम्बा, व गहरा श्वास प्रश्वास का प्रयोग भी किया गया है। अधिकतर मन्त्रों के भावार्थ में प्यारे प्रभु का बार-बार धन्यवाद

किया गया है। धन्यवाद कहने से, धन्यवाद प्रभु का नहीं होता, अपने स्वयं का धन्यवाद होता है। अपना सौभाग्य होता है कि प्रभु चेतना और अनुपमता हमें प्राप्त हो रही है।

यह विधि लेखक अपने व्यक्तिगत अभ्यास और अनुभव के आधार पर लिख रहा है। लगभग एक वर्ष तक श्वास-प्रश्वास के साथ मन्त्रोच्चारण का पर्याप्त अभ्यास के बाद सन्ध्या के मन्त्रों का मानसिक उच्चारण व भावार्थ स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में किया जाता है जो कि अधिक आनन्दमयी है। इसमें मन्त्रों का प्रत्येक उच्चारण (मानसिक रूप से) या भावार्थ का चिन्तन स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में करने के पश्चात् शरीर को सामान्य स्थिति में लाने के लिए 3-4 सामान्य श्वास लेते हैं।

जिन साधकों को उच्च रक्तचाप व हृदय रोग की शिकायत है वे स्तम्भवृत्ति प्राणायाम या कुम्भक का प्रयोग चिकित्सक की सलाह लेकर ही करें अन्यथा न करें।

श्वास प्रश्वास द्वारा मन्त्र उच्चारण की विधि

(क) धारणा/मन को आज्ञाचक्र, हृदय प्रदेश, नाभि, मूलाधार या मन्त्र उच्चारण पर स्थिर करें।

(ख) धीरे-धीरे लम्बा गहरा श्वास नासिका से अन्दर लें (पूरक)

(ग) श्वास धीरे-धीरे छोड़ते हुए ओ३म् का दीर्घ गति से उच्चारण करें।

ओ..........................३..................................म्

(ईश्वर सर्वरक्षक है-ऐसी मानसिक भावना बनाए रखें)

(घ) ओ३म् का उच्चारण व श्वास बाहर निकलने की क्रिया एक साथ समाप्त होनी चाहिए। श्वास पूर्ण रूप से बाहर निकलने के बाद कुछ समय के लिये (5 से 7 सेकण्ड तक) श्वास बाहर ही रोकें। (बाह्य सूक्ष्म कुम्भक करें)

(ङ) तत्पश्चात् एक या दो सूक्ष्म श्वास (सामान्य श्वास) लें

और शेष मन्त्र का उच्चारण करें।

शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।

शं योरभिस्त्रवन्तु नः।।

नोट :- उपरोक्त मन्त्र उच्चारण विधि को प्रत्येक मन्त्र के साथ अपनानी है अर्थात् ओ३म् व मन्त्र का उच्चारण श्वास प्रश्वास के साथ अलग-अलग दो चरणों में करना है।

।। ओ३म् ।।

ब्रह्म यज्ञ (वैदिक सन्ध्योपासना) विधि

(प्राणायाम-श्वास प्रश्वास द्वारा)

(1) ध्यान की तैयारी (पृष्ठ 175-181) से सम्बन्धितों बातों का पालन करते हुए किसी भी सुखपूर्वक आसन में बैठ जायें।

(2) सर्वप्रथम तीन बार दीर्घ श्वसन प्रक्रिया से ओ३म् का उच्चारण करें।

पहला उच्चारण - ईश्वर को सम्बोधित करते हुए

दूसरा उच्चारण - व्याप्य-व्यापक का सम्बन्ध बनाते हुए

तीसरा उच्चारण - ईश्वर को समर्पण करते हुए

(2) दीर्घ श्वसन क्रिया से 1 बार गायत्री मन्त्र का उच्चारण करें।

मन में संकल्प करें कि मैं आर्ष ग्रन्थों का स्वाध्याय करके अपनी बुद्धि को स्थित करूँगा व सन्मार्ग पर लगाऊंगा।

(3) अब 7 संकल्पों का उच्चारण विधिनुसार करें (देखें - पृष्ठ-275-277)

आचमन मन्त्र

ओ३म् शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।

शं योरभिस्त्रवन्तु नः।।

उपरोक्त मन्त्र के उच्चारण के बाद सर्वव्यापक प्रभु से सुख की कामना करते हुए जल से तीन आचमन करें-अर्थात् सीधे हाथ की हथेली में तीन बार थोड़ा-थोड़ा जल लेकर पीयें।

उच्चारण हेतु सहायता :

ओ ....३..............................म्

शन्नो देवी : रभिष्टय। आपो भवन्तु पीतये,

शंयो र भिस्त्र वन्तु नः।।

भावार्थ :- हे प्रभो! आपने मुझे सुख पूर्वक जीवन जीने के लिये पर्याप्त ज्ञान, बल, प्रजा, पशु, धन, सम्पत्ति तथा दीर्घायु दी है। इसके लिये मैं हृदय से आपको धन्यवाद देता हूँ।

प्रभो! मुझे सामर्थ्य दीजिये। मैं धर्मपूर्वक एवं सुगमता से यह पदार्थ भविष्य में भी प्राप्त करता रहूँ।

अङ्ग स्पर्श मन्त्र :

निम्न मन्त्रों से बांईं हथेली में जल लेकर, दाहिने हाथ की मध्यमा और अनामिका अंगुलियों से जल के द्वारा इन्द्रियों का स्पर्श करते हुए इन्द्रियों की स्वस्थता एवं दृढ़ता के लिए ईश्वर से प्रार्थना करें।

विधि :- (1) पहले दाहिने, फिर बायें अंग को-विधिनुसार प्रत्येक मन्त्र बोलने के बाद स्पर्श करें।

(2) मंत्र उच्चारण करते समय, एक लम्बा गहरा श्वास लेकर, पहले ओ३म् का उच्चारण करें। जब पूर्ण श्वास बाहर निकल जाये और ओ३म् का उच्चारण भी समाप्त हो जाये, उसके बाद मन्त्र के शेष भाग का उच्चारण करें।

(3) इसके बाद 2-3 सामान्य श्वास लेकर अगले मन्त्रों का इसी प्रकार उच्चारण करें।

ओ ....३.............................म्

(ओ३म् का उच्चारण सदैव सर्वरक्षक भावना के साथ करें)

वाक् वाक्। (इससे मुख पर)

ओ ....३.............................म्

प्राणः प्राणः (इससे दोनों नासिकाओं पर)

ओ ....३.............................म्

चक्षुश्चक्षुः। (इससे दोनों आँखों पर)

ओ ....३.............................म्

श्रोत्रम् श्रोत्रम् (इससे दोनों कानों पर)

ओ ....३.............................म्

नाभिः। (इससे नाभि पर)

ओ ....३.............................म्

हृदयम्। (इससे हृदय पर)

ओ ....३.............................म्

कण्ठः। (इससे कण्ठ पर)

ओ ....३.............................म्

शिरः। (इससे सिर पर)

ओ ....३.............................म्

बाहुभ्यां यशोबलम् (इससे दोनों भुजाओं पर)

ओ ....३.............................म्

करतलकरपृष्ठे।। (इससे दोनों हथेलियों और उसके

निचले भाग को)

भावार्थ का उच्चारण :- प्रभो! आपने मुझे कर्म करने के लिए 5 ज्ञानेन्द्रियाँ दी, 5 कर्मेन्द्रियाँ दीं, मन दिया, बुद्धि दी, चित्त दिया, हृदय दिया, शरीर दिया। प्रभो! यह सभी प्राकृतिक जड़ पदार्थ स्वस्थ हैं, ठीक कार्य कर रहे हैं, मेरे नियन्त्रण में कार्य कर रहे हैं। प्रभो! मै इसके लिए आपको हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

प्रभो! मुझे प्रेरणा दीजिए, सामर्थ्य दीजिए। मैं अपनी ज्ञानेन्द्रियों को, कर्मेन्द्रियों को, मन, बुद्धि, चित्त व हृदय को, शरीर को इसी प्रकार बलवान व स्थिर बनायें रखूँ।

मार्जन मन्त्र

अब बाएं हाथ में जल लेकर दाहिने हाथ की मध्यमा और अनामिका अंगुली के अग्र भाग से सभी (नीचे दिये हुए) अंगों पर (विधिनुसार प्रत्येक मन्त्र बोलने के बाद) क्रमशः जल छिड़कें (स्पर्श करें)। (विधि-निर्देश 1, 2, 3 (पृष्ठ 286-287 के अनुसार)

ओ ....३..............................म्

भूः पुनातु शिरसि। (इससे सिर पर)

ओ ....३..............................म्

भुवः पुनातु नेत्रयोः। (इससे दोनों नेत्रों पर)

ओ ....३..............................म्

स्वः पुनातु कण्ठे। (इससे कण्ठ पर)

ओ ....३..............................म्

महः पुनातु हृदये। (इससे हृदय पर)

ओ ....३..............................म्

जनः पुनातु नाभ्याम्। (इससे नाभि पर)

ओ ....३...........................म्

तपः पुनातु पादयोः। (इससे दोनों पैरों पर)

ओ ....३...........................म्

सत्यं पुनातु पुनश्शिरसि। (इससे सिर पर)

ओ ....३...........................म्

खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र।। (इससे सब शरीर पर)

भावार्थ का उच्चारण :- हे प्रभु, मुझे प्रेरणा दीजिये, ज्ञान दीजिए, शक्ति दीजिए। मैं अपनी समस्त इन्द्रियों के दोषों को दूर कर सकूँ। उनको पवित्र बनाये रखूँ। अपनी भावनाओं और इच्छाओं पर नियन्त्रण रख सकूँ। मेरा मन सदैव शुभ संकल्प वाला हो-शुभ विचारों वाला हो।

प्राणायाम मन्त्र

ओ३म् भूः। ओ३म् भुवः। ओ३म् स्वः। ओ३म् महः। ओ३म् जनः। ओ३म् तपः। ओ३म् सत्यम्।।

इस मन्त्र के शब्दों के अर्थों की मन में भावना करते हुए कम से कम तीन बाह्य प्राणायाम, 3 आभ्यान्तर प्राणायाम व 3 स्तम्भवृत्ति प्राणायाम करें। अधिक से अधिक 21 प्राणायाम भी कर सकते हैं।

(1) तीन प्राणायाम की विधि के लिए देखें पृष्ठ संख्या 82-84)

(2) इक्कीस प्राणायाम की विधि (तीन क्रम में) इस प्रकार है:-

पहला क्रम (बाह्य कुम्भक द्वारा) -

पूर्ण श्वास को कुछ क्षण के लिए बाहर निकालकर बाहर ही

रोकना:-

(क) धीरे-धीरे लम्बा, गहरा श्वास अन्दर लें (पूरक)

(ख) धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए मन्त्र के पहले चरण का मानसिक उच्चारण करें।

1. ओ ....३.................................भूः

(ग) मंत्र का उच्चारण व श्वास का बाहर निकलना एक साथ पूर्ण होना चाहिये। मन्त्र उच्चारण के बाद पेट को थोड़ा सा अन्दर सिकोड़ें।

(घ) फिर 5-6 सेकेण्ड के लिए बाह्य कुम्भक की स्थिति में रहें।

(ङ) इसके बाद 2-3 सामान्य सूक्ष्म श्वास लें।

इसी प्रकार प्राणायाम मन्त्र के अन्य छः चरणों का मानसिक उच्चारण, चिन्तन का अभ्यास करें। आप वाचिक उच्चारण भी कर सकते हैं।

2. ओ ....३..............................भुवः

3. ओ ....३...............................स्वः

4. ओ ....३...............................महः

5. ओ ....३...............................जनः

6. ओ ....३...............................तपः

7. ओ ....३............................सत्यम्

दूसरा क्रम - आन्तरिक कुम्भक द्वारा
(पूर्ण श्वास को कुछ क्षण के लिए अन्दर रोकना)

(क) धीरे-धीरे गहरा श्वास अन्दर लेते हुए पहले चरण का मानसिक चिन्तन करें। इसमें वाचिक उच्चारण नहीं होता है।

ओ ....३.................................भूः

(ख) मंत्र के मानसिक उच्चारण पूर्ण होने पर श्वास को 5-7

सेकण्ड अन्दर रोकें, पेट को थोड़ा अन्दर सिकोड़ें। (आन्तरिक कुम्भक) इसके बाद श्वास भी छोड़ दें।

(ग) इसके बाद 2-3 सामान्य श्वास लें।

इसी प्रकार उपरोक्त विधि से प्राणायाम मन्त्र के अन्य छः चरणों का मानसिक चिन्तन करें।

तीसरा क्रम - (स्तम्भवृत्ति प्राणायाम द्वारा)

(श्वास को 'जहाँ का तहाँ रोकना)

(क) श्वास-प्रश्वास सामान्य कर दें। अर्थात् 3-4 सामान्य श्वास लें।

(ख) इसके बाद श्वास को 5-10 सैकण्ड ''जहाँ का तहाँ'' रोककर स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनायें। इस स्थिति में मन्त्र के पहले चरण का मानसिक चिंतन करें।

(ग) इसके बाद 2-3 सामान्य श्वास लें।

इसी प्रकार उपरोक्त विधि से प्राणायाम मन्त्र के अन्य छः चरणों का मानसिक चिन्तन करें।

भावार्थ का उच्चारण :- हे प्रभो! आप प्राणरक्षक हैं, दु:ख विनाशक हैं, सुख दाता हैं, महान हैं, सृष्टि के उत्पत्तिकर्ता हैं, तपस्वी हैं, अविनाशी हैं।

प्रभो! मुझ पर कृपा कीजिये। प्राणायाम से मेरे प्राण, अपान, समान, व्यान व उदान बलिष्ठ हों, मेरी बुद्धि कुशाग्र हो, स्मरण शक्ति बढ़े, मेरे कार्य और ध्यान में सफलता हो। मेरा मन सदैव प्रसन्न रहे। मैं सदैव आपके आनन्द की अनुभूति करता रहूँ।

अघमर्षण मन्त्र :

नीचे लिखे तीन मन्त्रों के उच्चारण करने के बाद भावार्थ का उच्चारण/चिन्तन करें :-

मन्त्र-1

ओ३म् ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रोऽअर्णवः।।1।।

उच्चारण हेतु सहायता :

ओ..............................३.................................म्
ऋतं च सत्यं चा भी द्धा तपसो अध्य जायत।
ततो रात्र्य जायत। ततः समुद्रो अर्णवः।

मन्त्र - 2

ओ३म् समुद्रादर्णवादधि संवत्सरोऽअजायत।
अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी।।2।।

उच्चारण हेतु सहायता :

ओ..............................३.................................म्
समुद्रा दर्ण वा दधि संवत् सरो जायत।
अहो रात्राणि विदधद् विश्वस्य मिषतो वशी।

मन्त्र - 3

ओ३म् सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।
दिव च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः।।3।।

उच्चारण हेतु सहायता :

ओ..............................३.................................म्
सूर्या चन्द्र मसौ धाता यथा पूर्वम् कल्पयत्।
दिव च पृथिवीं चान्त रिक्ष मथो स्वः।

भावार्थ का उच्चारण :- हे प्रभो! आपने अपने अनन्त ज्ञान व सामर्थ्य से इस सृष्टि की रचना की है। अनादि काल से आप ऐसे ही सृष्टि की रचना व प्रलय करते आ रहे हैं। इस विशाल ब्रह्माण्ड में उपस्थित (i) सभी ग्रह, उपग्रह, नक्षत्र, सूर्य, चन्द्रमा, तारे, आकाश, (ii) वायु, जल, नदियाँ, समुद्र, (iii) पृथ्वी, पहाड़, वनस्पतियाँ, जीव जन्तु आपने ही बनाये हैं।

प्रभो! यह सृष्टि आपने हमारे कर्मफल भोग के लिये बनाई है, मोक्ष प्राप्त करने के लिए बनाई है। प्रभो! मैं इसके लिये आपको हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

आचमन मन्त्र :

ओ३म् शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीयते।
शं योरभिस्त्रवन्तु नः।।

उच्चारण हेतु सहायता :

ओ..............................३...............................म्

शन्नो देवी र भिष्टय, आपो भवन्तु पीतये।
शंयो र भिस्त्र वन्तु नः।।

इस मन्त्र से पुनः तीन बार आचमन करें। यदि जल की आवश्यकता न हो तो न करें।

मनसा परिक्रमा मन्त्र

नीचे लिखे सभी छः मन्त्रों का उच्चारण करने के बाद भावार्थ का उच्चारण/चिन्तन करें।

मन्त्र-1

ओम् प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो

नम एभ्यो अस्तु।।

योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।।1।।

उच्चारण हेतु सहायता :

ओ ....३..................................म्

प्राची दिग् अग्नि रधिपति रसितो रक्षिता दित्या इषवः।

ते भ्यो नमो धि पति भ्यो नमो रक्षितृ भ्यो नम इषु भ्यो

नम ए भ्यो अस्तु।

यो स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष् मस्तं वो जम्भे दध्मः।

मन्त्र-2

ओ३म् दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता

पितर इषवः।

तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो

नम एभ्यो अस्तु।

योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।।2।।

उच्चारण हेतु सहायता :

ओ ....३..................................म्

दक्षिणा दिग् इन्द्रो धिपतिस् ति रश्चि राजी रक्षिता

पितर इषवः।

ते भ्यो नमो धि पति भ्यो नमो रक्षितृ भ्यो नम इषु भ्यो

नम ए भ्यो अस्तु।

यो स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष् मस्तं वो जम्भे दध्मः।।

मन्त्र-3

ओ३म् प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू

रक्षितान्नमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।।3।।

उच्चारण हेतु सहायता :

ओ ....३...............................म्

ओ३म् प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकूः रक्षिताः अन्न मिषवः। ते भ्यो नमो धि पति भ्यो नमो रक्षितृ भ्यो नम इषु भ्यो नम ए भ्यो अस्तु। यो स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष् मस्तं वो जम्भे दध्मः।।

मन्त्र-4

ओ३म् उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिता-शनिरिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि य वयं द्विष्मस्तं वोजम्भे वध्मः।।4।।

मन्त्र-5

ओ३म् ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षितावीरुध इषवः। तेभ्यो तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि य वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।।5।।

उच्चारण हेतु सहायता :

ओ ....३...............................म्

ध्रुवा दिग् विष्णु रधि पति कल्मा षग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः। ते भ्यो नमो धि पति भ्यो नमो रक्षितृ भ्यो नम इषु भ्यो अस्तु। यो स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष् मस्तं वो जम्भे दध्मः।।

मन्त्र-6

ओ३म् ऊर्ध्वा दिग्बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृ भ्यो नम इषु भ्यो नम ए भ्यो अस्तु। यो स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष् मस्तं वो जम्भे दध्मः।।

उच्चारण हेतु सहायता :

ओ..............................३..................................म्
ऊर्ध्वा दिग् बृहस्पति रधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्ष मिषवः। ते भ्यो नमो धि पति भ्यो नमो रक्षितृ भ्यो नम इषु भ्यो नम ए भ्यो अस्तु। यो स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष् मस्तं वो जम्भे दध्मः।।

भावार्थ का उच्चारण :- हे प्रभो! मुझे अपने आगे पीछे, दायें बायें, ऊपर-नीचे सभी तरफ आपकी ही दिव्य शक्तियाँ नजर आ रही हैं। आप अपने गुण कर्म स्वभाव, अपने बनाये हुये नियम और जड़ व चेतन पदार्थों से हमारी सभी प्रकार से रक्षा कर रहे हैं, पालन कर रहे हैं। प्रभो! मैं इसके लिये आपको बारम्बार धन्यवाद देता हूँ।

प्रभो! जो भी प्राणी मेरे साथ किसी प्रकार का अन्याय करता है या जिसके साथ मैं-ज्ञानतापूर्वक अथवा अज्ञानतापूर्वक ऐसा व्यवहार करता हूँ। इसको मैं आपको समर्पित करता हूँ। आप न्यायकारी हैं, सर्व शक्तिमान हैं, सर्वान्तर्यामी है। प्रभो! न्याय कीजिए! मेरा मार्ग दर्शन भी कीजिए।

उपस्थान मन्त्र :

अब अपने आपको सर्वरक्षक सर्वशक्तिमान् प्रभु की गोद में बैठा हुआ अनुभव करें अथवा अपनी आत्मा में ईश्वर की

अनुभूति करें। (व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध) इसके बाद चारों मन्त्रों के उच्चारण के बाद भावार्थ का उच्चारण/चिन्तन करें।

मन्त्र-1

ओ३म् उद्वयं तमसंस्परि स्वः पश्यन्तऽउत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्।।1।।

उच्चारण हेतु सहायता :

ओ ....३................................म्

उद् वयं तम सस् परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्।

देवं देवत्रा सूर्य मगन्म ज्योतिर् उत्तमम्।

मन्त्र-2

ओ३म् उदु त्यं जातवेदसं देव वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्यम्।।2।।

उच्चारण हेतु सहायता :

ओ ....३................................म्

उदु त्वं जात वेदसं देवं वहन्ति केतवः।

दृशे विश्वाय सूर्यम्।

मन्त्र-3

ओ३म् चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्रा द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षꣳ सूर्यऽऽआत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा।।3।।

उच्चारण हेतु सहायता :

ओ ....३................................म्

चित्रं देवाना मुद गा दनीकं चक्षुर् मित्रस्य वरुणस्य

अग्नेः। आप्रा द्यावा पृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्त स्थुषश्च स्वाहा।।

मन्त्र-4

ओ३म् तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतम्प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतम्भूयश्च शरदः शतात्।।4।।

उच्चारण हेतु सहायता :

ओ ....३..............................म्

तच्चक्षुर् देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतं अदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्।।4।।

भावार्थ का उच्चारणः- हे प्रभो! आपके द्वारा संसार में बनाये गये नियम, जड़ व चेतन पदार्थ -सभी दिशाओं में आपकी उपस्थिति, शक्ति, ज्ञान व दया का परिचय करा रहे हैं। प्रभो! मुझे विदित है - संसार के सभी पदार्थ अनित्य हैं, क्षणिक सुखदायी हैं, दु:खों से युक्त हैं फिर भी जीवन यापन करने के लिए आवश्यक हैं। मोक्ष प्राप्त करने में सहायक हैं। इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। **प्रभो!** मुझे भोगवृत्ति से योगवृत्ति की ओर प्रेरित कीजिए।

प्रभो! वर्तमान में जो भी दु:ख एवं विपरीत परिस्थितियाँ मेरे सामने आ रही हैं, वे मेरे ही पूर्व कर्मों का फल है, वर्तमान कर्मों का परिणाम है। प्रभो! मुझे इन दु:खों को स्वीकार भाव से सहने की शक्ति दीजिए।

प्रभो! आप सत्य स्वरूप हैं, चेतन स्वरूप हैं, आनन्द स्वरूप हैं, प्रकाश स्वरूप हैं। आपके ज्ञान, बल, आनन्द, न्यायकारी

दयालु आदि गुणों को धारण करके धर्मात्मा व तपस्वी लोग समाज को सन्मार्ग पर चलाने का प्रयत्न कर रहे हैं। प्रभो! मैं इसके लिए आपका आभार प्रकट करता हूँ।

प्रभो! मुझ पर भी कृपा कीजिए। मेरे हृदय में, आत्मा में अपनी अनुभूति कराइये। मैं 100 वर्ष तक स्वस्थ रहूँ। निःस्वार्थ भाव से आपकी महिमा व गुणों का गुणगान करता रहूँ। समाज सेवा करता रहूँ। सदैव आपके आनन्द में रहूँ।

गायत्री (प्रार्थना) मन्त्र

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।।

उच्चारण हेतु सहायता :

ओ ....३..............................म्

भूरः भुवः स्वः। तत् सवितुर् वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्र चोदयात।।

भावार्थ का उच्चारण :- हे प्रभो! आप मेरी आत्मा में विद्यमान हैं। मुझे सुबुद्धिः, शक्ति व ज्ञान दीजिए ताकि मैं वेदों का स्वाध्याय करके अपनी बुद्धि को सन्मार्ग पर चला सकूँ।

समर्पण मन्त्र

हे ईश्वर दयानिधे! भगवत्कृपानेन जपोपासनादि कर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः।

उच्चारण हेतु सहायता :

हे ईश्वर दया निधे! भवत् कृपया अनेन जप् उपासनादि कर्मणा धर्म अर्थ काम मोक्षाणं सद्यः सिद्धिर् भवेन्नः।

भावार्थ का उच्चारणः - हे ईश्वर दयानिधे! मैं अपने

तन को, मन को, धन को, समस्त उत्तम कार्यों को आपको समर्पित करता हूँ। मुझे प्रेरणा दीजिए मैं निष्काम कर्म करूँ और योगाभ्यास द्वारा धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त कर सकूँ।

नमस्कार मन्त्र

ओ३म् नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्काराय च नमः शिवाय च शिवतराय च।।

उच्चारण हेतु सहायता :

ओ३म् नमः शम् भवाय च मयो भवाय च नमः शंकराय च मयस्काराय च नमः शिवाय च शिवतराय च। ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

भावार्थ का उच्चारण :- प्रभो! आप मुझे (i) आनन्द, आरोग्यता दे रहे हैं, (ii) शुद्धि, सन्तोष, शान्ति, सहनशीलता दे रहे हैं। (iii) धैर्य, विनम्रता दे रहे हैं। प्रभो! इसके लिए मैं बारम्बार आपको हृदय से नमन करता हूँ, धन्यवाद देता हूँ।

हे मेरे नाथ! यह आनन्द, आरोग्यता, शुद्धि, सन्तोष, शान्ति, सहनशीलता, धैर्य, विनम्रता सभी साधकों को दीजिए। सभी साधक केवल आपकी ही स्तुति प्रार्थना उपासना करें। एक आदर्श समाज का निर्माण करें।

इसके बाद निम्नलिखित में से किसी एक मन्त्र के जप द्वारा ईश्वर का कम से कम 1 से 5 मिनट तक मानसिक ध्यान करें-

1. ओ३म् के जप द्वारा या
2. गायत्री मंत्र के जप द्वारा या

3. ओ३म् आनन्दम् के जप द्वारा या

4. ओ३म् सत्यम् के जप द्वारा

अथवा

प्रभु के निम्न गुणों का चिन्तन करें :-

प्रभु आप -

आनन्द स्वरूप हैं, पवित्र हैं, दयालु हैं, न्यायकारी हैं, तपस्वी हैं, अभय हैं, दुःख विनाशक हैं, सुखदायक हैं, प्राण रक्षक हैं, महान हैं।

प्रभु ! मुझे भी प्रेरणा दीजिए इन गुणों को मैं भी परिश्रम द्वारा ग्रहण कर सकूँ।

इसके बाद 1 या 2 वैदिक भजन का गायन वाचिक अथवा मानसिक रूप से करें।

।। इति सन्ध्योपासना विधिः।।

नोट :- A. 1. लम्बा, गहरा, धीमा श्वास प्रश्वास का प्रयोग वाचिक या उपांशु विधि द्वारा सन्ध्या अभ्यास में लगभग 6 महीने तक ही करना चाहिए।

2. उपरोक्त पर्याप्त अभ्यास होने के बाद नेत्र बन्द करके मानसिक उच्चारण का अभ्यास करें। सर्वप्रथम सूक्ष्म श्वास लेवें और ''ओ३म्'' का उच्चारण श्वास को बहुत धीरे-धीरे छोड़ते हुए करें। पुनः सामान्य श्वास लेकर शेष मन्त्र का उच्चारण भी लम्बे व धीमे स्वर में करें। यह अभ्यास भी 6 महीने तक करें।

3. इसके बाद सूक्ष्म श्वास लेना भी बन्द कर देवें। केवल सामान्य श्वास लें और ओ३म् व मन्त्र उच्चारण में उपरोक्त विधि का पालन करें अर्थात् सामान्य श्वास के बाद ओ३म् का उच्चारण करें। तत्पश्चात् पुनः सामान्य श्वास को लेकर मन्त्र का उच्चारण

करें। यह अभ्यास भी 6 मास तक करें।

4. इस प्रकार श्वास प्रश्वास, आसन व ध्यान में स्थिरता लायें।

(B) 1. इसके बाद स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में पूर्ण मन्त्र (ओ३म्+मन्त्र) का मानसिक उच्चारण करें। प्रत्येक मन्त्र का मानसिक उच्चारण पूर्ण होने पर पुनः 1-2 सामान्य श्वास लेवें। तत्पश्चात् पुनः स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में अगले मन्त्र का मानसिक उच्चारण करें। यह अभ्यास भी 6 मास तक करें।

(2) इसके बाद पहले चरण में स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में मन्त्र का मानसिक उच्चारण करते हैं। तत्पश्चात् 2-3 सामान्य श्वास लेकर पुनः स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनाते हैं और दूसरे चरण में उसी मन्त्र के अर्थ/अर्थ के भावार्थ का चिंतन करते हैं। अभ्यास काल-6 मास।

4. उपरोक्त अभ्यास करने के बाद मन्त्र के भावार्थ का चिन्तन मन्त्र के मानसिक उच्चारण के साथ-साथ स्वयं ही होता रहता है। अलग से भावार्थ का उच्चारण/चिन्तन नहीं करना पड़ता है। मन्त्र के अर्थ का भावार्थ साधक के अन्त:करण में एक विशेष स्थान बना लेता है और साधक ईश्वरीय आनन्द का अनुभव करने लगता है।

3. उपासना का पूर्ण लाभ, ईश्वरीय आनन्द व ईश्वरीय गुण, बल, विद्या, ज्ञान, सामर्थ आदि प्राप्त करने के लिए साधक को व्यवहार काल में ईश्वर प्रणिधान, समाज सेवा और यम नियम का पालन पूर्ण रूप से करना चाहिए।

वैदिक सन्ध्योपासना विधि
(मन्त्रों के भावार्थ द्वारा)

(A) ध्यान की तैयारी (पृष्ठ 175-181) से सम्बन्धित बातों का पालन करते हुए किसी भी आसन में सुखपूर्वक बैठ जायें।

(b) सर्वप्रथम तीन बार दीर्घ श्वसन प्रक्रिया से ओ३म् का उच्चारण करें।

पहला उच्चारण - ईश्वर को सम्बोधित करते हुए।

दूसरा उच्चारण - व्याप्य-व्यापक संबंध बनाते हुए

तीसरी उच्चारण - ईश्वर को समर्पण करते हुए

(C) संकल्प 1, 2, 3, 4, 5, 6 व 7 का उच्चारण भी (पृष्ठ 275-277) के अनुसार करें।

(C) गायत्री मन्त्र का उच्चारण भी (पृष्ठ 207) के अनुसार करें।

अब

1.(क) धीमा लम्बा गहरा श्वास अन्दर लें।

(ख) श्वास को धीरे-धीरे बाहर छोड़ते हुए ओ३म् का उच्चारण करें-

ओ......................... ३.................................म्

(ईश्वर सर्वरक्षक है- इस भावना के साथ)

(ग) तत्पश्चात् 2-3 सामान्य श्वास लेकर **आचमन मन्त्रः** के **भावार्थ** का वाचिक उच्चारण करें।

(1) **भावार्थः- हे प्रभो!** आपने मुझे सुखपूर्वक जीवन जीने के

लिये पर्याप्त ज्ञान, बल, प्रजा, पशु, धन, सम्पत्ति तथा दीर्घायु आदि दिये हैं। इसके लिये मैं हृदय से आपको धन्यवाद देता हूँ।

प्रभो! मुझे सामर्थ्य दीजिये। मैं धर्म पूर्वक एवं सुगमता से यह पदार्थ भविष्य में भी प्राप्त करता रहूँ।

उपरोक्त निर्देश (1) (क) (ख) (ग) में दी गई विधि के अनुसार ही सन्ध्या मन्त्रों के अन्य समूहों के भावार्थ का वाचिक उच्चारण करें।

(2) अङ्ग स्पर्श मन्त्र - भावार्थ

निर्देश 1 (क)(ख)(ग) का पालन करते हुए वाचिक उच्चारण करें।

भावार्थः-प्रभो! आपने मुझे कर्म करने के लिए, 5 ज्ञानेन्द्रियाँ दीं, 5 कर्मेन्द्रियाँ दीं, मन दिया, बुद्धि दी, चित्त दिया, हृदय दिया, शरीर दिया। **प्रभो!** यह सभी प्राकृतिक जड़ पदार्थ स्वस्थ हैं, ठीक कार्य कर रहे हैं, मेरे नियन्त्रण में कार्य कर रहे हैं। **प्रभो!** मैं इसके लिए आपको हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

प्रभो! मुझे प्रेरणा दीजिए, सामर्थ्य दीजिए। मैं अपनी ज्ञानेन्द्रियों को, कर्मेन्द्रियों को, मन, बुद्धि, चित्त व हृदय को, शरीर को इसी प्रकार बलवान व स्थिर बनाये रखूँ।

(3) मार्जन मन्त्रः - भावार्थ

(निर्देश 1 क, ख, ग का पालन करते हुए वाचिक उच्चारण करें।

भावार्थः- हे प्रभु! मुझे प्रेरणा दीजिये, ज्ञान दीजिए, शक्ति

दीजिए। मैं अपनी समस्त इन्द्रियों के दोषों को दूर कर सकूँ। उनको पवित्र बनाये रखूँ। अपनी भावनाओं और इच्छाओं पर नियन्त्रण रख सकूँ। मेरा मन सदैव शुभ संकल्प वाला हो-शुभ विचारों वाला हो।

(4) प्राणायाम मन्त्रः - भावार्थ

(निर्देश 1 क, ख, ग का पालन करते हुए वाचिक उच्चारण करें।

भावार्थः- हे प्रभो! आप प्राण रक्षक हैं, दु:ख विनाशक हैं, सुख दाता हैं, महान हैं, सृष्टि की उत्पत्तिकर्ता हैं, तपस्वी हैं, अविनाशी हैं।

प्रभो! मुझ पर कृपा कीजिए। प्राणायाम से मेरी बुद्धि कुशाग्र हो, मेरी स्मरण शक्ति बढ़े, मुझे कार्य और ध्यान में सफलता मिले। मेरा मन सदैव प्रसन्न रहे। मैं सदैव आपके आनन्द की अनुभूति करता रहूँ।

(5) अघमर्षण मन्त्र - भावार्थ

(निर्देश 1 क, ख, ग का पालन करते हुए वाचिक उच्चारण करें।

भावार्थ :- हे प्रभो! आपने अपने अनन्त ज्ञान व सामर्थ्य से इस सृष्टि की रचना की है। अनादि काल से आप ऐसे ही सृष्टि की रचना व प्रलय करते आ रहे हैं। इस विशाल ब्रह्माण्ड में उपस्थित सभी ग्रह, उपग्रह, नक्षत्र, सूर्य, चन्द्रमा, तारे, आकाश, वायु, जल, नदियाँ, समुद्र, पृथ्वी, पहाड़, वनस्पतियाँ, जीव जन्तु आपने ही बनाये हैं।

प्रभो! यह सृष्टि आपने हमारे कर्मफल भोग के लिए बनाई है, मोक्ष प्राप्त करने के लिए बनाई है। प्रभो! मैं इसके लिये आपको हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

(6) मनसा परिक्रमा मन्त्र - भावार्थ

(निर्देश 1 क, ख, ग का पालन करते हुए वाचिक उच्चारण करें।

भावार्थ :- हे प्रभो! मुझे अपने आगे पीछे, दायें-बायें, ऊपर-नीचे-सभी तरफ आपकी ही दिव्य शक्तियाँ नजर आ रही हैं। आप अपने गुण कर्म स्वभाव व अपने बनाये हुए जड़ चेतन पदार्थों से हमारी सभी प्रकार से रक्षा कर रहे हैं, पालन कर रहे हैं। **प्रभो!** मैं इसके लिये आपको बारम्बार धन्यवाद देता हूँ।

प्रभो! जो भी प्राणी मेरे साथ किसी भी प्रकार का अन्याय करता है या जिसके साथ मैं-ज्ञानतापूर्व अथवा अज्ञानतापूर्वक ऐसा व्यवहार करता हूँ। इसको मैं आपको समर्पित करता हूँ। आप न्यायकारी हैं, सर्व शक्तिमान हैं, सर्वान्तर्यामी हैं। **प्रभो!** न्याय कीजिए! मेरा मार्गदर्शन भी कीजिए।

(7) उपस्थान मन्त्र : भावार्थ

(भावार्थ उच्चारण में निर्देश 1, क, ख, ग का पालन करें)

भावार्थः- हे प्रभो! आपके द्वारा सृष्टि में बनाये गये नियम, जड़ व चेतन पदार्थ सभी दिशाओं में आपकी उपस्थिति, शक्ति, ज्ञान व दया का परिचय करा रहे हैं। **प्रभो!** संसार के सभी पदार्थ अनित्य हैं, क्षणिक सुखदायी हैं, दु:खों से युक्त हैं फिर भी जीवन यापन करने के लिए आवश्यक हैं। मोक्ष प्राप्त करने के लिए आवश्यक हैं। **प्रभो!** मुझे भोगवृत्ति से योगवृत्ति की ओर

प्रेरित कीजिए।

प्रभो! वर्तमान में जो भी दु:ख, विपरीत परिस्थितियाँ मेरे सामने आ रही हैं, वे मेरे ही पूर्व कर्मों का फल है, वर्तमान कर्मों का परिणाम है। **प्रभो!** मुझे इन दु:खों को स्वीकार भाव से सहने की शक्ति दीजिए।

प्रभो! आप ही सत्य स्वरूप हैं, चेतन स्वरूप हैं, आनन्द स्वरूप हैं, प्रकाश स्वरूप हैं। आपके ज्ञान बल, आनन्द आदि गुणों को धारण करके धर्मात्मा व तपस्वी लोग समाज को सन्मार्ग पर चलाने का प्रयत्न कर रहे हैं। **प्रभो!** मैं इसके लिये आपको धन्यवाद देता हूँ।

प्रभो! मुझ पर भी कृपा कीजिए। मेरे हृदय प्रदेश में, आत्मा में अपनी अनुभूति कराइये। मैं 100 वर्ष तक स्वस्थ रहूँ। निस्वार्थ भाव से आपकी महिमा व गुणों का गुणगान करता रहूँ। समाज सेवा करता रहूँ। सदैव आपके आनन्द में रहूँ।

(8) गायत्री मन्त्र - भावार्थ

(निर्देश 1 क, ख, ग का पालन करते हुए उच्चारण करें।)

भावार्थ :- हे प्रभो! आप मेरी आत्मा में विद्यमान हैं। मुझे सुबुद्धि, शक्ति व ज्ञान दीजिए। मेरी बुद्धि को सन्मार्ग पर प्रेरित कीजिए।

(9) समर्पण मन्त्र - भावार्थ

(निर्देश 1 क, ख, ग का पालन करते हुए वाचिक उच्चारण करें।)

भावार्थ:- हे ईश्वर दयानिधे! मैं अपने तन को, मन को, धन को, समस्त उत्तम कार्यों को आपको समर्पित करता हूँ। मुझे प्रेरणा दीजिए मैं अपने परिश्रम से एवं आपकी कृपा से धर्म, अर्थ,

काम, मोक्ष की प्राप्ति कर सकूँ।

(10) नमस्कार मन्त्र - भावार्थ

(निर्देश 1 क, ख, ग का पालन करते हुए वाचिक उच्चारण करें।)

भावार्थः- **हे प्रभो!** आप मुझे आनन्द दे रहे हैं, आरोग्यता दे रहे हैं, शुद्धि दे रहे हैं, सन्तोष दे रहे हैं, शान्ति दे रहे हैं। धैर्य, विनम्रता और सहनशीलता दे रहे हैं। **प्रभो!** मैं इसके लिए बारम्बार आपको हृदय से नमस्कार करता हूँ, धन्यवाद देता हूँ।

हे मेरे नाथ! यह आनन्द, आरोग्यता, शुद्धि, सन्तोष, शान्ति, धैर्य, विनम्रता, सहनशीलता सभी साधकों को दीजिए। सभी साधक केवल आपकी ही स्तुति, प्रार्थना, उपासना करें। एक आदर्श समाज का निर्माण करें।

(11) ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

इसके बाद (अपनी सामर्थ्य व समय की उपलब्धता के अनुसार) निम्न में से किसी एक का मानसिक जप करें/ ईश्वर का चिन्तन करें।

(1) ओ३म् जप

अथवा

(2) ओ३म् आनन्दम् जप

अथवा

(3) गायत्री मन्त्र जप

(4) ओ३म् सत्यम् जप

अथवा

प्रभु के निम्न गुणों का चिन्तन करें -

प्रभु आप -

आनन्द स्वरूप हैं, पवित्र हैं, दयालु हैं, न्यायकारी हैं, तपस्वी हैं, अभय हैं, दु:ख विनाशक हैं, सुखदायक हैं, प्राण रक्षक हैं, महान हैं।

प्रभु ! मुझे भी प्रेरणा दीजिए इन गुणों को मैं भी परिश्रम द्वारा ग्रहण कर सकूँ।

इसके बाद 1 या 2 वैदिक भजन का गायन वाचिक अथवा मानसिक रूप से करें।

परम ध्यान विधि

दिशा निर्देश :-

(1) इस विधि का प्रयोग केवल मानसिक उच्चारण/चिंतन द्वारा (ओ३म् जप, गायत्री मंत्र जप, अन्य वैदिक मन्त्र जप, सन्ध्या या ध्यान में) किया जाता है।

(2) इस विधि को कार्यान्वित (Implement) करने के लिए –

(i) ईश्वर, जीव (जीवात्मा), प्रकृति का वैदिक ज्ञान व उसमें पूर्ण आस्था होना आवश्यक है।

(ii) ईश्वर की कर्मफल व्यवस्था का न केवल ज्ञान होना चाहिए बल्कि उसमें साधक का पूर्ण विश्वास भी होना चाहिये।

(iii) पुस्तक में दिये गये सभी संकल्प, ओ३म्, गायत्री मंत्र, सन्ध्या के मन्त्र, अन्य वैदिक मन्त्र, उनका अर्थ व भावार्थ कंठस्थ होना चाहिए।

(iv) श्वसन क्रियायें, बाह्य व आन्तरिक कुम्भक, बाह्य प्राणायाम, आभ्यन्तर प्राणायाम तथा स्तम्भ वृत्ति प्राणायाम का पर्याप्त

व नियमित अभ्यास होना चाहिए।

(v) दिनचर्या में सात्विक भोजन व यम-नियम का पालन करना अनिवार्य है।

(vii) इस पुस्तक में बतायी गयी विभिन्न मन्त्र उच्चारण विधियों का एक या दो वर्ष तक अभ्यास होने के बाद ही परम ध्यान विधि द्वारा जप/सन्ध्या/ध्यान करना संभव है।

(vii) जिन साधकों को मंत्र कंठस्थ नहीं है वे मन्त्रों के भावार्थ का उच्चारण/चिंतन करके इस विधि का लाभ ले सकते हैं।

परम ध्यान विधि
(वैदिक मन्त्रों द्वारा)

(1) दोनों नेत्र कोमलता के साथ बन्द करके धारणा/मन को आज्ञा चक्र, हृदय प्रदेश, नाभि, मूलाधार या मन्त्र उच्चारण पर स्थिर करें।

(2) सुख आसन, सिद्धासन या अर्ध-सिद्धासन में बैठें।

(3) यदि उपरोक्त किसी आसन में बैठना संभव न हो तो बिना बाजु की कुर्सी या स्टूल पर भी बैठ सकते हैं।

(4) मेरूदण्ड (रीढ़/कमर/गर्दन) को सीधा रखें।

(5) तीन बार ओ३म् का मानसिक उच्चारण करें।

(6) प्रत्येक संकल्प का स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में मानसिक उच्चारण करें।

(7)(a) मन्त्र उच्चारण से पहले 2-3 सामान्य श्वास लें।

(b) तत्पश्चात् स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में गायत्री मन्त्र

का मानसिक उच्चारण करें।

(c) मन्त्र उच्चारण के समाप्त होने पर भी (कुछ सैकेण्ड के लिए यथाशक्ति स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनाये रखें। (यदि संभव हो, अन्यथा नहीं)

(d) इसके बाद 2–3 सूक्ष्म/सामान्य श्वास लेकर शरीर को सामान्य करें और

(e) अब पुनः स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनायें और उपरोक्त गायत्री मंत्र के अर्थ/भावार्थ का मानसिक उच्चारण करें। यदि भावार्थ लम्बा है तो बीच–बीच में 2–3 सामान्य/सूक्ष्म श्वास ले सकते हैं।

(f) भावार्थ/अर्थ के मानसिक उच्चारण समाप्त होने पर भी कुछ सैकण्ड के लिए यथाशक्ति स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति बनाये रखें। (यदि संभव हो–अन्यथा नहीं)।

(g) इसके बाद 2–3 सामान्य श्वास लेकर पुनः शरीर को सामान्य करें।

(h) इसके बाद अगले सभी मंत्रों का मानसिक उच्चारण व भावार्थ का चिंतन इसी प्रकार करते हैं।

(i) उपरोक्त विधि से एक वर्ष तक पर्याप्त अभ्यास के बाद मन्त्र की भावना साधक के अन्त:करण में पूर्णतया स्थापित हो जाती है और धीरे–धीरे मन्त्र का भावार्थ/भावना मन्त्र के मानसिक उच्चारण/चिंतन के साथ–साथ स्वतः चलता रहता है। अतः इसका अलग से उच्चारण करने की आवश्यकता नहीं होती है।

नोट :– (1) उपरोक्त विधि से इस पुस्तक में दिये गये ओ३म्,

गायत्री मंत्र अथवा अन्य वैदिक मंत्रों (स्तुति-प्रार्थना उपासना, सन्ध्या आदि) का अभ्यास प्रतिदिन प्रातः-सायं करते हैं।

(2) इस विधि से मन व शरीर की चंचलता धीरे-धीरे पूर्णतया समाप्त हो जाती है।

(3) ईश्वरीय आनन्द व शान्ति की अनुभूति होती है।

(4) इसके आगे की आध्यात्मिक प्रगति का अनुभव साधक का एक व्यक्तिगत विषय है।

परम ध्यान विधि
(मन्त्रों के भावार्थ द्वारा)

(1) दोनों नेत्र कोमलता के साथ बन्द करके धारणा/मन को आज्ञा चक्र, हृदय प्रदेश, नाभि, मूलाधार या मन्त्र उच्चारण पर स्थिर करें।

(2) सुख आसन, सिद्धासन या अर्ध-सिद्धासन में बैठें।

(3) यदि उपरोक्त किसी आसन में बैठना संभव न हो तो बिना बाजु की कुर्सी या स्टूल पर भी बैठ सकते हैं।

(4) मेरूदण्ड (रीढ़/कमर/गर्दन) को सीधा रखें।

(5) तीन बार ओ३म् का मानसिक उच्चारण विधि के अनुसार करें।

(6) प्रत्येक संकल्प का स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में मानसिक उच्चारण करें।

(7)(a)मन्त्र उच्चारण से पहले 2-3 सामान्य श्वास लें।

(b) अब गायत्री मंत्र का मानसिक उच्चारण स्तम्भवृत्ति प्राणायाम

की स्थिति में करें।

(c) इसके बाद 2–3 सामान्य श्वास लेकर मंत्र के अर्थ भावार्थ का उच्चारण मानसिक रूप में स्तम्भवृत्ति प्राणायाम की स्थिति में ही करते हैं। यदि भावार्थ बड़ा है तो बीच–बीच में 2–3 सामान्य श्वास ले सकते हैं।

(d) प्रत्येक मन्त्र के अर्थ भावार्थ का उच्चारण से पहले 2–3 सामान्य श्वास लेते हैं।

(f) भावार्थ के उच्चारण के समाप्त होने पर बाह्य कुम्भक (5–7 से0 के लिए) की स्थिति बनाये रखें (यदि संभव हो, अन्यथा नहीं)

(g) इसके बाद 2–3 सामान्य श्वास लेकर पुनः शरीर को सामान्य करते हैं और

(h) इसके बाद अगले मन्त्रों के भावार्थ का मानसिक उच्चारण/चिंतन इसी प्रकार करते हैं।

नोट :- (1) इस पुस्तक में दिये गये ओ३म्, गायत्री मंत्र अथवा अन्य वैदिक (स्तुति–प्रार्थना उपासना, सन्ध्या आदि) मन्त्रों के भावार्थ का अभ्यास प्रतिदिन प्रातः–सायं करें।

(2) इस विधि से मन व शरीर की चंचलता धीरे–धीरे पूर्णतया समाप्त हो जाती है।

(3) ईश्वरीय आनन्द व शान्ति की अनुभूति होती है।

(4) इसके आगे की आध्यात्मिक प्रगति का अनुभव साधक का एक व्यक्तिगत विषय है।

जप व ध्यान हेतु भजन

दिन भर अपने आपको धर्मनिष्ठ बनाये रखने के लिए जप, सन्ध्या और ध्यान से पहले बोलने वाला भजन

ओ३म्

हम प्रातःकाल में हे दाता!
तेरा ही चिन्तन करते हैं, तेरा ही ......
प्रभु! तेरा ही ध्यान करते हैं।

जीवन में हम बड़ी श्रद्धा से,
तेरे ही गीत गाते हैं। तेरे ही......
तेरी आज्ञाओं का पालन करते हैं।

प्रभु! तेरा प्रेम समाया है दिल में,
तेरे गुणों का चिन्तन करते हैं, तेरे गुणों का..
तेरे गुणों को धारण करते हैं।

तुझमें है जिसकी बड़ी श्रद्धा,
वो ही तेरी कृपा पाता है। वो ही तेरी .....
तेरी अनुभूति करता है।

हम प्रातःकाल में हे दाता!
तेरा ही चिन्तन करते हैं, तेरा ही ......
प्रभु! तेरा ही ध्यान करते हैं।

ईश्वर-भक्ति के भजन

ओ३म् महिमा

जीवन की घड़ियां वृथा न खो; ओम् जपो ओम् जपो।
चादर न लंबी तान के सो; ओम् जपो ओम् जपो।।1।।

ओम् ही सुख का सार है; जीवन है जीवन आधार है;
प्रीती न इसकी मन से तजो; ओम् जपो ओम् जपो।।2।।

मन की गति सम्भालिए, ईश्वर की ओर डालिये।
धोना जो चाहो जीवन को; ओम् जपो ओम् जपो।।3।।

चोला मिला है कर्म का, करने को सौदा धर्म का;
इसके सिवाय मार्ग न कोय, ओम् जपो ओम् जपो।।4।।

दुनिया में आकर क्या किया, कभी न प्रभु का नाम लिया।
अज्ञान की निद्रा बन्दे न सो; ओम् जपो ओम् जपो।।5।।

साथी बना ले ओम् को; मन में बिठा ले ओम् को
'देश' रहा क्यों भाग्य को रो; ओम् जपो ओम् जपो।।6।।

ओ३म् महिमा

ओ३म् है जग का नियन्ता, ओ३म् ही करतार है।
ओ३म् राजा न्यायकारी, ओ३म् भव भरतार है।।1।।
ओ३म् है जग का नियन्ता ....

ओ३म् गुरु सर्वज्ञ माता, ओ३म् वेदागार है।
ओ३म् जनिता शक्ति सागर, ओ३म् प्रेमागार है।।2।।
ओ३म् है जग का नियन्ता ....

ओ३म् सर्वेश्वर अभय है, ओ३म् सर्वाधार है।
ओ३म् अजरामर अनन्ता, ओ३म् जीवन सार है।।3।।
ओ३म् है जग का नियन्ता ....

ओ३म् प्रियतम नित्य सत्-चित ओ३म् सुख भंडार है।
ओ३म् अनुपम निर्विकारी, ओ३म् खल संहार है।।4।।
ओ३म् है जग का नियन्ता ....

ओ३म् आकृति रहित विभु है, ओ३म् अपरम्पार है।
ओ३म् करुणा कन्द शिवतम, ओ३म् दु:ख संहार है।।5।।

ईश महिमा

कण–कण में जो रमा है, हर दिल में है समाया।
उसकी उपासना ही कर्त्तव्य है बताया।।

दिल सोचता है खुद वो, कितना महान होगा।
इतना महान जिसने, संसार है बनाया।।
कण–कण में जो रमा है ....

देखो ये तन के पुर्जे, करते हैं काम कैसे।
जोड़ों के बीच कोई, कब्जा नहीं लगाया।।
कण–कण में जो रमा है ....

इक पल में रोशनी से, सारा जहान चमका।
सूरज का एक दीपक, आकाश में जलाया।।
कण–कण में जो रमा है ....

अब तक यह गोल धरती, चक्कर लगा रही है।
फिरकी बना के कैसी, तरकीब से घुमाया।।
कण–कण में जो रमा है ....

कठपुतलियों का हम ने, देखो अजब तमाशा।
छुप कर किसी ने सब को, संकेत से नचाया।।
कण–कण में जो रमा है ....

हर वक्त बन के साथी, रहता है साथ सब के।
नादान 'पथिक' उसको, तू जानने ना पाया।।
कण–कण में जो रमा है ....

ईश महिमा

ईश्वर से महान, कोई और नहीं है।
उस प्रभु के समान, कोई और नहीं है।।
जग रचता पालन करता, वही एक संहर्ता है।
सृष्टि का सब वही, नियमाक एक नियन्ता है।।
समर्थ शक्तिमान कोई और नहीं है।।
ईश्वर से महान्.....।।
अखिल विश्व में व्यापक है, वो है सब जगह समाया।
जग में रहता किन्तु, जगत के बन्धन में ना आया।।
सर्वत्र विद्यमान कोई और नहीं है।।
ईश्वर से महान्.....।।
सभी सत्य विद्याओं का, केवल वो ही दाता है।
आदि सृष्टि के मानव को, वो ही बोध कराता है।।
पूरा ज्ञानवान कोई और नहीं है।।
ईश्वर से महान्.....।।
कैसी अद्भुत रचना, उसकी देती है दिखलाई।
सूर्य चन्द्र जैसी उसने, यह अनुपम ज्योति जलाई।।
स्वयं ज्योतिष्मान कोई और नहीं है।।
ईश्वर से महान्.....।।
सब प्राणियों को कर्मों का, देता फल बराबर है।
रहता है निष्पक्ष उसे, ना कभी किसी का डर है।।
दयालु न्यायवान कोई और नहीं है।।
ईश्वर से महान्.....।।
ठीक-ठीक उसका वर्णन, 'कमलेश' कौन कर पाये।
अनुभव में आता वह केवल, शास्त्र यही बतलाये।।
प्राणियों का प्राण कोई और नहीं है।।
ईश्वर से महान्.....।।

प्रार्थना

प्रभो ! बुद्धि निर्मल हमारी बना दो।
पिता, अपनी भक्ति का अमृत पिला दो।।

न मन में हमारे कभी हो अन्धेरा
न अज्ञान हो न अविद्या का डेरा
सदा आत्मा में हो प्रकाश तेरा
हमें धर्म की राह चलना सिखा दो।
प्रभु ! बुद्धि निर्मल हमारी बना दो।।1।।

तेरे चरणों में ध्यान अपना लगायें,
न मन-रूपी शीशे को मैला बनायें,
कभी सत्य-मार्ग से पग न हटायें
सदाचार का पाठ हमको पढ़ा दो।
प्रभु ! बुद्धि निर्मल हमारी बना दो।।2।।

न 'नंदलाल' ने भक्ति में मन लगाया
विषय-वासना में है जीवन गँवाया।
शरमसार होकर तेरे द्वार आया।
भंवर में है किश्ती, किनारे लगा दो।

प्रार्थना

मेरा उद्देश्य हो प्रभु, आज्ञा को तेरी पालना।
कर कर कमाई धर्म की, अर्पण तेरे कर डालना।।
मानव के नाते हे पिता, जाऊँ कहीं जो भूल मैं।
इतनी विनय है आपसे, बन कर सखा संभालना।।
मेरा उद्देश्य हो प्रभु, आज्ञा को ....

जितने भी यज्ञ कर्म हों, श्रद्धा व प्रेम से करूँ।
आएं अभद्र भाव जो, उनको सदा ही टालना।।
मेरा उद्देश्य हो प्रभु, आज्ञा को ....

रक्षा तो मेरी तू करे, रक्षा में तेरी मैं रहूँ।
अपने गुणों के सांचे में, जीवन को मेरे ढालना।।
मेरा उद्देश्य हो प्रभु, आज्ञा को ....

मृत्यु का मुझको भय न हो, मांगूँ यही वरदान मैं।
बुद्धि मेधावी की मेरी, झोली में भिक्षा डालना।
मेरा उद्देश्य हो प्रभु, आज्ञा को ....

आस्था

प्रभु सारी दुनियाँ से, ऊँची तेरी शान है।
कितना महान् है तू, कितना महान है।।

यहाँ वहाँ कोने कोने, तू ही मशहूर है।
निकट से निकट और, दूर से भी दूर है।
तुझमें समाया हुआ, सकल जहान है।।
प्रभु सारी दुनियाँ से ऊँची ....

तू ही एक मालिक है, सारी कायनात का।
फूलों भरी क्यारियों का, तारों की जमात का।
तेरी ही जमीन है ये, तेरा आसमान है।।
प्रभु सारी दुनियाँ से ऊँची ....

सबने जो रंग देखे, सभी तेरे रंग हैं।
जग में अनेक तेरे, पालन के ढंग हैं।
तुझको तो छोटे बड़े, सबका ही ध्यान है।।
प्रभु सारी दुनियाँ से ऊँची ....

जितने भी दुनियाँ में, जीव देहधारी है।
सभी तेरे प्यार के, समान अधिकारी हैं।
'पथिक' सभी को तूने, दिया वरदान है।।

प्रभु सारी दुनियाँ से, ऊँची तेरी शान है।
कितना महान् है तू, कितना महान है।।

आस्था

जगत में चिन्ता मिटी उसी की, जो तेरे चरणों में आ चुके हैं।
वही हमेशा हरे भरे हैं, जो तेरे चरणों में आ चुके हैं।।

ना पाया तुझको वजीर बनकर, ना पाया तुझको फकीर बन कर।
उन्हीं को दर्शन हुए हैं तेरे, जो तेरे चरणों में आ चुके हैं।।

ना पाया तुझको किसी ने बल से, ना पाया तुझको किसी ने छल से।
वही परम पद को पा गए हैं, जो तेरे चरणों में आ चुके हैं।।

किसी ने जग में करी भलाई, किसी ने जग में करी बुराई।
वही सुमारग पर चल पड़े हैं, जो तेरे चरणों में आ चुके हैं।।

प्रभु जी विनती सुनो हमारी, बनाओ बिगड़ी दशा हमारी।
निराश्रितों के हो आसरा तुम, तुम्हारे चरणों में आ चुके हैं।।

जगत में चिन्ता मिटी उसी की, जो तेरे चरणों में आ चुके हैं।
वही हमेशा हरे भरे हैं, जो तेरे चरणों में आ चुके हैं।।

भक्ति

एक बार भजन करले, मुक्ति का यतन कर ले।
कट जायेंगे जन्म-मरण, प्रभु का चिन्तन कर ले।।
एक बार भजन कर ले ....

यह मानव का चोला, हर बार नहीं मिलता।
जो गिर गया डाली से, वो फूल नहीं खिलता।।
ये मौका जीवन का, गुलजार चमन कर ले।।
एक बार भजन कर ले ....

नर इन कानों से तू, सुन ऋषियों की वाणी।
मन को ठहरा करके, बन जा आत्मज्ञानी।
जिह्वा तो चले मुख में, अब ओ३म् जपन कर ले।।
एक बार भजन कर ले ....

इस मैली चादर में, हैं दाग लगे कितने।
पर ज्ञान की साबुन में, हैं झाग भरे इतने।
धुल जाएगी सब स्याही, उजला तन मन कर ले।।
एक बार भजन कर ले ....

वेदों में गूँज रहीं, मंत्रों की मधुर ध्वनियाँ।
बलिदान के इस युग में, तू गूँथ नई कड़ियाँ।
अब तो प्रभु के आगे, नीची गर्दन कर ले।।
एक बार भजन कर ले ....

भक्ति

ईश्वर तुम्हीं दया करो, तुम बिन हमारा कौन है।
दुर्बलता दीनता हरो, तुम बिन हमारा कौन है।
माता तू ही पिता तू ही, बंधु तू ही सखा तू ही।
तू ही हमारा आसरा, तुम बिन हमारा कौन है।।1।।
ईश्वर तुम्हीं दया करो ....

जग को रचाने वाला तू, दुख को मिटाने वाला तू,
बिगड़ी बनाने वाला तू, तुम बिन हमारा कौन है।।2।।
ईश्वर तुम्हीं दया करो ....

तेरी दया को छोड़कर, कुछ भी नहीं हमें खबर।
जायें तो जायें हम किधर, तुम बिन हमारा कौन है।।3।।
ईश्वर तुम्हीं दया करो ....

तेरी लगन तेरा मनन, भक्ति तेरी तेरा भजन,
तेरी ही आते हम शरण, तुम बिन हमारा कौन है।।4।।
ईश्वर तुम्हीं दया करो ....

पुत्र हैं हम सभी तेरे, तू है पिता परमात्मा।
श्रेष्ठ मार्ग पर चला, तुम बिन हमारा कौन है।।5।।
ईश्वर तुम्हीं दया करो ....

सत्संग

सत्संग ही स्वर्ग का द्वार है।
चारों वेदों का यही सार है।।
सत्संग ही मानव को उठाता है,
बुरी संगत से बचाता है।
दूर हो जाता हर विकार है,
मन में जो आता सद् विचार है।।
सत्संग ही स्वर्ग का ......

जीवन में यश वह पाता है,
मान और अपमान त्याग जाता है।
करते रहना बस परोपकार है,
इससे ही होगा बेड़ा पार है।।
सत्संग ही स्वर्ग का ......

प्रभु भक्ति से शक्ति मिलती है,
दिल की मुरझाई कली खिलती है।
ईश्वर की माया अपरम्पार है,
क्योंकि वो प्रभु सर्वाधार है।।
सत्संग ही स्वर्ग का ......

नर–तन शुभ कर्मों का फल है,
मिलना इसका नहीं सरल है।
'सत्यम्' का सही ये विचार है,
ओ३म् ही सबका प्राणाधार है।।

सत्संग

जहाँ सत्संग होता है, वहाँ पर नित्य जाओ तुम।
हमें फुरसत नहीं कहकर, यह मौका मत गंवाओं तुम।
अरे सत्संग करने की, ना कोई उम्र होती है,
अमर ये दीप है इसकी, कभी बुझती ना ज्योति है,
इसी ज्योति से जीवन की, सदा ज्योति जलाओ तुम।
जहाँ सत्संग होता है................

जरा अनुभव कर देखो, कि क्या बदलाव आया है,
कपट सब दूर होता है, हृदय निर्मल हो जाता है।
इन्हीं सत्संगियों के संग, सदा जीवन बिताओ तुम।
जहाँ सत्संग होता है................

करके एकाग्र मन को तुम, जाके सत्संग को सुनना।
होके तल्लीन भावों के, सुनहरे फूलों को चुनना।
इसी सत्संग सागर में, सदा डुबकी लगाओ तुम।
हमें फुरसत नहीं कहकर, यह मौका मत गंवाओ तुम।।
जहाँ सत्संग होता है................

चढ़े इक बार ना फिर उतरे, सत्संग का ये रंग।
बिना प्रभु की कृपा मिलता नहीं सत्संगियों का संग।
गुरु संतों की सेवा कर, सदा सान्निध्य पाओ तुम।
जहाँ सत्संग होता है, वहाँ पर नित्य जाओ तुम।
हमें फुरसत नहीं कहकर, यह मौका मत गंवाओं तुम।

कृतज्ञता

मुझे तूने मालिक बहुत कुछ दिया है।
तेरा शुक्रिया है, तेरा शुक्रिया है।।
मुझे तूने मालिक ....
ना मिलती अगर दी हुई दात तेरी,
तो क्या थी जमाने में औकात मेरी,
यह बन्दा तो तेरे सहारे जिया है।।
तेरा शुक्रिया है तेरा ....
यह जायदाद दी है ये औलाद दी है,
मुसीबत में हर वक्त इमदाद की है,
तेरा ही दिया मैंने खाया पिया है।।
तेरा शुक्रिया है तेरा ....
मेरा ही नहीं है, सभी का तू दाता
सभी को सभी कुछ है देता दिलाता
जो खाली था दामन, वह तूने भरा है
तेरा शुक्रिया है तेरा ....
मेरा भूल जाना तेरा ना भूलाना,
तेरी रहमतों का कहाँ है ठिकाना,
तेरी इस मोहब्बत ने पागल किया है।।
तेरा शुक्रिया है तेरा ....
तेरी बन्दगी से मैं बन्दा हूँ मालिक,
तेरे ही करम से मैं जिन्दा हूँ मालिक,
तुम्हीं ने तो जीने के काबिल किया है।।
तेरा शुक्रिया है तेरा ....

कृतज्ञता

तेरे नाम का सुमिरन करके, मेरे मन में सुख भर आया।
तेरी कृपा को मैंने पाया, तेरी दया को मैंने पाया।।1।।
तेरी कृपा को मैंने पाया ....

दुनिया की ठोकर खाकर, जब हुआ कभी बेसहारा।
न पाकर अपना कोई, तब मैंने तुम्हें पुकारा।
हे नाथ मेरे सिर ऊपर, तूने अमृत बरसाया।।2।।
तेरी कृपा को मैंने पाया ....

तू संग में था नित मेरे, ये नैना देख न पाए।
चंचल माया के रंग में, ये नैन रहे उलझाए।
जितनी भी बार गिरा हूँ, तूने पग-पग मुझे उठाया।।3।।
तेरी कृपा को मैंने पाया ....

भवसागर की लहरों में, भटकी मेरी जब नैया।
तट छूना भी मुश्किल था, नहीं दीखे कोई खिवैया।
तू लहर बना सागर की, मेरी नाव किनारे लाया।।4।।
तेरी कृपा को मैंने पाया ....

हर तरफ तुम्हीं हो मेरे, हर तरफ तेरा उजियारा।
निर्लेप प्रभु जी मेरे, हर रूप में रंग तुम्हारा।
तेरी शरण में दाता, मैंने तेरा ही तुमको चढ़ाया।।5।।

वैराग्य

छोड़कर संसार, जब तू जाएगा,
कोई ना साथी, तेरा साथ निभाएगा।।
गर प्रभु का भजन किया ना, सत्संग किया ना दो घड़ियाँ।
यमदूत लगाकर तुझको, ले जाएगा हथकड़ियाँ,
कौन छुड़ाएगा।।
कोई न साथी, तेरा साथ ....
क्यों करता मेरा मेरा, ये दुनियाँ रैन बसेरा।
यहाँ कोई नहीं है तेरा, है चन्द दिनों का डेरा,
हंस उड़ जाऐगा।।
कोई न साथी, तेरा साथ ....
इस पेट भरन की खातिर, तू पाप कमाता निशदिन।
शमशान में लकड़ी रखकर, तुझे आग लगेगी इक दिन,
खाक हो जाएगा।।
कोई न साथी, तेरा साथ ....
सत्संग की है ये गंगा, तू इसमें लगा ले गोता।
वरना इस दुनियाँ से, जाएगा इक दिन रोता,
बाद पछताऐगा।।
कोई न साथी, तेरा साथ ....
अब प्रभु चरणों में निशदिन, तू प्रीत लगा ले बन्दे।
कट जाऐंगे तेरे ये सब, जन्म मरण के फन्दे,
पार हो जाएगा।।
कोई न साथी, तेरा साथ ....

वैराग्य

कोई दुनियाँ में आता है, कोई दुनियाँ से जाता है।
ये चक्कर रूक नहीं सकता, प्रभु इसको चलाता है।।
भलाई कर भला होगा, बुराई कर बुरा होगा।
जो जैसा बीज बोता है, वो फल वैसा ही पाता है।।
कोई दुनियाँ में आता है कोई...........
प्रभु का ध्यान करने से, सभी दु:ख दूर हो जाएं।
कभी सुख पा नहीं सकता, जो ईश्वर को भुलाता है।।
कोई दुनियाँ में आता है कोई...........
वो कण-कण में समाया है, नजर लेकिन नहीं आता।
वही सृष्टि का कर्त्ता है, वही मुक्ति का दाता है।।
कोई दुनियाँ में आता है कोई...........
जिसे हर दम मुनि योगी, तपस्वी याद करते हैं।
उसी के ही मगन मन से, 'पथिक' ये गीत गाता है।।
कोई दुनियाँ में आता है कोई...........

सुविचार

अंतवन्त: इमे देहा:

सभी शरीर नाशवान् होते हैं।

शिक्षा

ईश्वर को ढूँढ़ने का वैदिक स्वरूप क्या है।
अनजान है यह दुनियां, किसी को खबर नहीं है।
तप–त्याग भावना से, निष्काम काम करना,
ऊँचे चरित्र वाला इन्सान देवता है।
ईश्वर को ढूँढ़ने का वैदिक ....
जब हो प्रभु से मिलना, इच्छा हो दर्शनों की,
इसका सही तरीका सन्ध्या उपासना है।
ईश्वर को ढूँढ़ने का वैदिक ....
अन्त:करण शुद्ध कर ले और शरीर निर्मल,
उसके समीप जाना ऋषियों का रास्ता है।
ईश्वर को ढूँढ़ने का वैदिक ....
एकान्त मन हो, घर हो या नदी किनारे,
उसका जप निरन्तर कण–कण में जो बसा है।
ईश्वर को ढूँढ़ने का वैदिक ....
यम नियमों का निभाना, कर्तव्य नित्य मानों,
इसके बगैर कोई रास्ता न दूसरा है।
ईश्वर को ढूँढ़ने का वैदिक ....
तप ध्यान मग्न होके ऐसी लगे समाधि,
यह भी पथिक न समझे, संसार चीज क्या है।
ईश्वर को ढूँढ़ने का वैदिक स्वरूप क्या है।
अनजान है यह दुनियां, किसी को नहीं खबर है।

शिक्षा

ईश्वर का गुणगान किया कर, कष्ट और क्लेश मिटाने को।
जीवन की ये नाव मिली तुझे, भव सागर तर जाने को।।
ईश्वर का गुणगान किया कर.............

विश्व बगीचे के माली की, रचना प्यारी प्यारी है।
रंग बिरंगे फूल हैं इसमें, खुशबू न्यारी न्यारी है।
अन्त नहीं बेअन्त है माया, कह गये सन्त जमाने को।।
ईश्वर का गुणगान किया कर.............

उस दाता ने हाथ दिये हैं, नेक कमाई कर प्यारे।
इन अपने पावन पाँवों को, पावन पग पर धर प्यारे।
नुस्खा है यह इस दुनियाँ में, जीवन सफल बनाने को।।
ईश्वर का गुणगान किया कर.............

दर्द पराया देख के तुझको, दर्द उठे अपने तन में।
हर्षित को लख हर्ष मनाए, भावना भर दे जन मन में।
यत्न किया पतझड़ में भी, मधुर बसन्त खिलाने को।।
ईश्वर का गुणगान किया कर.............

सुख की शीतल छाया कर दे, दु:खिया जन की कुटिया में।
अपने घर में पड़ा रहा जो, आलसी बन कर खटिया में।
मानव चोला फिर न मिलेगा, तुझको मौज उड़ाने को।।
ईश्वर का गुणगान किया कर.............

परमेश्वर का भक्त वही जिसने, शुभ गुण जीवन में धारे।
पाप के जहरीले कीटाणु, सब चुन-चुन करके मारे।
'हंस' तेरा मन मन्दिर है, भक्ति की ज्योति जलाने को।।
ईश्वर का गुणगान किया कर.............

चेतावनी

उस प्रभु की है कृपा बड़ी, याद कर ले घड़ी दो घड़ी।
घण्टी बज जाए कब कूच की, मौत हरदम सिरहाने खड़ी।।

किन्हीं शुभ कर्मों का फल है ये, तुझे मानव का चोला मिला।
जो आया है जायेगा वो, बन्द होगा ना ये सिलसिला।
वेद की कहती इक इक कड़ी।।
याद कर ले घड़ी दो घड़ी ....
इस जवानी पे इतरा ना तू, ये बातों बातों में मुक जाएगी।
उभरा सीना सिकुड़ जाऐगा, और कमर तेरी झुक जाएगी।
टेक कर के चलेगा छड़ी।।
याद कर ले घड़ी दो घड़ी ....
जो करना है ले आज कर, कुछ खबर प्यारे कल की नहीं।
मानव चोले को कर ले सफल, ढील दे इसमें पल की नहीं।
टूट श्वासों की जाऐ लड़ी।
याद कर ले घड़ी दो घड़ी ....
भौतिकवाद चकाचौंध में, भूल प्रभु को ना मतीमन्द तू।
सच्चिदानन्द सुखकन्द की, आ शरण में ले आनन्द तू।
वीर 'कवि' भागे विपदा अड़ी।।
याद कर ले घड़ी दो घड़ी ....

अध्यात्म

सोचो उस प्रभु सर्वव्यापी का, अवतार भला कैसे होगा।
जिसका कोई आकार नहीं, साकार भला कैसे होगा।

वेद और शास्त्र आर्ष ग्रन्थ, सब इसका खण्डन करते हैं,
बिन युक्ति और प्रमाणों के, स्वीकार भला कैसे होगा।

धोखे में साधारण जनता को, डाला है पाखण्डी लोगों ने,
लम्बे अरसे तक धोखे का, व्यापार भला कैसे होगा।

वक्ता जहाँ मिथ्याभाषी हो, हठधर्मी से ले काम सदा,
बतलाओ भोली जनता का, उद्धार भला कैसे होगा।

जब स्वयं वेद यह कहते हैं, ईश्वर अवतार नहीं लेता,
फिर "देश" सच्चाई का तुझको, इन्कार भला कैसे होगा।

सुविचार

असतो मा सद् गमय।

हे ईश्वर! मुझे असत् से दूर कर।

सत् की ओर ले चल।

आत्म-निरीक्षण

हे प्रभु वर दीजिये, धारण करें सन्तोष हम,
दूसरों के गुण निहारें, और अपने दोष हम।
सत्य शुद्धाचार, सद्व्यवहार के होवें धनी,
शुभ गुणों से कर सकें, भरपूर अपना कोष हम।
हे प्रभु वर दीजिए, धारण करें ....
हो सदा निःस्वार्थ मन, अभिमान कोसों दूर हो,
मन वचन और कर्म से, होवें सभी निर्दोष हम।
हे प्रभु वर दीजिए, धारण करें ....
देश जाति धर्म रक्षा, के हम प्रहरी बनें,
और सजग होकर रहें, न हों कभी मदहोश हम।
हे प्रभु वर दीजिए, धारण करें ....
काँप जायें वेद निंदक, नास्तिकों की टोलियाँ,
ऊँचे स्वर से बोलें, वैदिक धर्म का जयघोष हम।
हे प्रभु वर दीजिए, धारण करें ....
दुर्गुणों को छोड़ देवें, अपना मन हम जीत लें,
इन्द्रियों के दमन में, पूरा दिखायें जोश हम।

ध्यान

कर ध्यान उस ईश्वर का, जिसने है किया उत्पन्न तुमको।
धन्यवाद करो परमेश्वर का, खाने को दिया जिसने अन्न तुमको।।

तुम पापी हो, अपराधी हो, जो ध्यान नहीं उसका करते।
वह दयालु है उसने है दिया, तन भी, मन भी और धन तुमको।।
कर ध्यान उस ईश्वर का ....
वह है माता-पिता है, दाता है, त्राता है सारे जीवों का।
हम ध्यान करें उस स्वामी का, चाहिए करना यह प्रण तुमको।।
कर ध्यान उस ईश्वर का ....
निज जीवन को करना चाहो, जो सफल जगत में ऐ मित्रों।
तो प्रातः उठकर श्रद्धा से, चाहिए गाना प्रभु-गुण तुमको।।
कर ध्यान उस ईश्वर का ....
गर पामर पतित भी चाहे तो, आओ तुम शरण में ईश्वर की।
वह शरणागत प्रतिपालक है, प्रभु कर देंगे पावन तुमको।।
कर ध्यान उस ईश्वर का ....
ऐ 'पाल' पुकारो प्रेम सहित सब, परम पिता उस प्रभुवर को।
सुन पुत्रों के इस क्रन्दन को, आ पकड़ेंगे भगवान् तुमको।।
कर ध्यान उस ईश्वर का ....

सृष्टि रचना

सत्ता तुम्हारी भगवन् जग में समा रही है।
तेरी दया सुगन्धि हर गुल से आ रही है।।1।।

रवि, चन्द्र और तारे, तूने बनाये सारे।
इन सबमें ज्योति तेरी, इक जगमगा रही है।।2।।
सत्ता तुम्हारी भगवन, जग में ....

विस्तृत वसुन्धरा पर सागर बहाये तूने।
वह जिनकी मोतियों से, अब चमचमा रही है।।3।।
सत्ता तुम्हारी भगवन, जग में ....

दिन-रात, प्रातः-सायं मध्यान्ह भी बनाये।
हर ऋतु पलट-पलट कर करतब दिखा रही है।।4।।
सत्ता तुम्हारी भगवन, जग में ....

सुन्दर सुगन्धि वाले, पुष्पों में रंग है तेरा।
यह ध्यान फूल-पत्ती, तेरा दिला रही है।।5।।
सत्ता तुम्हारी भगवन, जग में ....

हे ब्रह्म विश्व कर्ता, वर्णन हो तेरा कैसे।
जल-थल में तेरी महिमा, हे ईश! छा रही है।।6।।
सत्ता तुम्हारी भगवन, जग में ....

वेद

जीवन सफल बनाना है तो, वेद पढ़ो और वेद पढ़ाओ।
नर तन का लाभ उठाना है तो, वेद पढ़ो और वेद पढ़ाओ।।
जीवन सफल बनाना है तो ....

वेद प्रभु की अमृत वाणी, पावन सुखद सदा कल्याणी।
धन बल यश को पाना है तो, वेद पढ़ो और वेद पढ़ाओ।।
जीवन सफल बनाना है तो ....

चार वेद सद्ज्ञान-ग्राम हैं, ऋग्, यजु, साम, अथर्व नाम हैं।
सोया भाग्य जगाना है तो, वेद पढ़ो और वेद पढ़ाओ।।
जीवन सफल बनाना है तो ....

सूरज चढ़े अंधेरा जाए, ज्ञान बढ़े अज्ञान मिटाए।
मन-मंदिर चमकाना है तो, वेद पढ़ो और वेद पढ़ाओ।।
जीवन सफल बनाना है तो ....

जीवन-धारा सरस बहेगी, कोई समस्या नहीं रहेगी।
उलझन को सुलझाना है तो, वेद पढ़ो और वेद पढ़ाओ।।
जीवन सफल बनाना है तो ....

ऊँच-नीच और जात-पाँत को, भेद-भाव और छूत-छात को।
जड़ से मार मिटाना है तो, वेद पढ़ो और वेद पढ़ाओ।।
जीवन सफल बनाना है तो ....

मानवता बस यहीं मिलेगी, और कहीं पर नहीं मिलेगी।
'पथिक' सत्य अपनाना है तो, वेद पढ़ो और वेद पढ़ाओ।।
जीवन सफल बनाना है तो ....

कर्म

ऐसी कमाई कर लो, कि जो संग जा सके।
मुश्किल पड़े तो राह में, कुछ काम आ सके।
संसार में आता कोई, साथी नजर नहीं।
बस नाम के साथी हैं, यह साथी मगर नहीं।
साथी बनाओ उसको, जो साथी कहा सके।।1।।
ऐसी कमाई कर लो ....

पापों में सदा मन को, लगाते चले गये।
बंदियों का ही सामान, बढ़ाते चले गये।
लेकिन कभी न धर्म को, अपना बना सके।।2।।
ऐसी कमाई कर लो ....

दुनिया की चकाचौंध में, जीवन बिता दिया।
अनमोल समय पाके भी, यों ही गंवा दिया।
मानव वही है इसका जो, फायदा उठा सके।।3।।
ऐसी कमाई कर लो ....

चिन्ता की बात नहीं तो, चिन्तन से काम लो।
शुभ कर्म करो अब से ही, ईश्वर का नाम लो।
सम्भव है 'पथिक' आपके, बन्धन छुड़ा सके।।4।।
ऐसी कमाई कर लो ....

यज्ञ

यज्ञ जीवन का हमारे, श्रेष्ठ सुन्दर कर्म है।
यज्ञ का करना कराना, आर्यों का धर्म है।।1।।

यज्ञ से दिशा हो सुगन्धित, शान्त हो वातावरण।
यज्ञ से सद्ज्ञान हो, हो यज्ञ से शुद्धाचरण।।2।।

यज्ञ से हो शुद्ध काया, व्याधियाँ सब नष्ट हों।
यज्ञ से सुख सम्पदा हों, दूर सारे कष्ट हों।।4।।

यज्ञ से दुष्काल मिटते, यज्ञ से जल-वृष्टि हो।
यज्ञ से धन-धान्य हो, बहु भांति सुखमय सृष्टि हो।।4।।

यज्ञ है प्रिय मोक्षदाता, यज्ञ शक्ति अनूप है।
यज्ञमय यह विश्व है, और विश्व यज्ञ स्वरूप है।।5।।

यज्ञमय अखिलेश! ऐसी, आप अनुकम्पा करें।
यज्ञ के प्रति आर्य जनता, में अमित श्रद्धा भरें।।6।।

यज्ञ-पुण्य-प्रकाश से, सब पाप-ताप-तिमिर हटे,
यज्ञ-नौका से अगम, संसार सागर को तरें।।7।।

परोपकार

है वह सच्चा इन्सान, जो किसी के काम आता है।
दु:खी होता दु:खी को देख, आँसू बहाता है।
विषय और वासना में ही, समय अपना गँवाये जो।
कमाये पाप से दौलत, बुराईयों में लुटाये जो।
वह नर इंसानियत के नाम पर, धब्बा लगाता है।।
है वह सच्चा इन्सान जो किसी ....

हजारों आदमी बिन औषधि, बिन अन्न मरते हैं।
न तन पर उनके हैं वस्त्र, न बच्चे उनके पढ़ते हैं।
है वह धनवान सच्चा जो, दु:खी के दु:ख मिटाता है।।
है वह सच्चा इन्सान जो किसी ....

न भाई-बन्धु और बेटे, न पत्नी साथ जायेगी।
कमाई पाप की हरगिज, न तेरे काम आयेगी।
धर्म है एक साथी अन्त में, जो काम आता है।।
है वह सच्चा इन्सान जो किसी ....

धर्म की राह में, तन, मन व धन अपना लुटाये जो।
ऋषिवर की तरह संसार-भर में नाम पाये जो।
उसका नाम फिर, इतिहास के पन्नों में आता है।।
है वह सच्चा इन्सान जो किसी ....

तेरी बातों से ही 'नन्दलाल' बेड़ा न पार होगा।
केवल गीतों के लिखने से, तेरा उद्धार न होगा।
वह होगा पार-तन, मन, धन-धर्म पर जो लुटाता है।।

दान

डरे हुए को अभय दान दो,
भूखों को अनाज का दान।
प्यासे को जल दान करो,
अपमानित को आदर सम्मान।।1।।

विद्यादान करो अनपढ़ को,
विपद् ग्रस्त को आश्रय दान।
वस्त्र हीन को वस्त्र दान दो,
रोगी को दो औषधि दान।।2।।

धर्म रहित को धर्म सिखाओ,
शोकातुर को धीरज दान।
भूले को सन्मार्ग बता दो,
गृह विहीन को दो गृह दान।।3।।

कर्म करो निष्काम भाव से,
मन में कभी न हो अभिमान।
अपने सम सब ही को मानो,
फिर किस पर किसका अहसान।।4।।

इन पावन फूलों से प्रभु का,
करता है जो अर्चन ध्यान।
निश्चय जानो हृदय पटल में,
प्रकट होते हैं भगवान्।।5।।

सुख-दुःख

दुनिया वालों पढ़कर देखो, दुनियाँ खुली किताब है।
हर प्राणी के हर सवाल का, मिलता यहीं जवाब है।
दुनिया वालों पढ़कर देखो, दुनियाँ ....
इस दुनिया में ही मिलता है, एक सबक लासानी।
प्रभु दूध का दूध बनाता, और पानी का पानी।
भले-बुरे सबके कर्मों का, उसके पास हिसाब है।
दुनिया वालों पढ़कर देखो, दुनियाँ ....
कर्म-क्षेत्र में हर प्राणी का, इम्तिहान यहाँ होता है।
जब निकले परिणाम, कोई हँसता कोई रोता है।
किसी का पर्चा ठीक हुआ, तो किसी का हुआ खराब है।
दुनिया वालों पढ़कर देखो, दुनियाँ ....
एक सुखी और एक दुःखी, बन पैदा हुआ जन्म से।
अन्तर क्यों है अभी तो दोनों, वाकिफ नहीं करम से।
पूर्वजन्म के पुण्य-पाप का फल ही मिला जनाब है।
दुनिया वालों पढ़कर देखो, दुनियाँ ....
यहाँ हमेशा परमेश्वर का न्याय-चक्र है चलता।
वह अपने निश्चित नियमों को हरगिज नहीं बदलता।
'पथिक' धतूरे की टहनी पर खिलता नहीं गुलाब है।

जन्म-मरण

चली जा रही है, यह जीवन की रेल।
समझकर खिलौना, इसे यों ना खेल।।
कुशल कारीगर ने है, इसको बनाया।
बड़ी अकलमन्दी से, है इसको चलाया।
पड़े इसके इंजन में कर्मों का तेल।।
चली जा रही है, यह जीवन ....
किसी को चढ़ावे, किसी को उतारे।
घड़ी दो घड़ी के, मुसाफिर हैं सारे।।
यहीं पर जुदाई, यहीं पर हो मेल।।
चली जा रही है, यह जीवन ....
जरा-सी खराबी, अगर इसमें आवे।
कदम एक भी यह, सरकने न पावे।।
सदा के लिए, एक पल में हो फेल।।
चली जा रही है, यह जीवन ....
न अपनी खुशी से, यहाँ लोग आये।
मगर सबने आकर, यहाँ दिन बिताये।।
कोई समझे मंदिर, कोई समझे जेल।।
चली जा रही है, यह जीवन ....
रहे कुछ सफर भर, में रोते-चिल्लाते।
मगर कुछ महापुरुष, हँसते-हँसाते।।
गये हर मुसीबत को, हिम्मत से झेल।।
चली जा रही है, यह जीवन ....
'पथिक' रेलगाड़ी पे जो भी चढ़ा है।
कहीं न कहीं पर, तउतरना पड़ा है।।
समय ने डाली है, सभी को नकेल।।
चली जा रही है, यह जीवन ....

आर्य समाज क्या मानता है?

1. एक निराकार ईश्वर की उपासना, ईश्वर अवतार नहीं लेता है तथा ईश्वर का मुख्य नाम ''ओ३म्'' है।
2. वेद सत्य-धर्म पुस्तक है, वेद पढ़ने-पढ़ाने, सुनने और सुनाने का अधिकार मानव-मात्र को है।
3. त्रैतवाद-ईश्वर, जीव, प्रकृति तीनों अनादि हैं। ईश्वर और जीव अलग-अलग हैं। संसार भ्रान्ति नहीं सत्य है तथा यह मानव की कर्मस्थली है।
4. आश्रम-व्यवस्था-ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं सन्यास। आश्रम-व्यवस्था श्रेष्ठ जीवन का आधार है।
5. वर्ण-व्यवस्था-ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। शूद्र समाज का ही अंग है, जन्म से ऊँच-नीच का भेद नहीं है, गुण कर्म व स्वभाव से वर्ण-व्यवस्था की मान्यता है। यही वेद से प्रतिपादित है।
6. पंच महायज्ञ-ब्रह्मयज्ञ (वैदिक सन्ध्या), देवयज्ञ (हवन), पितृयज्ञ, बलिवैश्वदेवयज्ञ एवं अतिथि यज्ञ। इनके अनुष्ठान से परिवार स्वर्ग बनता है।
7. नारी-सम्मान-बाल विवाह व अनमेल विवाह निषेध, विधवा-विवाह को प्रोत्साहन एवं स्त्री-शिक्षा का विस्तार। यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
8. अन्य मतावलम्बियों का शुद्धिकरण द्वारा प्रवेश व स्वागत। वसुधैव कुटुम्बकम् में विश्वास।
9. पुरुषार्थ, पुनर्जन्मवाद एवं वैदिक दर्शन को ही मान्यता। वैदिक दर्शन ही आस्तिक दर्शन हैं।

10. भक्ष्याभक्ष्य-मानव के लिए शाकाहारी भोजन ही सर्वश्रेष्ठ है।
11. जीवित माता-पिता एवं वृद्धों की सेवा में तत्पर रहना ही सच्चा धर्म है। मृत पितरों के नाम पर श्राद्ध एवं तर्पण करना अनुचित एवं वेद-विरुद्ध काम है।
12. नदियों, पर्वतों या अन्य स्थानों को तीर्थ मानना वेद (धर्म) विरुद्ध है। सत्य का आचरण, इन्द्रियों का संयम, परोपकार, दया, माता-पिता की सेवा एवं सत्संग आदि सच्चे तीर्थ हैं, जिनसे जीवन तर जाता है।
13. मुक्ति से पुनरावृत्ति निश्चयात्मक तथ्य है।
14. देववाणी-संस्कृत, राष्ट्रभाषा-हिन्दी एवं पारस्परिक अभिवादन "नमस्ते जी" को मान्यता।
15. स्वराज (स्वतंत्रता) एवं सुराज का प्रथम उद्घोषक एवं राष्ट्रीयता तथा नैतिकता का पूर्ण समर्थक।
16. पर्व एवं संस्कार समस्त आर्य पर्व (रामनवमी, कृष्ण-जन्माष्टमी, दीपावली आदि) एवं वैदिक धर्म में कथित सोलह-संस्कारों को मान्यता। पर्व एवं संस्कार जीवन में पवित्रता एवं नवीनता के संदेशवाहक एवं संस्कृति-रक्षक हैं।
17. स्वर्ग-नरक : जहाँ सुख वहाँ स्वर्ग, जहाँ दु:ख वहाँ नरक, न कि कोई स्थान विशेष, यही वैदिक सिद्धान्त है जो पूर्णरूपेण वैचारिक व्यावहारिक व वैज्ञानिक है जो आज पूरा विश्व मानने लगा है।
18. जड़ की पूजा के स्थान पर प्राणियों की सेवा ही सच्ची पूजा

है। पूजा का वास्तविक अर्थ है सम्मान, सत्कार, सेवा। उदाहरणार्थ अतिथि-पूजा आदि।

19. राम, कृष्ण आदि महापुरुषों को योगी महापुरुष मानना-न कि ईश्वर या ईश्वर के अवतार के रूप में।

20. कर्म के फल में क्षमा नहीं ईश्वर शुभ कर्म का फल सुख व अशुभ कर्म का फल दु:ख देता है, क्षमा नहीं करता। यह सुनिश्चित वैदिक धारणा व सिद्धान्त है।

21. सारांश : आर्यसमाज तर्क संगत व उचित बात को, जो जानने व मानने योग्य है तथा सत्य सनातन व शाश्वत वैदिक सिद्धान्तों को मानता रहा है व मानता रहेगा।

आर्यसमाज, आपकी अपनी संस्था है, आर्यसमाज मानव का ही नहीं, प्राणिमात्र का हितकारी है। इसे समीप से देखिये, सदस्य बनिये व इसकी अमूल्य सेवाओं का लाभ लीजिए, यही मेरा निवेदन है।

वेद है जहाँ, सत्य है वहाँ।
सत्य है जहाँ, विजय है वहाँ।।
विद्या है जहाँ, प्रकाश है वहाँ।
प्रकाश है जहाँ, जीवन है वहाँ।।

आर्यसमाज महापुरुषों की दृष्टि में

1. आर्यसमाज मेरी धर्म की माता है - **लाला लाजपतराय**
2. आर्यसमाज नैतिक मूल्यों, शांतिवाद, शाकाहार और सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य पर आश्रित समाज-निर्माण का पृष्ठ पोषक है।
   - **थियोसोफिकल न्यूज एण्ड नोट्स, लन्दन, जून 1955**
3. आर्यसमाज ने शिक्षा और समाज सुधार, जनहित के लिए त्याग और बलिदान की दिशा में अग्रणी के रूप में कार्य किया है। - **सर सीताराम**
4. आर्यसमाज के आन्दोलन के साथ मेरी पूर्ण सहानुभूति है।
   - **मैक्समूलर**
5. आर्यसमाज ने लड़कों और लड़कियों की शिक्षा के प्रसार, स्त्रियों की दशा के सुधार और दलितोद्धार का बहुत अच्छा कार्य किया है। - **पं. जवाहर लाल नेहरू**
6. संगठित कार्य, दृढ़ता और उत्साह का समन्वयात्मकता की दृष्टि से आर्यसमाज की क्षमता की बराबरी कोई समाज नहीं कर सकता। - **नेताजी सुभाषचन्द्र बोस**
7. जहाँ-जहाँ आर्यसमाज है, वहाँ-वहाँ जीवन-ज्योति है।
   - **महात्मा गांधी**
8. आर्य-समाज ने हिन्दु समाज को भले आदमी के रहने योग्य बनाया। - **सर राजगोपालाचारी**
9. भारत के राष्ट्रीय जीवन में यह बात अत्यन्त महत्व की है कि आर्यसमाज धार्मिक शक्ति के रूप में समाज सुधार के लिए कार्य कर रहा है।

– **मार्डन रिव्यू के यशस्वी सम्पादक रामानन्द चटर्जी**

10. संस्कृति के प्रति उत्साह उत्पन्न करने में आर्यसमाज ने अद्‌भुत भूमिका निभाई। – **अमरनाथ झा**

11. आर्यसमाज 19वीं सदी का महानतम धार्मिक आन्दोलन है। – **बलन्ट 1911 की जनगणना रिपोर्ट**

12. आर्यसमाज वर्तमान हिन्दू–विचारधारा का अत्यन्त महत्वपूर्ण और मनोरंजक अध्याय है।

– **सर हेनरी काटन न्यू इण्डिया पुस्तक से**

13. आर्यसमाज ने केवल हिन्दू से मुसलमान बनने वालों को ही वापस नहीं लिया अपितु जन्म से मुस्लिम और ईसाइयों के भी आर्यधर्म में लेकर मूल को ब्याज समेत लेने का शानदार काम किया है। – **सरदार वल्लभ भाई पटेल**

14. आर्यसमाज भाग रहा है तो हिन्दू–समाज चल रहा है, आर्यसमाज चल रहा है तो हिन्दू–समाज खड़ा है, आर्यसमाज बैठा है तो हिन्दू–समाज लेटा है और यदि आर्यसमाज लेट गया तो हिन्दू समाज मर जायेगा।

– **पं. मदनमोहन मालवीय**

15. मैं उस प्रचण्ड अग्नि को देख रहा हूँ जो संसार की समस्त बुराईयों को जलाती हुई आगेंं बढ़ रही है वह आर्यसमाज रूपी अग्नि जो भारत में दयानन्द के हृदय से निकली और विश्व में फैल रही है। – **अमेरिकन पादरी एन्ड्रयू जैक्सन**

आध्यात्मिक उन्नति में सफलता के लिए ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण बातें

1. आध्यात्मिक उन्नति में आगे बढ़ने के लिए साधक को अपने शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य, भोजन, रहन-सहन, दिनचर्या, योगासन, प्राणायाम व उपासना पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है।
2. सबसे ऊपर की मंजिल से गिरा हुआ इन्सान बच सकता है, परन्तु जो निगाह से गिर जाए, उसकी सामाजिक मृत्यु तय है।
3. संसार में दिमाग एक ऐसी मशीन है जो चलाने से घिसती नहीं, बल्कि बढ़ती है। अतः मस्तिष्क से अधिक से अधिक कार्य लें।
4. अधिक सज्जनता, नेकी, भलाई, शिष्टता नाम तो देती है पर बाकी सब कुछ छीन लेती है।
5. एक धर्म के सिवाय ऐसी कोई चीज संसार में है ही नहीं, जो सदा हमारे साथ रहे और हम सदा उसके साथ रहें।
6. करना चाहते हो तो मानव मात्र की सेवा करो, जानना चाहते हो तो स्वयं को जानो "मैं कौन हूँ", मानना चाहते हो तो केवल निराकार ईश्वर को ही मानो और उसी की उपासना करो।
7. सांसारिक भोगों का सुख आरम्भ में तो अच्छा दीखता है, पर परिणाम में वह विष के समान सर्वथा हानिकारक होता है।
8. सांसारिक पदार्थों को लेकर जो अपने आपको बड़ा मानता है, उसको लौकिक पदार्थ धीरे-धीरे महत्वहीन, दुःखी और दुर्भाग्यशाली बना देते हैं।
9. ईश्वर प्राप्ति के लिए हुई व्याकुलता, बेचैनी और समस्त

सांसारिक इच्छाओं का त्याग, आत्मा को श्रेय मार्ग पर लगा देती है।

10. दूसरों का गुण ही देखें, अवगुण कम देखें। यदि किसी व्यक्ति के अधिकतर गुण–परिवार, समाज और राष्ट्र के हित में है तो उसके अवगुणों की उपेक्षा और अवहलेना कर दीजिए।

11. किसी को धर्म व ईश्वर के मार्ग में लगाना परम सेवा है। लाख आदमियों की भौतिक सेवा की अपेक्षा, वैदिक ज्ञान–दान द्वारा, मानव मात्र का मार्गदर्शन करना सर्वश्रेष्ठ कार्य है।

12. आत्मा को, सृष्टिकर्ता ईश्वर की भक्ति में और नाशवान व अनित्य शरीर को संसार के उपकार में यथाशक्ति लगा देना चाहिए।

13. अपनी सुख–सुविधाओं को ईश्वर की दया मानकर उन्हें समाज को ब्याज समेत लौटानी चाहिए।

14. वर्तमान परिस्थिति–अनुकूल अथवा प्रतिकूल के सदुरुपयोग को ही पुरुषार्थ और कर्त्तव्य कहते हैं।

15. चार बातों को सदैव याद रखो–बूढ़ों का आदर करना, छोटों की रक्षा और उनका मार्गदर्शन करना, केवल बुद्धिमान, सदाचारी और निःस्वार्थी से सलाह लेना और अज्ञानी व अहंकारी के साथ कभी भी तर्क–वितर्क न करना।

16. चार अवस्थाओं में मनुष्य की बुद्धि कुबुद्धि बन सकती है, इसलिए इनमें सावधान रहना चाहिए–जवानी, अत्यधिक धन, पूर्ण अधिकार की शक्ति और अविवेक।

18. सदैव ईश्वर की कर्म फल व्यवस्था पर विश्वास रखें। यह हमें आत्मसुधार के लिए प्रेरित करता है।

19. ये धन व सुविधायें ईश्वर द्वारा, मुझे पूर्वजन्मों में किये गये कर्मों के अनुसार मिली हैं। त्यागपूर्वक भोग के लिए मिली

हैं। अतः धन का सदुपयोग कीजिए।

20. जीवन तभी कष्टमय होता है, जब हम वस्तुओं का चयन विकल्प (पसन्द) के आधार पर करते हैं-आवश्यकता के आधार पर नहीं। विकल्प त्याग दो, इच्छाऐं स्वयं सीमित हो जायेंगी।

21. जिनके हृदय में केवल धन का महत्व है, धन की प्रति आसक्ति है, वह जप व ध्यान साधना में कभी भी सफल नही हो सकता।

22. प्रत्येक मनुष्य को श्रेय मार्ग पर चलना ही पड़ेगा, चाहे आज चले या अनेक जन्मों के बाद, तो फिर मूल्यवान समय को नष्ट करके हम अपना अहित क्यों कर रहे हैं।

23. ऋषियों और महापुरुषों के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि है-उनके सिद्धान्तों के अनुसार अपना जीवन बनाना, न कि उनके चित्रों की पूजा करना। कारण कि उन्हें सिद्धांत जितने प्रिय होते हैं, उतने अपने प्राण प्रिय नहीं होते।

25. निराकार ईश्वर की उपासना ही सर्वश्रेष्ठ पूजा है, चारों वेदों में ईश्वर का यही सन्देश है और उसके उपकारों को भूल जाना और उसकी आज्ञाओं की अवहेलना करना, सबसे बड़ी कृतज्ञता है।

27. जीवन को आदर्श बनाने के लिए योग, प्राणायाम, स्वाध्याय व वैदिक सत्संग अनिवार्य है। इस विषय पर अपना आत्म निरीक्षण कीजिए।

28. यदि कोई हमारी इच्छा या अपेक्षा पूरी न करे- जानकर या अज्ञानतापूर्वक, विशेषकर अपने बच्चे, सम्बन्धी और मित्र तो हम निराश नहीं होना चाहिए। जीवन आनन्दमयी हो जायेगा।

29. संसार में कोई ऐसा मनुष्य नहीं है-गरीब, अमीर अज्ञानी या

विद्वान–जिसको उसके कर्मों का फल पाप या पुण्य के रूप में न मिलता हो, इस जन्म में या अगले जन्मों में।

30. महान् आदमी की महानता का पता इस बात से चलता है कि वह छोटे आदमी के मानव अधिकारों का कितना सम्मान करता है और प्रतिकूल परिस्थिति में कैसे प्रतिक्रिया करता है।

31. जो आदमी द्वेष या प्रतिशोध करता है (बदले की भावना को बनाये रखता है) उसका विनाश, अधोगति व पतन निश्चित है।

32. शिक्षा, गुण व संस्कार न हो तो रूप व्यर्थ है, उपयोग न आये तो धन व्यर्थ है। परोपकार न करने वाले का जीवन असंतोष और अर्थहीनता से भरा होता है।

35. विनम्रता और सदाचार न हो तो ज्ञान, शिक्षा और पांडित्य व्यर्थ है।

37. सांसारिक कामों में तो लाभ और हानि दोनों ही होते रहते हैं, पर ईश्वर की व्यवस्था का सम्मान और उसमें सहयोग करने से कभी निराशा नहीं होती है।

39. स्वाध्याय, परिश्रम और परोपकार–आध्यात्मिक उन्नति के प्रवेश द्वार हैं।

41. जिस तरह कीड़ा कपड़ों को कुतर डालता है, उसी तरह ईर्ष्या मनुष्य को।

42. धैर्य के सामने भयंकर संकट भी धुँए के बादलों की तरह उड़ जाते हैं।

43. मनुष्य की महत्ता उसके शरीर की सुन्दरता और अच्छे व महंगे कपड़ों से नहीं किन्तु उसकी भौतिक शिक्षा, आध्यात्मिक ज्ञान और आचरण से जानी जाती है।

आर्य समाज के नियम

1. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।
2. ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र, और सष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।
3. वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।
4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।
5. सब काम धर्मानुसार अर्थात सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।
6. संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।
7. सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए।
8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।
9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में ही अपनी उन्नति समझनी चाहिए।
10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

सन्दर्भित ग्रन्थों की सूची

1.	सम्पूर्ण वेदभाष्यम्	पं. हरिशरण सिद्धान्तालंकार
2.	कर्म ही बलवान	विशम्बर नाथ अरोड़ा
3.	ईश्वर से दूरी क्यों	प्रकाश आर्य
4.	दु:ख और दु:ख से मुक्ति	ओम प्रकाश गुप्त
5.	योग चिंतन–जप एवं ध्यान	मदन अनेजा
6.	प्रार्थना उपासना विधि	मदन अनेजा
7.	वैदिक सन्ध्या व यज्ञ विधि	मदन अनेजा
8.	वैदिक विचार संग्रह – 1, 2, 3	मदन अनेजा

लेखक परिचय

श्री मदन लाल अनेजा का जन्म एक गाँव में 10 मार्च 1952 को जिला रामपुर, उत्तर प्रदेश में हुआ। (शिक्षा : बी0 कॉम (पास), एल0एल0बी0, दिल्ली विश्वविद्यालय)। सुप्रीम कोर्ट ऑफ इण्डिया में 22 वर्ष सेवा करने के बाद संयुक्त रजिस्ट्रार के पद से वी0आर0 एस0 के अंतर्गत सेवानिवृत्त हुये।

वर्ष 1999 में पुनः राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग में संयुक्त रजिस्ट्रार (विधि) के पद पर 12 वर्ष 6 मास एवं सलाहकार (विधि) के पद पर 2 वर्ष 6 मास तक आयोग की सेवा की।

आपके द्वारा लिखित सभी 14 पुस्तकों के नाम (चित्र सहित) इस पुस्तक के मुख पृष्ठ के पीछे (पृष्ठ-2) पर दिये गये हैं। सभी पुस्तकें भारत व विदेशों में, पाठकों के बीच काफी लोकप्रिय हो रही हैं। आपकी पुस्तकों में समाज में फैली अनेक भ्रान्तियों के साथ-साथ ओ३म् जप, गायत्री मंत्र जप, प्राणायाम मन्त्र जप, अन्य वैदिक मन्त्र जप और ध्यान आदि विषयों पर सरल भाषा में पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। ओ३म जप, गायत्री मंत्र जप व ध्यान की अनेक प्रभावित विधियों का वर्णन भी किया गया हैं। उपरोक्त पुस्तकों को google drive से निःशुल्क डाउनलोड करके समस्त भारत व विदेशों में साधक-साधिकायें इनका स्वाध्याय कर रहे हैं, आध्यात्मिक लाभ ले रहे हैं। अपनी जीवन-चर्या को वेदानुसार चलाने में भी सफल हो रहे हैं।

आशा है, इस पुस्तक के द्वारा, सभी साधक ईश्वर स्तुति-प्रार्थना, उपासना जप व ध्यान सम्बन्धित शुद्ध ज्ञान प्राप्त करके व मन्त्रोच्चारण की अनेक व्यावहारिक (Practical) विधियों का अभ्यास करके ईश्वरीय आनन्द की प्राप्ति कर सकेंगे।

सी-79, तक्षशिला अपार्टमेन्ट,
प्लाट नं0-57, आई.पी. एक्सटेंशन,
दिल्ली-110092

विक्रान्त अनेजा (मंत्री)
मानव संस्कार फाउन्डेशन

क्या आप

1. सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान व निराकर ईश्वर से जुड़ना चाहते हैं?
2. अपने पंचकोश व क्रिया शक्ति (ज्ञानेन्द्रियाँ व कर्मेन्द्रियाँ) को बलिष्ठ बनाकर एक स्वस्थ आध्यात्मिक जीवन जीना चाहते है?
3. ब्रह्मज्ञान व आत्मज्ञान के बारे में जानना चाहते है?
4. उपासना सम्बन्धित आध्यात्मिक उपदेश और पूजा का शुद्ध स्वरूप जानना चाहते हैं?
5. जप व ध्यान सम्बन्धित भ्रान्तियों का निवारण चाहते हैं?
6. जप व ध्यान की वैदिक व सरल व्यावहारिक विधियों को जानना चाहते हैं?
7. वैदिक मन्त्रों को बोलने में असमर्थ होने के कारण, वैदिक विधि से ही जप व ध्यान करना चाहते हैं?
8. अध्यात्म से सफलता और स्वास्थ्य हेतु शारीरिक शुद्धि के उपाय जानना चाहते हैं?
9. ऋषि पतंजलि के अष्टांग योग को सरल हिन्दी भाषा में समझकर इसका पालन करना चाहते हैं?
10. उपासना में प्राण साधना का लाभ लेकर जप व ध्यान में निपुण व योग्य बनना चाहते हैं?

बन्धुओं!

निराकार परमात्मा की भक्ति वैदिक विधियों द्वारा करना बहुत सरल हैं।

– मदन अनेजा